बुन्देली शब्द भण्डार

झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई- चरित में प्रयुक्त बुन्देली शब्द, वर्गीकरण, विश्लेषण

(बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी की पी. एच. डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध)

१९९३
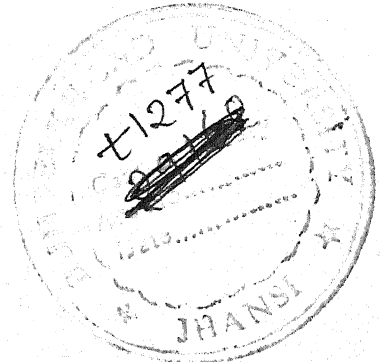
पर्यवेक्षक

डॉ० दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव

हिन्दी विभाग

अनुसंधित्सु

श्रीमती सीमा द्विवेदी

शोधकेन्द्र

दयानन्द वैदिक महाविद्यालय, उरई (उ. प्र.) २८५००१

:: प्रमाण – पत्र ::

प्रमाणित किया जाता है कि श्रीमती सीमा द्विवेदी ने प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध मेरे निर्देशन में लगभग दो वर्षों तक अनवरत रूप से अनुसंधान कर, तैयार किया है । उन्हें स्थानीय होने से मेरे साथ विचार-विमर्श करने तथा समस्याओं के समाधान के लिए प्रायः प्रतिदिन सुअवसर प्राप्त होता रहा है और वे, इस प्रकार, इस गवेषणात्मक कार्य के सम्पादनार्थ मेरे साथ विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित (अपेक्षित) अवधि से भी अधिक समय तक उपस्थित रही हैं ।

प्रस्तुत गवेषणात्मक ग्रन्थ उनका श्लाघनीय कृतित्व है । उनका यह मौलिक कार्य हिन्दी (विशेषकर शब्द-शास्त्र) शोध एवं समीक्षा आयामों का विस्तार तथा अभिनव या अज्ञात क्षितिजों का उद्घाटक सिद्ध हो सकता है ।

परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि उन्हें उनकी सारस्वत साधना के अनुरूप सफलता प्राप्त हो और भविष्य में उनके इस कार्य की रश्मियों से हिन्दी व्याकरण के कुछ गह्वर आलोकित हों ।

मैं उनके उज्ज्वल भविष्य की पुनः कामना करता हूँ ।

——xxx——

दुर्गाप्रसाद श्रीवास्तव

(दुर्गा प्रसाद श्रीवास्तव)
पर्यवेक्षक, (हिन्दी विभाग)
दयानन्द वैदिक कालेज, उरई .

:: प्रस्ताविकी : आभार ::

बुन्देली की शब्द-सम्पदा अपार है । कई मनीषियों ने अपने अथक परिश्रम से उसे समेटने का प्रयास किया है किन्तु उसका लिखित रूप में पूरा संगृहीत हो पाना अत्यन्त दुस्तर है । पं0 द्वारिकेश मिश्र ने अपने तीन काव्य {लाल हरदौल, बुंदेलिन, लक्ष्मीबाई-चरित} लिखकर बुन्देली शब्द-सम्पदा के संकलन और प्रयोग की दृष्टि से महत्वपूर्ण काम किया है । उन्होंने जो शब्द-सम्पदा बटोरी है उसका पूरा आकलन मेरे इस शोध-प्रबन्ध में नहीं हो सका है । भाषा और शब्द की कई दिशाएँ होती हैं । एक ही अध्ययन में सभी दिशाओं को समेट लेना बहुत कठिन होता है । फिर भी व्याकरण और भाषा-विज्ञान की दृष्टि से मैंने "लक्ष्मीबाई-चरित" में प्रयुक्त शब्दावली का अनुशीलन करने का प्रयास किया है ।

इस कार्य की प्रेरणा मुझे द्वारिकेश जी से ही मिली थी । यद्यपि आज वे नहीं हैं किन्तु उनके द्वारा दिया गया आशीर्वाद आज इस रूप में फलित हो रहा है । पहले मैंने यही कार्य बाबू वृन्दावन लाल वर्मा के उपन्यासों को लेकर करना चाहा था किन्तु उनके उपन्यासों की मूल भाषा बुन्देली न होकर खड़ी बोली का साहित्यिक रूप है इसलिए मेरे अध्ययन के लिए अपेक्षित शब्द-सम्पदा वहाँ विद्यमान न थी । इस दृष्टि से मुझे पं0 द्वारिकेश मिश्र का "लक्ष्मीबाई-चरित" काव्य महत्वपूर्ण लगा ।

मैंने अपने इस कार्य को छह अध्यायों में विभक्त किया है । प्रारम्भ में विषय प्रवेश है जिसमें कवि के साहित्यिक और पारिवारिक जीवन पर प्रकाश डालते हुए उनके द्वारा रचित काव्यों का संक्षिप्त परिचय देकर लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त बुन्देली के सम्बन्ध में कवि का मत दिया गया है ।

प्रथम अध्याय में शब्द-भण्डार का परिचय देते हुए बुन्देली पर अब तक किये गये कार्य का विवरण है । इसी में लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त शब्द-सम्पदा का ऐतिहासिक आधार पर तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी वर्गों में बाँटकर उसकी यथासम्भव पूरी तालिका देने का प्रयास किया गया है ।

द्वितीय अध्याय इस शोध प्रबन्ध का सबसे बड़ा अध्याय है । इसमें शब्दों को विकारी, अविकारी व्याकरणिक कोटियों में बाँटकर उनके भेदोपभेदों का उल्लेख करते हुए लक्ष्मीबाई-चरित में रचना की दृष्टि से वे किन-किन रूपों में उपलब्ध होते

हैं इसका विश्लेषण किया गया है ।

तृतीय अध्याय में शब्द-सौन्दर्य का अध्ययन है । इसमें शब्दों के सौन्दर्य का प्रयोग, आवृत्ति, शब्द प्रयोग की बारंबारता के पीछे कवि की विशेष शब्द दृष्टि, ध्वनिग्रामों, संध्वनियों, व्यंजन ध्वनिग्रामों की आवृत्तियों का विस्तार से विवेचन कर द्विरुक्ति, पर्याय और विपरीतार्थक शब्दों पर विचार किया गया है । शब्द-सौन्दर्य की दृष्टि से मुहावरों का अपना महत्व है । इस अध्याय में लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त मुहावरों का शब्द-रचना की दृष्ट से अध्ययन किया गया है ।

चतुर्थ अध्याय का सम्बन्ध शब्दों के सांस्कृतिक अध्ययन से है । इसमें समाज सन्दर्भीय अध्ययन के अन्तर्गत संस्कार, पर्व-त्यौहार, उत्सव, पूजन-अर्चन, उपासना, रिश्ते सम्बन्धी शब्दावली, जाति तथा वर्ग, कला, साहित्य, संगीत, मनोरंजन, वाणिज्य, अर्थ, कृषि, धर्म, पकवान, वनस्पति, जल, प्रकृति, ज्योतिष, युद्ध, भवन सम्बन्धी शब्दावली पर विचार किया गया है ।

पाँचवे अध्याय में व्यक्तित्व वाची, व्यक्तिगत गुण-अवगुण, शिष्टाचार, अभिवादन, अंग सम्बन्धी, मानसिक अवस्था तथा आयु सूचक शब्दावली का अनुशीलन किया गया है ।

इस प्रकार पूरे अध्ययन को व्याकरण, भाषा-विज्ञान , समाज विज्ञान और संस्कृति की दृष्टि से लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त बुन्देली शब्द-सम्पदा के विश्लेषण तक सीमित रखा गया है ।

इस कार्य को पूरा करने में मुझे कई विद्वानों के ग्रन्थों और उनके मूल अध्ययन से सहायता लेनी पड़ी है । इसलिए मैं उन सबके प्रति आभार व्यक्त करती हूँ । इस कार्य को पूरा कराने में मेरी बहन शची और रेनू ने बहुत सहायता की है इसलिए उन्हें भी मेरा बहुत स्नेहिल आभार । मेरे बड़े भाई श्री अरविन्द द्विवेदी ने समय-समय पर मेरी बहुत सहायता की है इसलिए उनको नमन । मेरे श्रद्धेय पिता डॉ० राम शंकर द्विवेदी के ऋण से मैं उऋण नहीं हो सकती । उन्होंने मेरे लिए अनेक पुस्तकें जुटाईं और इस काम को मुझ से करा लिया । मैं अपनी माँ की भी बहुत आभारी हूँ ।

अपने श्वसुर पूज्य पं० रमेश चन्द्र जी दुबे और अपनी सासु जी की भी मैं आभारी हूँ अगर उन्होंने गृहस्थी की झंझटों से मुझे मुक्त कर काम करने की सुविधा

न दी होती तो मैं इसे कभी पूरा न कर पाती । उनकोप्रणाम श्रद्धा पूर्वक ।

अन्त में मैं अपने निर्देशक डॉ0 दुर्गा प्रसाद श्रीवास्तव की विशेष आभारी हूँ । इन्होंने शोध-सम्बन्धी गुत्थियों को सुलझाने में मेरी बड़ी मदद की है । उनका मार्ग दर्शन अगर न मिलता तो मैं इस काम को पूरा कभी न कर सकती । उन्हें पुनः आभार ।

सीमा द्विवेदी

दिसम्बर, 1993

(सीमा द्विवेदी)

174, पाठकपुरा,

उरई-285001

xxxxxxxxxxxxxxxx
xxxxxxxxxxxxx
xxxxxxxxxxx
xxxxxxxxx
xxxxxxx
xxxxx
xxx
x

अनुक्रम

: विभिन्न ध्वनि-गुच्छों से बने व्यंजन समूह

0 समस्त पद -

: तत्पुरुष समास

: बहुव्रीहि

0 सन्धि-

: स्वर सन्धि

: व्यंजन संधि

0 रूप-विचार - शब्द रचना

: उपसर्ग

: शब्द-रचना और प्रत्यय

0 संज्ञा-

: संज्ञा के प्रकार- व्यक्ति, जाति, भाव

0 लिंग

0 वचन

0 कारक रूप रचना

0 सर्वनाम

0 विशेषण

0 सर्वनामिक विशेषण

0 क्रिया

0 काल रचना

0 वाक्य रचना

: सरल वाक्य, प्रश्नवाचक, निषेधात्मक, विधि/आज्ञा/प्रेरणा/ प्रार्थना सूचक, निवेदन सूचक, छोटे-छोटे वाक्य, मिश्रित वाक्य

: कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य, भाव वाच्य ।

0 क्रिया- विशेषण/अव्यय

0 कारक : कारक का अर्थ, प्रकार

(4) <u>तृतीय अध्याय-</u>

<u>शब्द सौन्दर्य:-</u>

0 शब्द-रुचि-आवृत्तिपरक अध्ययन

0 द्विरुक्ति : एक ही शब्द की द्विरुक्ति,

: सार्थक-सार्थक शब्द की द्विरुक्ति

: सार्थक-निरर्थक शब्द की द्विरुक्ति

0 पर्याय तथा विपरीतार्थक शब्द-प्रयोग

0 मुहावरों का शब्द-सौन्दर्य

{5} चतुर्थ अध्याय:-

सांस्कृतिक अध्ययन :-

0 समाज सन्दर्भीय अनुशीलन

{क} संस्कार-सम्बन्धी शब्द

{ख} विवाह-संस्कार सम्बन्धी शब्दावली

{ग} अभिषेक और गोदी संस्कार सम्बन्धी शब्दावली

{घ} मृत्यु-संस्कार सम्बन्धी शब्दावली

{ङ.} सामाजिक पर्व, त्योहार, उत्सव सम्बन्धी शब्दावली

{च} साझेदारी सम्बन्धी शब्दावली

{छ} पूजन, अर्चन तथा उपासना सम्बन्धी शब्दावली

{ज} रिश्ते सम्बन्धी शब्दावली

{झ} जाति तथा वर्ग सम्बन्धी शब्दावली

{ट} कला, साहित्य, संगीत, मनोरंजन सम्बन्धी शब्दावली

{ठ} वाणिज्य, अर्थ, कृषि सम्बन्धी शब्दावली

{ड} विभिन्न धर्म सम्बन्धी शब्दावली

{ढ} पकवान सम्बन्धी शब्दावली

{य} भूगोलपरक शब्दावली

{र} ज्योतिष, नक्षत्र सम्बन्धी शब्दावली

{6} पंचम अध्याय:-

0 वस्त्र, वेश-भूषा सम्बन्धी शब्द

0 अंग सम्बन्धी शब्दावली

0 व्यक्तिगत गुण, अवगुण, स्वभाव, प्रवृत्ति सम्बन्धी शब्दावली

0 सौन्दर्य तथा स्वभाव सूचक शब्दावली

0 आचार, व्यवहार सम्बन्धी शब्दावली

संक्षिप्त-चिन्ह

अंक:- शब्दों के आगे दी गई संख्याएँ लक्ष्मीबाई-चरित की पृष्ठ संख्या सूचक हैं ।

सं0 : संस्कृत

हिं0 : हिन्दी

बुं0 : बुन्देली

प्रा0 : प्राकृत

अव0 : अवहट्ठ

अप : अपभ्रंश

वही : ऊपर उद्धृत पुस्तक या लेखक

-- : विकास की द्योतक

विषय प्रवेश :

बुन्देली शब्द-भण्डार की दृष्टि से अभी तक बुन्देली-क्षेत्र में प्रचलित बुन्देली शब्दों का भाषा-वैज्ञानिक या भाषाशास्त्र की दृष्टि से कार्य हुआ है। इस सन्दर्भ में जिनका अवदान उल्लेखनीय है उनके नाम हैं सर जार्ज ग्रियर्सन (भारत का भाषा-सर्वेक्षण (भाग-9) पश्चिमी हिन्दी), पं० गौरी शंकर द्विवेदी "शंकर", श्री कृष्णानन्द गुप्त, श्री शिवसहाय चतुर्वेदी, डॉ० श्याम सुन्दर बादल, डॉ० गणेशी लाल बुधौलिया, डॉ० रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल, डॉ० महेश प्रसाद जायसवाल, डॉ० लता दुबे, डॉ० पवन कुमार जैन, लक्ष्मीचन्द्र सुना, हरप्रसाद शर्मा, कस्तूर चन्द्र जैन, छविनाथ तिवारी, पी.सी. श्रीवास्तव, डॉ० कामिनी, डॉ० सीता किशोर खरे तथा डॉ० कृष्णलाल"हंस"। डॉ० हंस, डॉ० रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल, डॉ० महेश प्रसाद जायसवाल तथा डॉ० पी.सी. श्रीवास्तव का काम विशेष उल्लेखनीय है। डॉ० हंस ने बुन्देली के विविध क्षेत्रीय रूपों और उसकी शब्द-सम्पदा पर अच्छा काम किया है। डॉ० कामिनी का स्थान नामों की दृष्टि से उल्लेखनीय ह काम है। और बुन्देली की कृषि उद्योग सम्बन्धी शब्दावली की दृष्टि से डॉ० हर गोविन्द सिंह का।

बुन्देली शब्द-सम्पदा के अध्ययन की दृष्टि से दो स्रोतों से आधारभूत सामग्री का चुनाव किया गया है। एक बुन्देली क्षेत्र में प्रचलित शब्दावली को, दूसरे ठेठ बुन्देली में लिखी गई कृतियों में प्रयुक्त बुन्देली को। ग्रियर्सन ने एक ही लोक कथा का बुन्देली के विभिन्न क्षेत्रीय रूपों में अनुवाद कराकर उसकी विशेषताओं का निरूपण किया था और कुछ विद्वानों ने बुन्देली के नर्मदा से यमुना, चम्बल और टौंस के बीच में प्रचलित लोक-गीतों, लोक-कथाओं, लोकोक्तियों, मुहावरों, बुझौवल, टहूकों आदि को आधार बनाकर अपना कार्य किया है। मैंने अपने अध्ययन का आधार पं० द्वारिकेश मिश्र कृत "झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई चरित" को बनाया है। "बुन्देली" का उद्भव और विकास हिन्दी के साथ-साथ हुआ है। किंतु ऐतिहासिक तथा अन्य कारणों से साहित्य की भाषा "ब्रज" बनी रहने के कारण बुन्देली में प्रभूत मात्रा में साहित्य-रचना परिलक्षित नहीं होती है। यद्यपि मध्यकाल में बुन्देल खण्ड के विस्तृत भूभाग में रची गई कृतियों में बुन्देली की एक पुष्ट परम्परा मिलती है - भले ही वह बिखरे रूप में हो।

डॉ० कृष्ण लाल"हंस" ने अपने शोध प्रबन्ध में विस्तार से बुन्देली की परम्परा खोजने का प्रयास किया है। उन्होंने राउल बेल, सन्देश रासक, प्राकृत

पैंगलम छिताई चरित आदि से लेकर बुन्देल खण्ड के राज-दरबारों के आश्रित कवियों की कृतियों और बुन्देली में विद्यमान रासो-परम्परा का अनुशीलन कर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि बुन्देली में लगातार काव्य-रचना के उदाहरण नहीं मिलते हैं वरन् बुन्देलखण्ड की देसी रियासतों के आपसी पत्र-व्यवहार, सनद, रुक्के, ताम्रपत्र और शिलालेखों के आधार पर यह भी सिद्ध किया जा सकता है कि चार सौ वर्षों तक बुन्देली राजभाषा भी रही है । इसके पुष्ट प्रमाण "मराठा राज्य-सम्बन्धी अभिलेख[1] §1707-1719ई0§ "पुणे दफतरांतील ऐतिहासिक कागद पत्रे ग्रंथमाला हिन्दी सारणें[2], "मालवा के महान विद्रोह कालीन अभिलेख[3], "18वीं शती के हिन्दी पत्र§मराठी शासकों से संबंधित 18वीं शती के हिन्दी पत्रों का भाषा-शास्त्रीय एवं ऐतिहासिक अध्ययन[4] । तथा "ऐतिहासिक प्रमाणावली और छत्रसाल" ग्रन्थों में संकलित तत्कालीन पत्र-व्यवहार से मिलते हैं । महाराज कुमार डॉ0 रघुबीर सिंह ने लिखा है- " यह बात तो अब सर्वथा सुमान्य हो चुकी है कि ईसा की 17वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक सशक्त अभिव्यंजक हिन्दी गद्य का प्रादुर्भाव ही नहीं हो चुका था, परन्तु हिन्दी और उससे सम्बन्धित भाषाओं, बोलियों आदि के सबही प्रदेशों में उसे मुक्त रूपेण काम में लिया जाता था । हजारों मील लम्बे-चौड़े इस विस्तृत हिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्र में बोली और विशेष प्रयोगों के प्रभावों के फलस्वरूप विभिन्न प्रदेशों के हिन्दी गद्य में शैली के अनेक प्रादेशिक भेद-प्रभेद अवश्य मिलते हैं, परन्तु उससे हिन्दी गद्य की सार्वभौमिक व्यापकता और अन्तप्रदेशिक महत्ता पर कोई दुष्प्रभाव कदापि नहीं पड़ा । ऐसे सब ही हिन्दी आदि भाषा-भाषी प्रदेशों में स्थित राजपूतों अथवा अन्य हिन्दू राज्यों का तो सारा ही पत्र-व्यवहार, कामकाज, आदि पूर्णतया हिन्दी में ही होता था[6] ।" उपर्युक्त सामग्री के आधार पर बुन्देली गद्य की पुष्ट परम्परा खोजी जा सकती है । मेरे अनुसंधान की सीमा पं0 द्वारिकेश मिश्र की बुन्देली कृति "झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई चरित" तक सीमित है । प्रस्तुत कार्य में "लक्ष्मी बाई चरित" में प्रयुक्त बुन्देली के शब्दों का व्याकरणिक, भाषाविज्ञान तथा सांस्कृतिक दृष्टि से संकलन, वर्गीकरण और विश्लेषण किया गया है । कार्य की सीमा तथा उसकी गुणवत्ता को गहराई देने की दृष्टि से पूरी शब्दावली "§लक्ष्मी बाई चरित" से संकलित की गई है । संकलन§में कार्ड पद्धति को व्यापक रूप से अपनाया गया है ।

कवि तथा कृति का परिचय :-

पं0 द्वारिकेश मिश्र ठेठ बुन्देली के अप्रतिम रचनाकार थे । इनका जन्म 14 अक्टूबर, 1922 ई0 को फुटेरा-पिछोर §पूर्व ओरछा राज्य अब झाँसी जिला§ में एक गरीब ब्राहम्ण परिवार में हुआ था । आपकी माता का नाम राधाबाई तथा पिता का नाम पं0 तुलसीदास मिश्र था । आपको आचार्य महाकवि केशव के वंशज होने का गौरव प्राप्त था । आप उनकी दसवीं पीढ़ी में थे । विपरीत परिस्थितियों के कारण आपकी विद्यालयीन शिक्षा मात्र कक्षा चार तक हो पाई थी । आपका गला अत्यन्त मधुर था । जीविकोपार्जन के लिए आप अपने दरिद्र पिता के सान्निध्य में मथुरा की गलियों में गारियों और कीर्तनों की किताबें हारमोनियम पर गा-गाकर बेचते थे । वहीं एक दिन प्रातः भ्रमण के समय विख्यात साहित्यकार प्रभुदयाल मीतल की दृष्टि आप पर पड़ी और उनकी प्रेरणा से आप उनके प्रेस में काम करने लगे । साहित्य के संस्कार आप पर वहीं पड़े । मथुरा में हुआ प्रेस से सम्पर्क उनका आजीवन बना रहा । द्वितीय विश्व-युद्ध की विभीषिका के बाद 1945 में आप झाँसी चले आये और यहाँ अपने चाचा "श्रवणेश" जी के सान्निध्य में रहने लगे । कवीन्द्र "श्रवणेश" जी का उन पर क्या प्रभाव पड़ा इस सन्दर्भ में उन्होंने लिखा है : "मेरे जनक माता-पिता तो निरक्षर किसान थे, मुझे जो कुछ भी अक्षर-ज्ञान मिला, वह पितृ तुल्य पूजनीय चाचाजी पण्डित श्रवण प्रसाद मिश्र "श्रवणेश" से मिला । वे कवि थे सो संसर्ग-गुण स्वरूप मुझमें भी कविकर्म के जीवाणु पनपे । उस पुण्यश्लोकी आत्मा को, गीले नयनों अपना क्षुद्र नमन अर्पित करता हूँ ।"[6] जन्म से प्रतिभाशाली और प्रत्युत्पन्नमति द्वारिकेश जी की कवित्व शक्ति झाँसी में उपयुक्त परिवेश पाकर दिन-दूनी पनपने लगी । उनकी लगन, व्युत्पत्ति और अभ्यास ने उसे खूब पुष्ट किया । स्वाध्याय के बल पर उन्होंने संस्कृत, हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी पर अच्छा अधिकार प्राप्त कर लिया ।

सन् 1945 ई0 के श्रावण मास में ये अपनी ससुराल समथर गये थे । वहाँ के राज दरबार में हुए एक कवि सम्मेलन में इन्हें कविता पढ़ने का सौभाग्य मिला । कविता तत्कालीन महाराजा राधाचरण सिंह जू को इतनी भायी कि इन्हें 101 रुपया देकर सम्मानित किया गया । इस घटना को द्वारिकेश जी भावुक हृदय से स्मरण किया करते थे । कविता थी- " मानव ने मानव जीवन का फिर से सरस हास देखा है।" द्वारिकेश जी को प्रथम पुरस्कार मिलने पर राजा के अन्य मुँह

लगे स्थानीय कवियों ने भरा और कवि की परीक्षा लेने को उकसाया । इस पर द्वारिकेश जी को राज महल के एक कमरे में बन्द कर 12 घन्टे का समय देकर एक दूसरी कविता लिखकर परीक्षा देने की राजाज्ञा दी गई । सौभाग्य से द्वारिकेश जी उस परीक्षा में भी ससम्मान उत्तीर्ण हुए । उस समय उन्होंने "ग्राम कन्या" नामक एक लम्बी रचना लिखकर सुनाई जिसने सभी को भाव-विहल कर दिया । और महाराजा ने 501 रुपया देकर द्वारिकेश जी को विशेष सम्मानित किया । "ग्राम कन्या" की मार्मिक पंक्तियाँ बिदाई के दृश्य से थीं--

बाबुल को घर छोड़त, अँसुआ चौमासे से बरसें ।
बेर-बेर के आँखन के हीरा, द्वारो हेरन तरसें ।।

इसी "ग्राम कन्या" के कुछ छन्द उस समय की प्रसिद्ध पत्रिका "मधुकर" में छपे थे । इसी कविता के माध्यम से वे ओरछा नरेश वीर सिंह जू देव द्वितीय के सम्पर्क में आये और उन्होंने "ग्राम कन्या" काव्य रचना को एक महाकाव्य का रूप देने को प्रेरित किया और उसके पूर्ण होने पर पाँच हजार एक रुपया पुरस्कार देने का बचन दिया । आगे चलकर यही रचना "बुन्देलिन" नाम से लिखी गई जिसके कुछ पृष्ठ प्रकाशित भी हुए थे ।

मथुरा में उन्होंने प्रेस का जो अनुभव प्राप्त किया था उसका उपयोग उन्होंने प्रेस लगाकर "प्रजामित्र" साप्ताहिक का एक दैनिक संस्करण निकाल कर किया । इस पत्र की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इसमें सारे समाचार ब्रज पद्य में दिये जाते थे । इस पत्र से जहाँ कवि की प्रतिभा का विकास हुआ वहीं उस पर ऋण का बोझ भी बढ़ने लगा । फलतः प्रेस बेंचकर पुनः नौकरी की शरण लेनी पड़ी । इसी समय वे उपन्यास सम्राट बाबू वृन्दावन लाल वर्मा के सम्पर्क में आये और उनके "स्वाधीन प्रेस" में एक प्रबंधक की हैसियत से काम करने लगे । वर्मा जी के सम्पर्क में उनकी प्रतिभा का विकास गद्य के क्षेत्र में हुआ । इसी समय उन्होंने झाँसी में खेले जाने वाले मंच के लिए 30 के लगभग नाटक लिखे । खोज करने पर शोध छात्रा को उनका कोई भी नाटक उपलब्ध नहीं हो सका । इस सन्दर्भ में एक व्यक्तिगत भेंट में पं० द्वारिकेश मिश्र ने कहा था कि स्थानीय मंच की तत्कालीन आवश्यकता के लिए नाटक लिखे गये बाद में उनकी खोज-खबर न लेने के कारण खो गये ।

इसी समय मिश्र जी भयंकर रूप से बीमार होकर पड़े । इस बीमारी

में उनका उपचार वैद्यनाथ के स्वामी पं0 रामनारायण वैद्य ने किया । उनके उपकारों से द्वारिकेश जी इतने दब गये कि बाकी के बहुमूल्य वर्ष उन्होंने वैद्यनाथ के लिए प्रचारित साहित्य लिखकर बिताये । इसी समय उनकी संपादन क्षमता का चमत्कार विभिन्न अभिनंदन ग्रंथों के प्रकाशन में दिखाई दिया । इस समय उन्होंने पं0 रामनारायण वैद्य अभिनन्दन ग्रन्थ, डॉ0 भगवान दास माहौर अभिनंदन ग्रन्थ, त्रिविक्रम जी यादव अभिनन्दन ग्रन्थ, बालेन्दु अभिनन्दन ग्रन्थों का संपादन किया । यही नहीं शास्त्री जी के आग्रह पर उन्होंने विख्यात शब्दशास्त्री पं0 किशोरी दास बाजपेयी अभिनन्दन ग्रन्थ का सम्पादन कलकत्ते में छह माह रहकर किया । वैद्यनाथ प्राण्दा में काम करते समय द्वारिकेश जी ने अपने निजी प्रेस श्रीराम प्रेस की शुरुआत कर दी थी । श्रीराम प्रेस से जितनी पुस्तकों, अभिनन्दन ग्रन्थों का प्रकाशन हुआ है उन सबकी भूमिकाएँ तथा सम्पादकीय टिप्पणियाँ द्वारिकेश जी की ही लिखी हुई होती थीं । विभिन्न भाषा-शैलियों में लिखना द्वारिकेश जी के लिए सहज बात थी । इस प्रकार काव्य के साथ-साथ टकसाली गद्य लिखने की कला भी उनमें आ गई थी । उनकी भाषा सरल और शैली तथ्यपूर्ण और प्रवाहमयी होती थी । 1965 ई0 में जब वैद्य जी के द्वितीय पुत्र पं0 विश्वनाथ शर्मा ने भोपाल से "दैनिक मध्यदेश" निकाला तो उसके प्रधान सम्पादक द्वारिकेश जी ही बने और उसमें उन्होंने तीन वर्ष काम किया । उसके बाद उन्होंने झाँसी से अपना स्वतंत्र साप्ताहिक "बहुमत" भी निकाला जो सफलतापूर्वक चल रहा था किन्तु एक पारिवारिक दुर्घटना के कारण उसे बन्द कर देना पड़ा ।

द्वारिकेश जी ने कुछ कहानियाँ भी लिखी थीं जो 1954-55 के धर्मयुग में छपी थीं । उनका एक अधूरा उपन्यास "प्रवीण राय" 80 पृष्ठ तक छपा पड़ा है । उनके कई महत्वपूर्ण लेख विभिन्न अभिनन्दन ग्रन्थों और पुस्तकों की शोभा बढ़ा रहे हैं । काव्य प्रेरणा उन्हें झरने की तरह लिखने को बाध्य कर देती थी । अपनी मृत्यु §11 सितम्बर, 1992 ई0§ के 10 दिन पहले उन्होंने अपना "बुन्देलिन" महाकाव्य हस्तलिखित रूप में पूर्ण कर उसकी प्रेस कॉपी बनवा ली थी । अपने दूसरे काव्य "हरदौल-बुँदेला" की टंकित प्रति तैयार कर अपने कुछ मित्रों में वितरित की थी । स्फुट रूप में उनकी अनेक रचनाएँ उनकी डायरियों तथा कागज पत्रों में विद्यमान हैं । दुर्भाग्य से उनका सम्पूर्ण कृतित्व कभी प्रकाश में नहीं आकर पाया । उनकी एक मात्र प्रकाशित कृति "लक्ष्मीबाई चरित" है । उनका "बुन्देलिन" महाकाव्य तथा "हरदौल-बुँदेला" दोनों प्रकाशन की प्रतीक्षा में हैं ।

द्वारिकेश जी खड़ी बोली के भी सिद्ध रचनाकार थे किंतु बुन्देली में तो उन्हें महारत ही हासिल थी । ठेठ बुन्देली के शब्द-गुच्छ, कहावत, मुहावरे तथा वाक्य-खण्ड उनकी लेखनी से निर्झर प्रवाहवत झरते चले जाते थे । वे कहा करते थे- बुन्देली में लिखने के लिए मुझे सोचना नहीं पड़ता । पता नहीं कहाँ से पंक्तियों की पंक्तियाँ उतरती चली आती हैं ।

पं0 द्वारिकेश मिश्र ने अपनी तीनों कृतियों में झाँसी के आसपास प्रचलित बुन्देली की ठेठ शब्दावली का प्रयोग किया है । वे ठेठ बुन्देली के सिद्ध रचनाकार थे । खड़ी बोली का युग होते हुए भी उन्होंने बुन्देली को अपने भावों की अभिव्यक्ति का विषय क्यों बनाया इस सम्बन्ध में उन्होंने स्वयं लिखा है : "प्रायः ही यह बात मेरे मन को कुरेदती रही है कि हमने अब तक लोक-मानस से लिया ही लिया है, दिया कुछ नहीं, कुछ भी नहीं ।" . क्या आज के कविमनीषियों का यह दायित्व नहीं था कि वे लोकरागिनी को, आंचलिक लोकभाषा में, कुछ ऐसा नया देते जो लोक-मानस के कण्ठ में रच-बस कर पुराने गीतों का स्थान लेता और उसको नये युग-बोध से चमकाता । परन्तु आधुनिक कविगण लोकभाषा में लिखते कैसे ? स्थापित कवियों के लिए गँवारू भाषा में लिखना तो हीनता का प्रतीक बन गया । हमारे साहित्य-स्वामियों ने कविता में लोक-भाषा के शब्दों के प्रयोग तक को दूषण होने का फतवा दे दिया । कविता में लोकभाषा का कोई शब्द आया तो वह "ग्राम्य-दोष" माना गया । लोक-भाषा को साहित्य से परित्यक्त करने के इस दुराग्रह ने लोक को बहुत हानि पहुँचाई ।

"यह बड़े सन्तोष की बात है कि इधर कुछ वर्षों से हमारे आंचलिक कवियों में, लोकभाषा बुन्देली में कुछ न कुछ लिखने की प्रवृत्ति पनप रही है । और अन्त में एक व्यक्तिगत बात और कह दूँ : वंश-परम्परा में जन्म पाने के कारण मुझको हिन्दी काव्य के प्रथम आचार्य कवीन्द्र केशव दास के वंशज होने का गौरव प्राप्त है । संस्कृत-भाषा-भाषी परिवार में उपजे महाकवि केशवदास ने कुल-परम्परा से हटकर भाषा में काव्य-रचना की, मैंने उसी क्रम में भाषा से उतरकर लोकभाषा में लिखा । देवभाषा-भाषी-परिवार के केशवदास को भाषा में रचना करने पर, कदाचित कुछ पश्चाताप हुआ:--

भाषा बोल न जानहीं, जिनके कुल के दास ।
भाषा कवि भवे मन्दमति तिहि कुल केसवदास ।।

परन्तु मुझे भाषा से हटकर लोकभाषा में लिखने पर आत्म-गौरव की अनुभूति हो रही है । मैं बुन्देली लोकभाषा में रचना कर सका, इसको अपना अहोभाग्य मानता हूँ ।[7]" पं0 द्वारिकेश मिश्र ने टकसाली बुन्देली में लिखित अपने इन तीन काव्यों द्वारा 80 प्रतिशत ग्राम्य लोकजन के लिए उसकी अपनी बोली-बानी की भाषा में वह कुछ दिया है जो अब से 50-60 वर्ष बाद लुप्त हो जाता । उनकी काव्य अभिव्यक्ति का सहारा पाकर वह सदा के लिए सुरक्षित हो गया है ।

बुन्देलिन :

यह बुन्देली भाषा में लिखित महाकाव्य है । इसका प्रारम्भ समथर के जिस कवि सम्मेलन में हुआ था उसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है । यह अभी तक अप्रकाशित है । इसके नमूने के तौर पर 30 पृष्ठ मुद्रित हुए थे । बाद में लक्ष्मीबाई चरित तो प्रकाशित हो गया बुन्देलिन रह गई । 1945 ई0 की एक घटनावश यह पूरा महाकाव्य नष्ट हो गया था । बाद में कवि ने अपनी स्मृति के आधार पर इसे पुनः लिपिबद्ध किया । एक पत्र में द्वारिकेश जी ने लिखा है : "बन्धुवर, यदि कोई आपके पत्र का उत्तर चुकता एक साल, आठ महीना और बीस दिन बाद देवे, तो उसको आप क्या कहेंगे ? जो कुछ भी कहें, मन में ही कह लीजिए, क्योंकि वह प्रमादीनाथ शिरोमणि मैं ही हूँ ।

आपका 28-10-87 का एक कार्ड मुझे 30-10-87 को मिला था । तत्काल उत्तर लिखना चाहा, पर मन न हुआ । आज उत्तर लिख रहा हूँ, वह भी यह बताने के लिए कि निश्चय ही आपके उस कार्ड ने जादू कर दिया । आपके पत्र में लिखे प्रसंग के पुनः स्मरण ने मेरे 45 वर्ष पूर्व मरे हुए कवि को जाने कैसे पुनर्जीवित कर दिया । और लोकभाषा बुन्देली के, ढिकोलियों में पिसे, अपने महाकाव्य "बुँदेलिन" को मैंने फिर से लिखना आरम्भ कर दिया । अब तक इतना लिख चुका हूँ कि आपको बताने लायक मुँह हो गया । सो यह पत्र लिख रहा हूँ ।

350 पेजों के तेरह सर्गों का पूर्व खण्ड लगभग पूरा हो गया है । पहले तो हुलक उठी सो छापना भी प्रारम्भ कर दिया । फिर छपाना रोक दिया, मन में आया कि अभी माँजा जाय ।

अब मेरी एक समस्या है, उसमें आप मदद करें । मैं चाहता हूँ कि

"बुँदेलिन" को प्रकाशन के पूर्व कुछ ऐसे मर्मज्ञों से सुधरवा लूँ, जो लोकभाषा बुँदेली, बुँदेली लोक जीवन, विशेषकर ग्राम्य मानसिकता, और बुँदेली संस्कृति के जानकार हों । इस रचना में मेरा मूल उद्देश्य बुँदेली ग्राम्य जीवन और बुँदेलखण्ड के समग्र सांस्कृतिक परिवेश को रेखांकित करने के साथ, लोकभाषा बुँदेली के सामर्थ्य को उद्घाटित करना है । मैंने यह काव्य, ठेट बुँदेली में लिखने का प्रयास किया है । साहित्यिक या परिनिष्ठित बुँदेली में नहीं, बोलचाल में बुँदेली ग्राम्य-जन जिस ढंग से बोलते हैं, उन्हीं शब्दों को अंकित करने का मैंने उपक्रम किया है । एक गरीब किसान की बेटी की जीवन-कथा है, जन्म से मरण तक । गाँव के गरीबों का चित्रण है ।[8]"

उपर्युक्त पत्र से बुँदेलिन महाकाव्य के तीन पक्षों पर प्रकाश पड़ता है:-

§1§ इस महाकाव्य की विषय-वस्तु एक गरीब किसान की बेटी की जन्म से मरण तक की कथा है ।

§2§ इसका भाषा रूप ग्राम्य जनों द्वारा प्रयोग में आने वाली ठेठ बुँदेली है । इसमें साहित्यिक या परिनिष्ठित बुँदेली का प्रयोग नहीं किया गया है ।

§3§ एक गरीब किसान की बेटी की कथा के साथ-साथ इसमें कवि ने बुन्देलखण्ड के समग्र सांस्कृतिक परिवेश के साथ बुँदेली ग्राम्य-जीवन को भी रेखांकित किया है ।

हरदौल-बुँदेला :

लाला हरदौल के जीवन पर आधारित हरदौल-बुँदेला बुँदेली लोकभाषा का खण्डकाव्य है । लाला हरदौल बुन्देलखण्ड के लोक देवता हैं । वे अपूर्व शौर्य और त्याग की प्रतिमूर्ति थे । पहले हरदौल बुँदेला महाकाव्य बुँदेलिन का ही एक अंश था किन्तु उसके बढ़ जाने के कारण कवि को उसे अलग से लिखना पड़ा । द्वारिकेश जी ने लिखा है :- "मैंने बुँदेली काव्य की विधिवत् मँजाई आरम्भ की तो "बुँदेलिन" के बढ़ते मोटापे से मेरा मन स्वयं आतंकित हो उठा । इसके प्रथम सर्ग, "धन्न बुँदेलखण्ड की धरनीं", में प्रसंगवश कुछ अंतःकथाएँ आई हैं, जैसे अगस्त्य-बेतवा प्रसंग, बुँदेल खण्ड में मराठों का आगमन क्यों और कैसे, आदि इन्हें देखा तो लगा कि बुँदेलखण्ड के वर्णन में हरदौल की अन्तःकथा न होना उचित नहीं है, क्योंकि लाला हरदौल तो बुँदेली लोक मानस के आराध्य हैं ।

चला था मोटापा कम करने, हो गया उल्टाह। फिर मन मुक्ताया तो हरदौल को रचते-रचते 140 पेज बढ़ गये। निदान मैंने हरदौल को एक स्वतन्त्र खण्ड काव्य के रूप में संयोजित कर डाला है। "बुँदेलिन" के प्रथम सर्ग में संक्षिप्त उल्लेख मात्र रहने दिया है। काव्य खण्ड "हरदौल बुँदेला" के 140 पृष्ठ आज ही पूरे किये हैं। समापन तक कदाचित् 30-40 पेज और हो जायेंगे। हरदौल पर कदाचित् यह पहली ही रचना होगी जिसे पुस्तक कहा जा सके। यह वर्णन बढ़ इस चक्कर में गया कि, राजा जुझार सिंह ने किसी कनभरा के कहने पर हरदौल और अपनी रानी के चरित्र पर सन्देह किया और रानी के हाथों भोजन में हरदौल को जहर दिला दिया- इतनी बड़ी घटना का मात्र इतना-सा प्रचलित आधार मेरे गले नहीं उतरा। सो हरदौल-मरण प्रसंग की पूरी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, एरच घाट पर मुगलों से हरदौल का प्रचण्ड युद्ध, औरंगजेब की पराजय, चौरागढ़ का युद्ध और चौरागढ़ विजय, हरदौल की जननायकी लोकप्रियता, शाहजहाँ, औरंगजेब, ओड़छे के पहाड़ सिंह और किले के षड्यन्त्रों का परिणाम था- हरदौल को विषपान कराया जाना। यह हरदौल की वरेण्य महानता थी कि उन्होंने, यह जानते हुए भी कि भोजन में विष है, अपनी माता समान भौजी की चरित्र-रक्षा के लिए भोजन कर लिया और अमर हो गए। इस सबका चित्रांकन मैंने इस नये काव्य खण्ड में किया है। 1955-56 में, जब मुझे कहानियाँ लिखने का शौक था, तब भी मैंने, हरदौल पर एक बड़ी कहानी ऐतिहासिक तथ्यों का हवाला देते हुए लिखी थी, उन दिनों बम्बई के "धर्मयुग" में छपी थी, फिर और पत्रिकाओं में भी उद्धृत हुई थी। हरदौल जैसे प्रेरक चरित्र पर कोई काव्य पुस्तक मेरे देखने में नहीं आयी, इससे भी "हरदौल बुँदेला" काव्य-खण्ड लिखने के लिए मैं प्रेरित हुआ। हाँ, लोकमानस में हरदौल की आराध्य स्थिति, विषपान के कारण कम, मरणोपरान्त अपनी भाँजी के विवाह में भात देने की घटना के कारण अधिक है। अब, आज का विज्ञान-पीड़ित शिक्षित यह कैसे मानेगा। इसके लिए मैंने आचार्य केशवदास के तथाकथित "प्रेतयज्ञ" का आधार लिया है[9]।"

इस पत्र से "हरदौल-बुँदेला" खण्ड काव्य की कथावस्तु, उसके प्रेरणा स्रोत पर प्रकाश पड़ता है। इस काव्य की भाषा भी ठेठ ग्रामीण बुँदेली है।

लक्ष्मी बाई चरित :-

"झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई-चरित" बुँदेली में लिखा गया

महाकाव्य है । इसमें लक्ष्मीबाई के जन्म से लेकर परलोक गमन तक की कथा को कवि ने आधार बनाया है । प्रसंग रूप में राष्ट्रीय एकता और बुन्देलखण्ड का सांस्कृतिक परिचय भी इसमें आ गया है । ऐतिहासिक तथ्यों की छानबीन कर कवि ने रानी से सम्बन्धित कुछ नवीन तथ्य भी इसमें कवि ने दिये हैं । इसकी अभिव्यक्ति शैली जगनिक के आल्हा-खण्ड की आल्हा गायन परम्परा से ली गयी है ।

इस महाकाव्य की "पृष्ठभूमि" में पं० द्वारिकेश मिश्र ने चार बिन्दुओं को प्रेरक माना है-" इस काव्य की सृजन-साधना में मेरे सामने निम्नांकित चार उद्देश्य रहे हैं:- 1. प्रथम भारतीय स्वातन्त्र्य की प्रेरक अमर ज्योति झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के ओजस्वी शौर्यवृत्त का गायन,

2. उत्तर भारत के ग्राम्य अंचलों में सैकड़ों वर्षों से जनप्रिय और अब बुझती हुई आल्हा-गायन की लोक परम्परा को नये परिवेश में पुनः चेतना का उपक्रम,

3. बोल चाल की जन-भाषा बुंदेली की शब्द-सामर्थ्य और अभिव्यक्ति क्षमता का उद्घाटन और .

बुंदेली-अंचल के सांस्कृतिक परिवेश का चित्रांकन ।

प्रसिद्ध साहित्यकार श्री जगदीश जगेश को 8-10-90 के पत्र में श्री द्वारिकेश जी ने लिखा था- मेरी कृति साहित्यिक है, ऐसा कहने का अहं मैं कदापि नहीं कर सकता । अपनी क्षेत्र-प्रेम की प्रवृत्तिवश म ही मैंने लिखा है, और अपने वक्तव्य में साफ कहा भी है कि "यह मेरा कवित्व मुक्त काव्य का प्रयास है ।" एक तो झाँसी की रानी के सम्पूर्ण जीवन वृत्त पर कोई पद्यकृति मुझे देखने को नहीं मिली, दूसरे बारहवीं शताब्दि में महोबा के जगनिक ने जो आल्हा खण्ड लिखा था और जो कभी लगभग पूरे उत्तर देश में लोकमानस का कण्ठहार बना रहा, अब लगभग लुप्तप्राय है । उस वीर भावोद्दीपक काव्य शैली की पुनर्विधानाकांक्षा मेरे इस प्रयास का हेतु बनी है ।

भारतीय आत्म गौरव और आद्य स्वातन्त्र्य-यज्ञ की प्रथम दीप शिखा रानी लक्ष्मीबाई का शौर्यवृत्त ग्राम्य जन मानस तक पहुँचाने की ललक वश मैंने यह काव्य बुंदेली लोकभाषा में- साहित्यिक या परिनिष्ठित बुंदेली में नहीं, प्रत्युत बोलचाल की निराट, सरल और सपाट लोकवाणी में लिखा है ।।"

उपर "बुंदेलिन", "हरदौल-बुंदेला" तथा "झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई-

चरित" का जो संक्षिप्त परिचय दिया गया उससे यह तथ्य स्पष्ट होता है कि पं० द्वारिकेश मिश्र ने अपनी तीनों कृतियों में अपने कथ्य की अभिव्यक्ति के लिए ग्राम्य बुँदेली को चुना है । इस बुन्देली पर उन्होंने संस्कृत तत्समता अथवा विशुद्ध हिन्दी का रँग नहीं चढ़ने दिया है । उन्होंने इसे प्रयत्न पूर्वक सहज और ठेठ बने रहने दिया है । उन्होंने लिखा है : लोकभाषा बुँदेली स्वयं में काफी समृद्ध और सम्पूर्ण भाषा है । उसका अपरिमित शब्द भण्डार है और समर्थ अभिव्यक्ति-क्षमता । देखा जाय तो वह अन्य पड़ोसी लोकभाषाओं के साथ, आधुनिक हिन्दी की जननी है । लगभग पच्चासी हजार वर्ग मील क्षेत्र में विस्तृत बुँदेलखण्ड की प्रायः छह करोड़ जनसंख्या की तो वह मातृभाषा ही है, रग-रग में माँ के दूध के साथ समायी हुई है । अपना सरलता और स्वाभाविकता के कारण ,बुँदेलखण्ड के बाहर भी सुविधापूर्वक समझी जाती है, और अपने माधुर्य-गुण के कारण जन-सामान्य में सराही जाती है । राजनैतिक दुश्चक्र में पड़कर जैसे पुरातन बुँदेलखण्ड की ऐतिहासिक और सांस्कृतिक इकाई दो राज्यों में विभाजित और उपेक्षित है, वैसे ही लोकभाषा बुँदेली भी शिक्षित उच्चवर्ग में हेय बना दी गयी है और उसको ~~अ~~ असभ्य और अर्द्धसभ्य ग्रामीणों की बोली भर कहा जाता है । अपनी पीढ़ियों की मातृभाषा के इस दुराग्रहपूर्ण तिरस्कार के क्षोभ ने भी मुझे सरल बुँदेली में यह काव्य रचने के लिए उद्यत किया[12]।"

इसी कारण द्वारिकेश जी ने एक प्रकार से लोकभाषा बुँदेली में ही लिखते रहने का व्रत-सा ले लिया था ।

उनके ये तीनों काव्य ठेठ बुन्देली की शब्दावली के प्रयोग की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं । इसलिए और महत्वपूर्ण हैं कि इन काव्यों में ग्रामीण अंचलों में व्यवहृत होने वाली लोकभाषा बुन्देली के ठेठ और आदिम रूप सुरक्षित हैं । इन काव्यों से बुन्देली के उच्चारण, तत्सम शब्दों के ठेठ रूपान्तरित बुन्देली रूपों को समझा जा सकता है । आधुनिक बुन्देली में अंग्रेजी,फारसी और संस्कृत के शब्द बुन्देली की उच्चारण प्रक्रिया में ढलकर किस प्रकार परिवर्तित हो जाते हैं इसे भी अवगत किया जा सकता है । इन काव्यों में प्रयुक्त इन शब्दों से बुन्देली की जीवन्तता और उसकी पाचन शक्ति का भी पता चलता है । बुन्देलखण्ड की ग्रामीण जनता किस प्रकार अपनी बोली-बानी के प्रति सजग है, अपने ठेठपने को किस प्रकार पीढ़ी-दर-पीढ़ी सुरक्षित रखे हुए है, बुन्देली किस

प्रकार उसके प्राणों की भाषा है- यह मेरे आगे के विवेचन से स्पष्ट हो जायगा ।

कवि अपने कथ्य के अनुरूप भाषा चुनता है । द्वारिकेश जी ने अपने कथ्य के अनुरूप लोकभाषा बुन्देली को अपनी काव्य-भाषा बनाया है । उनका "लक्ष्मी बाई चरित" जन-सामान्य और मुख्यत: ग्राम्यजनों को ध्यान में रखकर लिखा गया है, इसलिए लेखक इसको कल्पना-चमत्कार, गूढ़ व्यंजना, अलंकार-विधान और भाव-बोझिल बनाने से कतराकर चला है । सारा वर्णन लोक जीवन की तरह सीधा-साधा सरल और सपाट है । किंचित् भी कवित्व को थोपने का यहाँ प्रयास नहीं किया गया है । इसे कवि ने "कवित्वमुक्त काव्य का प्रयोग"[13] कहा है ।

मेरे आगे के विवेचन से पता चलेगा कि लेखक ने काव्यशास्त्रीय शब्दावली का प्रयोग बहुत कम किया है । सहज अलंकृति तथा मार्मिक शब्द-विधान के अलावा उसकी कविता सायास अलंकरण से रहित है । इसी कारण मैंने अपने अध्ययन में भाषा के काव्य शास्त्रीय अध्ययन के स्थान अपने को व्याकरणिक और भाषा शास्त्रीय अध्ययन तक ही सीमित रखा है । हाँ, भाषा के सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष का विवेचन कर -लक्ष्मीबाई-चरित" में प्रयुक्त बुन्देली के सांस्कृतिक शब्द-सामर्थ्य को अवश्य दिग्दर्शन कराया गया है ।

किलों, दुर्गों, युद्धों, उत्सवों, पर्वों, ज्योनारों के वर्णन में तत्सम्बन्धी शब्दावली का कवि ने ब्यौरेवार वर्णन किया है । इन्हीं वर्णनों से मुझे बुंदेली की सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन-सम्बन्धी शब्दावली मिली है । कवि ने पशुओं और वनस्पति जगत का भी विस्तार से वर्णन किया है । ऐतिहासिक काव्य होने के कारण ऐतिहासिक व्यक्तियों के नामाभिधान वाची शब्दावली भी "लक्ष्मीबाई-चरित" में प्रभूत मात्रा में प्रयुक्त हुई है । भाषा के सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष के उद्घाटन के लिए इसी शब्दावली को आधार बनाया गया है ।

पं० द्वारिकेश मिश्र वैद्यनाथ प्राण्दा के संचालक पं० रामनारायण से जुड़े हुए थे । पं० रामनारायण वैद्य पर पं० किशोरीदास वाजपेयी की सदा कृपा बनी रही । इसी संयोग से द्वारिकेश जी को वाजपेयी जी के सान्निध्य में आने का सौभाग्य मिलता रहा । इसलिए वे राष्ट्र-भाषा के व्याकरणिक पक्ष से भली-भाँति परिचित थे । वाजपेयी जी के साथ रहने, और निरन्तर लेखकों की भाषा सुधारने जैसे काम में लगे रहने के कारण द्वारिकेश जी शब्द

प्रयोग के प्रति बहुत सजग थे । वे बहुत मँजी हुई भाषा लिखते थे । इसके साथ लोकभाषा बुंदेली के पड़ोस में बोली जाने वाली ब्रजी, अवधी, कन्नौजी, मालवी, निमाड़ी बोलियों की विशेषताओं से भली-भाँति परिचित थे । ठेठ बुन्देली के अन्य बनाफरी, तिरयारीह, लोधांती रूपों और उनकी भिन्नताओं की भी उन्हें जानकारी थी । उन्होंने एक पत्र में लिखा है :-

"आपकी यह राय सबह आने ठीक लगी कि शब्दावली के सम्बन्ध में मुखापेक्षी न बनूँ । गाडरवारा वाले सज्जन के मन्तव्य से और भी मन पक्का हो गया । उन्होंने जो विकल्प सुझाये हैं, वे अधिकांश ब्रजभाषा के हैं, बुंदेली के नहीं । ब्रज और बुन्देली का अन्तर करने में काफी सावधानी की जरूरत है । मैं 7-8 वर्ष, उस छोटी उम्र में, मथुरा में रहा हूँ, जिसमें शब्द ग्रहण की प्रवृत्ति स्वाभाविक होती है । मथुरा में दर्शनी {असिस्टेंट पंडा} का काम किया, तिनगिनी बोंमचा लगाया, यमुना जी के घाटों पर, पट्टा बिछाकर कंठी-माला, चंदन, टिकुली-बूँदा बेचे, गलियों में गा-गाकर गानों की किताबें बेची और अन्ततः प्रेस में झाड़ू लगाने से लेकर कम्पोजिटरी का काम किया । रहता था, ठेठ चौबों के मुहल्ले रतन कुण्ड में, सो बोलचाल की ब्रजभाषा का मुझे कुछ ज्ञान है । साहित्यिक और परिनिष्ठित बुंदेली और ब्रजभाषा में भिन्नता की रेखाएँ बनाना कठिन है, तथापि बोलचाल की ब्रजी और बुंदेली में भिन्नता कर पाना प्रयत्न सुलभ है ।

मैं ऐसा मानता हूँ कि लोकभाषा में शब्द रूप नहीं बदलते, उच्चारण भेद मात्र होता है । बुनियादी क्रियाएँ नहीं बदलतीं, उच्चारण भेद भी वहाँ होता है, जहाँ दो लोक भाषाओं की सीमाएँ जुड़ती हैं, जैसे ग्वालियर-मुरैना की बुंदेली पर भदावरी और आंशिक ब्रज का प्रभाव है । बाँदा की बोली पर अवधी का प्रभाव है । गाडरवारा {होशंगाबाद} की बुंदेली पर मालवी का प्रभाव है । छिंदवाड़ा और उससे थोड़ा आगे की बुंदेली पर मराठी का प्रभाव है । यह प्रभाव मूल शब्दों को नहीं बदलते, उच्चारण भिन्नता जरूर लाते हैं, कुछ अपने शब्द मिला देते हैं । "बीस कोस पै बोली बदले-तीस कोस पै पानी" वाली कहावत श्रुति का अभिप्राय बोलने के ढंग से या प्रवाह से है, भाषा से नहीं ।

मेरा जोर लोकभाषा के बोलचाल के रूप पर ही है, उसमें कोई बनावट, सौन्दर्य, सुघड़ता का सुधार लाना मुझे अभिप्रेत नहीं है । व्यासदे[14] ।"

उपर्युक्त पत्रांश से पं0 हरिकेश मिश्र के भाषादर्श तथा बोलचाल की भाषा में होने वाले परिवर्तनों सम्बन्धी ज्ञान का पता चलता है । पं0 हरिकेश मिश्र को बुन्देली पर असाधारण अधिकार था । उदाहरण के रूप में "बुँदेलिन" काव्य का एक अंश यहाँ दिया जाता है :-

जो इँ खण्ड है जों पुलिन्द के घउँअर चले दुधारे,
मुण्ड कटे पे रुण्ड समर में काढ़े रकत पनारे ।
मार्य, सुंग, सक-हूण, गुप्त राजन को राज भलें रवें,
नागवंसिआ, भारसिवी, बाकाटक बंस फलें रवें ।
बाँके बाकाटक-धसानिआँ, जूझे ठेलम ठेला,
सूरसेन चन्देले, गहबर, सबर, सेंगार बुँदेला ।
जोइँ भूम है, कबउँ "पुलिन्द" कबउँ "दसार्ण" सें जानीं,
"चेदि" कहाई, "जेजकभुक्ति", "जुझौतिक" खण्ड के मानीं ।
रकत बूँद छिरके चरनन पै विंदबासनी जू के,
बनें "बुँदेला" गहरबार सिरदार मुचण्ड मूम्र के ।
"पंचमसिंह" बुँदेला राजा नें ठकुरायत ठानीं,
"गढ़कुड़ार" गढ़ जीत, बुँदेलन की बनाईं रजधानीं,
तबसें बजत "बुँदेलखण्ड" जो धरनीं सुगर सुकामीं,
सरसुति-दुरगा की बरदानी धाम रही सिरनामीं।[15]

वे जन जीवन और धरती से जुड़े साहित्यकार थे इसलिए गली-कूँचों में चलने वाले भाषा के प्रवाह की उनमें अच्छी पकड़ थी । उन्होंने एक पत्र में लिखा है--

"बन्धुवर ।

1983 को अप्रैल की दो पहर में डॉ0 महेन्द्र वर्मा के साथ जब आप मेरे पास आये, तब "मेरी दो नहीं तीन शादियाँ हुई हैं" ऐसा जानकर आश्चर्य में क्यों पड़ें, पड़ ही गये थे, तो उसी समय पूँछ लिया होता, वह तो मौसम ही ऐसा होता है कि आदमी जरा सी भड़क में पिघल जाय । जिसे आप "तीसरी" समझ रहे हैं, वह मेरी पुण्यश्लोकी पहली पत्नी थीं, आज भी जिनका स्मरण मुझे करुणा-विह्वल कर देता है । सोचिए, भर आईं न आँखें ? वह उनके सौन्दर्य या आकर्षण के कारण नहीं, प्रत्युत इसलिए कि उस महामना ने मेरे अत्यन्त कठिनाई के दिनों में मेरा जैसा सर्वांग आत्मीय साथ§दिया§, वैसा सहज सम्भाव्य नहीं होता । विवाहित जीवन के प्रारम्भिक दिनों में जब उनको मैं पहली बार

मायके से लिवाकर लाया, मैं क्या लाया, वस्तुतः मेरी स्वास्थ्य सुरक्षा-भावना से स्वयं आईं, तो उन दिनों मेरे पास रहने को झोपड़ी भी नहीं थी. इसी झाँसी में रात दुकान के पटियों पर सोकर गुजारता था और दिन में सदर बाजार स्थित एलबियन प्रेस में कम्पोजिटर की नौकरी करता था । जीवन में "दिनों के फेर" का यह पहला मौका था । उन्हें लेकर जब स्टेशन पर उतरा, तब उन्हें बताया कि रहने का ठिकाना नहीं है, एक रिश्तेदार के घर, (वे मायके पक्ष से उनके भी सम्बन्धी थे) तुम्हें छोड़ देता हूँ, चार-छै दिन में मकान ढूँढ़कर तुम्हें लिवा लाऊँगा । वे हँसी, पता नहीं उस हँसी में मेरी मूरखता पर व्यंग्य था, या उनकी अपनी विवशता पर । स्टेशन से शहर आकर हम दोनों छोटे मुहल्लों में घूमे, क्योंकि रिश्तेदार के घर जाने से उन्होंने इन्कार कर दिया था । गणेश मढ़िया में एक कमरा आठ आना माहवार पर मिल गया, इसलिए कि उसमें संडास का प्रावधान नहीं था । जितने थोड़े दिन अपने उस कमरा-भवन में हम लोग रहे, नित्य प्रातः 4 बजे कोट बाहर निबटने जाया करते थे । उन दिनों उस नव-सुहागिन ने मिट्टी के बर्तनों में ज्वार की रोटियाँ बनाकर, दाल और कचूमर के साथ खा-खिला कर मुझे मगर रक्खा । घर से कुछ बर्तन ला सकता था, किन्तु उन्होंने न जाने दिया, न मैं गया । क्योंकि अहंकार-पूर्वक, खूबसूरत ढंग से कहना हो तो, स्वाभिमान पूर्वक, मैं दो महीने पहले चाचा के घर से अलग हो गया था , क्यों हुआ था, यह फिर कभी बताऊँगा । विशेषता की बात यह कि इस कंगाली के जीवन-यापन के विषय में उन्होंने अपने मायके में, भनक तक नहीं पड़ने दी । बताइये, थीं न स्मरणीय । बाकी फिर कभी बताऊँगा[16]।"

दुःख और विपत्ति में व्यक्ति अपने प्राणों की भाषा में बात करता है । यह सुविदित तथ्य है कि दारिकेश जी अपने अन्तिम दिनों में गले के कैंसर से पीड़ित रहे थे और उनकी दुःखद मृत्यु के लिए भी कैंसर ही कारणीभूत बना । इन क्षणों में भी वे बुन्देली को नहीं भूले । हनुमान बाहुक की तरह उन्होंने भी बजरंग बली से रोग मुक्ति की प्रार्थना की थी । इसे भी उन्होंने बुन्देली में लिखा था । एक पत्र में उन्होंने लिखा-" बीमार होते हुए भी बुंदेली में तुकें भिड़ाते रहने का अभ्यास जारी रखे हूँ, उसी का परिणाम था "दीपावली अभिनन्दन"[17]।"

अभ्यास था अपनी बीमारी पर भी दो-तीन फागें लिख मारीं,

इसके साथ भेज रहा हूँ । उनमें मेरी मनस्थिति का आभास है । "किन्सर प्रसंग" पर लिखी फागों में टकसाली बुँदेली का रूप प्रकाशित हुआ है:-

" हम पै किन्सर घेरो डारो, अरे राम निरवारो ।
अपने करम काउँ से का कयँ, नेंक न मन खाँ मारो ।
बरसन चिलम चपोरत रएँ, सिरगिट को धुआँ डकारो ।
अब पछतायँ होत का, चिरवन चउँअर खेज उजारो ।
भले आएँ किन्सर जू बिलमों, कछू दिनन खाँ पारो ।
उँ सें हाँव-हाँव बीदे रस, गतो मरम को जारो ।
सुख में सुमरन को उकास काँ धरो, फिरत झकमारो ।
परी तुमाइ चपेट भली सो मनुआँ राम उचारो ।
तुम हो हमें पाउँनें दाखल, बिन कयँ आएँ, पधारो ।
ज्वानीं में नईं आएँ, बुड़ापे में जो डेरो डारो ।
तुम सें जो करतन बन जावै, करलो छौंक-बघारो ।
पै हमाईं सो राम राख हैं, है कच्चो कुइआरो ।
हे बल बजरंग ! बचावें-बँचाव जू, किन्सर भूत ने आन बिथोलो ।
दाब गरो हरकान करैं अब, रोग भुचण्ड, शरीर मँझोलो ।
कंठ रँदो-सो जुदो दुख दायक, नोंनी अवाज में जात न बोलो ।
रोग निवारो, निरोग करो प्रभु, हे हनुमन्त ! दबो सुर बोलो !"

<u>बुन्देली की सीमा, क्षेत्र और उसकी विशिष्टताएँ:-</u>

बुन्देली के क्षेत्र और सीमा के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है । इसका कारण भाषा क्षेत्रों की संक्रमणशीलता के साथ बोली रूपों की गतिशीलता और उच्चारण विभेद है । इसका एक कारण ग्रियर्सन के बाद विस्तार तथा गहन दोनों रूपों में पुनः भाषा-सर्वेक्षण का न होना है । बोलियों के व्यवहार क्षेत्रों को छोटी-छोटी इकाइयों में बाँटे बगैर इस प्रकार का सर्वेक्षण सम्भव नहीं । इस सन्दर्भ में हुए सोपाधिक अथवा स्वतंत्र भाषा-सर्वेक्षणों की अल्पता और जो शोध हुए भी उनके परिणामों का एक स्थान पर संकलन का अभाव है ।

ग्रियर्सन ने शुद्ध बुन्देली बोलने वालों की संख्या 35 लाख 19 हजार 729 मानी है । इसमें बुन्देली के अन्य रूप मिलाकर उसके बोलने वालों की संख्या 68 लाख 69 हजार 201 मानी है[18] । डॉ० कृष्ण लाल "हंस" के अनुसार "बुन्देली

एक सुविस्तृत क्षेत्र की लोक भाषा है । इसे लगभग 67,500 वर्ग मील में निवास करने वाले लगभग 1 करोड़ लोग बालते हैं । इसके क्षेत्र के अन्तर्गत मध्य प्रदेश के 19 जिले तथा उत्तर प्रदेश के झांसी, जालौन, ललितपुर तथा हमीरपुर हैं । इसके अतिरिक्त आगरा और मैनपुरी जिले के कुछ दक्षिणी भाग में निवास करने वाले नागरिक भी बुन्देली का भी एक मिश्रित रूप बोलते हैं । "कोस-कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर बानी" की लोकोक्ति के अनुसार इस सुविशाल क्षेत्र में बोली जाने वाली इस लोकभाषा के अनेक रूप होना स्वाभाविक है।[19]"

डॉ0 भोलानाथ तिवारी के अनुसार "बुन्देली" शुद्ध रूप में झाँसी, जालौन, हमीरपुर, ग्वालियर, भूपाल, ओड़छा, सागर नृसिंहपुर, सिवनी तथा होशंगाबाद में बोली जाती है । इसके कई मिश्रित रूप आगरा, दतिया, पन्ना, चरखारी, दमोह, बालाघाट तथा नागपुर आदि में प्रचलित हैं । इस प्रकार यह बोली दक्षिणी-पश्चिमर उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश के मध्य भाग, तथा बम्बई के नागपुर के पास उत्तरी-पूर्वी भाग में प्रयुक्त होती है और इसका क्षेत्र पूर्वी हिन्दी, पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी तथा मराठी के बीच में है । "बुन्देली का परिनिष्ठित रूप ओड़छा और सागर के आसपास बोला जाता है[20]। डॉ0 भोलानाथ तिवारी ने बुन्देली क्षेत्र की सीमा-निर्धारण में सर जार्ज ग्रियर्सन की स्थापनाओं का ही अनुसरण किया है[21]। डॉ0 कैलाश चन्द्र भाटिया ने अपने विवेचन में "बुन्देली " के क्षेत्र का अंकन पर्याप्त विस्तार से किया है । उन्होंने उस समय तक उपलब्ध शोध निष्कर्षों के हवाले से अपनी स्थापनाओं को इस प्रकार निर्धारित किया है : भाषा-भूगोल की दृष्टि से बुन्देली क्षेत्र का सर्वेक्षण के बाद श्रीमती लता दुबे[22] ने बुन्देली क्षेत्र के सम्बन्ध में चले आ रहे अनेक भ्रमों को दूर कर"बुंदेली" क्षेत्र का निर्धारण निम्न प्रकार से किया है:-

उत्तर-पश्चिम	: मुरैना,
उत्तर	: भिण्ड, जालौन, हमीरपुर
उत्तर-पूर्व	: बाँदा
पूर्व	: सतना, जबलपुर मंडला
दक्षिण-पूर्व	: बालाघाट
दक्षिण	: छिंदवाड़ा
दक्षिण-पश्चिम	: बैतूल
पश्चिम	: शिवपुरी, गुना, भोपाल, होशंगाबाद

इन सीमाओं के मध्यवर्ती ग्वालियर, दतिया, झाँसी, टीकमगढ़, छतरपुर, पन्ना, विदिशा, सागर, दमोह, रायसेन, नरसिंहपुर, ये ।। जिले बुन्देली भाषा-भाषी हैं ।

डॉ० रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल ने बुन्देली के क्षेत्र को तीन भागों में बाँटा है:-

उत्तर-पूर्वी - बाँ बोली
उत्तर-पश्चिम- कों बोली
दक्षिणी - बौं बोली

"बाँ बोली"- बुन्देली की बाँ बोली की पश्चिमी सीमा बेतवा तक पहुँचती है । इससे "बाँ बोली" को दो भागों में विभाजित कर सकते हैं:—
बेतवा तटवर्ती जलालपुर से धर्मा नदी के किनारे-किनारे यदि हम महोबा और पन्ना को मिलायें तो निश्चय ही इस रेखा के पूर्व भाग की बोलियाँ उत्तर में बेतवाड़ी और दक्षिण में बघेली से प्रभावित कही जायेंगी, तथा पश्चिमी भाग विशुद्ध बुन्देली का क्षेत्र कहा जायगा ।
"कों-बोली":-बेतवा का उत्तरवर्ती प्रदेश कभी कछवाहों और कभी चौहानों के अधिकार में रहा, तुर्की राज्य भी इसी उत्तरी मैदान तक सीमित था तथा अलाउद्दीन की विजय-यात्रायें इसी उत्तरी बुन्देलखण्ड मार्ग से, जो काल्पी होता हुआ झाँसी रेलमार्ग से मिलता है, होती रहीं ।.. यह प्रदेश दशार्ण प्रदेश से अलग रहा और ब शूरसेन प्रदेश के निकट होने के कारण इसमें आधुनिक ब्रज की समानता रखने वाली विशेषतायें मिलती हैं ।
"बौं- बोली ":- दशार्ण के दक्षिण प्रदेश में यह आता है जिसे "बौं-बोली" कहा गया है । डॉ० अग्रवाल[23] ने कों, बाँ तथा बौं-बोली क्षेत्रों की भाषागत विशेषताओं का भी संकेत किया है ।

डॉ० कृष्णलाल हंस ने बुन्देली भाषा का क्षेत्र विभाजन पाँच भागों में किया है । उनके अनुसार बुन्देली बोलने वालों को उत्तरी, दक्षिणी, पूर्वी, पश्चिमी और मध्यवर्ती पाँच भाषायी क्षेत्रों में बाँटा जा सकता है ।
उत्तरी क्षेत्र:- इसके अन्तर्गत मध्य प्रदेश के मुरेना §श्योपुर तहसील छोड़कर§ भिण्ड तथा ग्वालियर जिले हैं । आगरा, मैनपुरी और इटावा का कुछ दक्षिणी भाग भी इसी क्षेत्र के अन्तर्गत आ जाता है । इनमें से मुरेना, ग्वालियर, आगरा में प्रचलित बुन्देली पर "भदावरी" का और मुरेना की श्योपुर तहसील में प्रचलित

बुन्देली के रूप में राजस्थानी का मिश्रण है ।

भिण्ड, जालौन के उत्तरी भाग तथा मैनपुरी और इटावा जिले के दक्षिणी भाग में कन्नौजी मिश्रित बुन्देली बोली जाती है । जालौन के पश्चिमी भाग की बुन्देली में कन्नौजी का मिश्रण नाम मात्र को ही दिखाई देता है ।

दक्षिणी क्षेत्र :- डॉ0 हंस ने इस क्षेत्र में छिंदवाड़ा, सिवनी और बालाघाट को लिया है । इनमें से छिन्दवाड़ा के उत्तरी तथा पूर्वी भाग में बसे लोगों की भाषा शुद्ध बुन्देली किंतु मध्य और दक्षिणी भाग में बसे किरार, रघुवंसी, कोष्टी, और कुम्हार जाति के लोग बुन्देली का विकृत रूप बोलते हैं । छिन्दवाड़ा और सिवनी जिले सीमावर्ती तथा नागपुर से लगे भागों की बोली पर मराठी का प्रभाव है । इनके शेष भाग की भाषा जबलपुर की तरह बुन्देली है ।

पूर्वी क्षेत्र:- बुन्देली के इस क्षेत्र में कई रूप प्रचलित हैं । इस भाग में जालौन, हमीरपुर, छतरपुर का पूर्वी भाग, पन्ना जिले तथा तथा जबलपुर जिले के कुछ उत्तरी और पूर्वी भाग का स्थान है । इनमें से हमीरपुर जिले के मध्यभाग में शुद्ध बुन्देली, उत्तरी-पश्चिमी तथा जालौन जिले के दक्षिणी भाग में "लोधान्ती" और पूर्वी सीमावर्ती क्षेत्र में §केन नदी का तटवर्ती भाग§ "लोधान्ती" से भिन्न "कुन्द्री" रूप प्रचलित है । जालौन जिले के यमुना-तटवर्ती भाग में "तिरहारी" तथा दक्षिणी-पश्चिमी भाग में "बनाफरी" बोली प्रचलित है । यमुना के दक्षिणी तटवर्ती भाग में "बुन्देली का एक नया रूप भी प्रचलित है इसे भाषाविदों ने "निभट्टा" कहा है ।

पन्ना जिले की बुन्देली के दो रूप हैं । इसके उत्तरी भाग की बुन्देली छतरपुर जिले और पश्चिमी भाग की बुन्देली दमोह जिले की बुन्देली से साम्य रखती है । इन दोनों भागों की भाषा शुद्ध बुन्देली कही जा सकती है । किन्तु इसके पूर्वी और दक्षिणी भाग की बुन्देली बघेली भाषा से प्रभावित होकर "बनाफरी" रूप में यहाँ प्रचलित है । यह रूप छतरपुर जिले के उत्तरी भाग को व्याप्त करता हुआ हमीरपुर जिले के दक्षिणी भाग तक पहुँच जाता है ।

इस तृतीय भाग के जबलपुर जिले के पूर्वी तथा उत्तरी क्षेत्र में भी बुन्देली का बघेली मिश्रित रूप ही बोला जाता है । कटनी तहसील की बोली तो शुद्ध रूप में बघेली हो जाती है ।

पश्चिमी क्षेत्र:- इस भाग के अन्तर्गत मुरैना जिले की श्योपुर तहसील, शिवपुरी, गुना, विदिशा, होशंगाबाद जिले का पश्चिमी भाग तथा सिहोर जिला है । इनमें

से मुरैना, शिवपुरी और गुना जिले के पश्चिमी भाग राजस्थान की पश्चिमी सीमा से संलग्न रहने के कारण राजस्थानी मिश्रित बुन्देली का रूप बोलते हैं । सिहोर जिले के पश्चिमी भाग में प्रचलित बुन्देली मालवी मिश्रित है । यही स्थिति होशंगाबाद जिले के पश्चिमी भाग की सिवनी तथा हर्दा तहसीलों की है । इनके कुछ भाग में मालवी तथा कुछ में निमाड़ी मिश्रित बुन्देली बोली जाती है।
मध्यवर्ती क्षेत्र:- डॉ० हंस ने इस क्षेत्र के अन्तर्गत दतिया, झाँसी, टीकमगढ़, छतरपुर का मध्य तथा पश्चिमी भाग, विदिशा §कुछ पश्चिमी भाग छोड़कर§ सागर, दमोह, जबलपुर§कटनी तहसील के अतिरिक्त§ रायसेन, होशंगाबाद§सिवनी, हर्दा तहसील के अतिरिक्त§ और नरसिंहपुर जिले को लिया है । यह सम्पूर्ण क्षेत्र बुन्देली भाषी भू-भाग के मध्य में स्थित है इसलिए इस क्षेत्र की सीमावर्ती बोलियाँ इस भाग में प्रचलित बुन्देली के रूप में को प्रभावित न कर सकीं ।

अपने इस सर्वेक्षण के बाद डॉ० हंस ने बोली की विशुद्धता की सीमा निर्धारित करते हुए यह उचित ही कहा है कि "संसार की कोई भी भाषा अथवा बोली ऐसी नहीं है, जिसमें किसी अन्य भाषा अथवा बोली के शब्दों का न्यूनाधिक प्रमाण में मिश्रण न हो, अतः कोई भी भाषा अथवा बोली अपने रूप में सर्वथा "शुद्ध" नहीं कही जा सकती । डॉ० हंस के अनुसार "शुद्ध बुन्देली" से तात्पर्य उस बुन्देली से है जिसमें अन्य भाषा अथवा बोली के शब्दों तथा उसकी प्रवृत्तियों का मिश्रण नाम मात्र का हो[24]।

भाषायी दृष्टि से डॉ० हंस ने बुन्देली को परिनिष्ठित, शुद्ध, मिश्रित तथा विकृत रूपों में विभाजित कर पूरे बुन्देली क्षेत्र में प्रचलित बोलियों के विविध रूपों के उच्चारण वैशिष्ट्य, एकार्थी और एक ही शब्द के विभिन्न पर्यायों पर विस्तार से प्रकाश डाला है । डॉ० हंस का यह विश्लेषण अत्यन्त परिश्रम पूर्वक तैयार किया गया है । इस क्षेत्र में कहीं-कहीं एक ही शब्द के 15 प्रकार के उच्चारण[25] तथा ग्यारह[26] पर्याय मिलते हैं ।

मेरे विवेच्य कवि ने अपनी अभिव्यक्ति के लिए बुन्देली का झाँसी, ललितपुर, ओरछा, टीकमगढ़, दतिया, जालौन, हमीरपुर की राठ, कुलपहाड़ के आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रचलित बुन्देली के रूप को चुना है । यह क्षेत्र परिनिष्ठित तथा शुद्ध बुन्देली के मध्य भाग में आता है । कवि ने परिनिष्ठित बुन्देली के स्थान ग्रामीणजनों द्वारा व्यवहृत ठेठ अथवा शुद्ध बुन्देली को चुना है

इसलिए बुन्देली शब्दावली के अनुशीलन के लिए मुझे अपने को इसी तक सीमित रखना पड़ा है ।

<u>बुन्देली : ध्वनि, व्याकरण तथा विशिष्टताएँ :-</u>

बुंदेली में दस स्वर ध्वनियों का प्रयोग होता है-

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ तथा औ । ऐ, और औ कभी तो मूल स्वर के रूप में (पै, कौ) आते हैं, और कभी संयुक्त (सैतो, कौन) स्वर के रूप में । सभी स्वरों के अनुनासिक रूप भी मिलते हैं । यथा- सँड़वा (साँड़), राँड़ (विधवा), गुइँयाँ (सहेली), ईंधन, कुँआँ, ऊँठा (अँगूठा), भेंट, भैंसिया (भैंस), न्यौं (नाखून), लौंद (लौंद का मास), दीर्घ स्वरों के ह्रस्व रूप भी प्रयुक्त होते हैं । ए का ह्रस्व इ (बेटी-बिटिया), तथा ओ का ह्रस्व उ (घोरो-घुरवा) रूप भी मिलता है ।

बुन्देली में क, ख, ग, घ, च, छ, ज, झ, ट, ठ, ड, ढ, त, थ, द, ध, प, फ, ब, भ, ङ, ञ, ण, न, न्ह, म, म्ह, र, रह, ल, ल्ह, ड़, ढ़, य, व, स, ह, व्यंजनों का प्रयोग किया जाता है । महाप्राण ~~सवर्ण~~ ध्वनियों में अल्पप्राण होने की प्रवृत्ति है, विशेषत: अनादि स्थिति में- मूँक (मूँख), हाँत (हाथ), जीब (जीभ), दूद (दूध) । यह प्रवृत्ति घोषों में अपेक्षाकृत अधिक देखी गई है । बुन्देली में ध्वनि विकास की कुछ प्रवृत्तियाँ ये हैं-- ठ का ड़ (हठ--हँड़ठ), ऊ का ई (सूख-सीख), ब का म (बबूल-बमूरा) क का घ (सूकर- सँघरवा), च का स (साँच--साँस), स का छ (सीढ़ियाँ-- छिड़ियाँ), अ का इ (बराबर --बिरोबर), क का ग (हकीकत-हकीगत), आदि । मध्यगत स्वर "ह" के लोप की प्रवृत्ति भी इसमें है--कहीं--कईं, कही--कई ।

<u>परसर्ग</u>-- कर्ता- नैं, नें, ने, न्हैं

कर्म- सम्प्रदान- कौं, खौं, खाँ, खैं, हुँ, कों

करण- अपादान- सें, सैं, से, सों

संबंध- को, की, के खो, खी, खे, खें

अधिकरण-- पै, मैं, में, पे, पै, म्हैं और लौ ।

संयुक्त परसर्ग भी मिलते हैं : के लानें (के लिए), खे लानें (के लिए), के खातिर, के साथ, के संगै । करण कारक में-- न विभक्ति (भूखन मरो- भूख से मरा) का प्रयोग भी मिलता है । "न्हैं", "खौ", "खे", तथा म्हैं प्राय: सर्वनामों के साथ प्रयुक्त होते हैं । कर्मकारकीय परसर्ग "कौं" मुरैना, भिंड, झाँसी, ग्वालियर, दतिया,

शिवपुरी, आदि में, "बों" गुना, विदिशा, रायसेन, सागर आदि में "बॉ" हमीरपुर, छतरपुर, पन्ना तथा दमोह आदि में, "कुं" तथा "कों" ह छिंदवाड़ा, सिवनी में, तथा "बें" बैतूल में प्रयुक्त होते हैं[27]।

बुन्देली का पूरा व्याकरण प्रस्तुत करना यहाँ अभिप्रेत नहीं है। मेरे विवेच्य कवि ने बुन्देली की जो शब्दावली प्रयुक्त की है उस शब्दावली के अनुशीलन से बुन्देली व्याकरण तथा भाषाशास्त्र की जो विशेषतायें उद्घाटित होंगी और सामाजिक, सांस्कृतिक शब्दावली द्वारा उसका जो अभिव्यक्ति सामर्थ्य प्रकट होगा उसका विवेचन मेरे अनुसंधेय विषय का उद्देश्य है।

लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त बुन्देली शब्दावली का संकलन कार्ड पद्धति द्वारा किया गया है। इसके लिए 22 हजार कार्डों का प्रयोग किया गया है। अकारादि क्रम से वर्गीकृत इन कार्डों के आधार पर संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया विशेषण-अव्यय तथा क्रिया पदों के आकलन के लिए पुनः वर्गीकरण किया गया। एकार्थी, भिन्नार्थी, अनेकार्थी, पर्याय शब्दों के आकलन के लिए शब्दों के एक से अधिक रूपों को परिगृहीत किया गया है। ध्वनि विकारों तथा बोलीगत विकास की सम्यक् अवधारणा के लिए भाषा विज्ञान की दृष्टि से शब्दावली का विश्लेषण कर ध्वनिगत तथा पद पदार्थ स्थिति का अनुशीलन किया गया है।

"लक्ष्मी बाई चरित" में पं० द्वारिकेश मिश्र द्वारा प्रयुक्त कारक विभक्तियों समेत शब्दावली की संख्या 46 हजार 80 के लगभग है। इस शब्दावली को 22 हजार कार्डों पर अंकित किया गया। कार्डों पर अंकित करने में एक शब्द के एक रूप को एक ही बार लिया गया है किन्तु उसके दूसरे भिन्न रूप को अथवा उसका प्रयोग जितने भी रूपों में किया गया हो उन सभी रूपों को कार्डों पर अंकित किया गया है। इससे एक ही शब्द के कई रूपों में प्रयोग करने की प्रवृत्ति का पता चला है और एक ही शब्द का विकास कितने रूपों में सम्भव हुआ है इसका भी आकलन हो सका है। कार्डों पर अंकित करने में कारक चिन्हों को प्रातिपदिक के साथ ही लिया गया है। इसी तरह संयुक्त क्रियाओं अथवा सहायक क्रियाओं को मुख्य क्रियाओं के साथ ही अंकित किया गया है। दो शब्दों से बने क्रिया विशेषणों का अंकन एक ही कार्ड पर किया गया है। नाम वाची §व्यक्तिवाची§, स्थानाभिधानों का अंकन एक ही बार किया गया है फिर उस व्यक्ति या स्थान का उल्लेख विवेच्य ग्रन्थ में कितनी ही बार हुआ

हो । इस प्रकार एक शब्द का अंकन तब तक किया गया है जब तक ग्रन्थ में उसका भिन्न रूप न मिला हो ।

---000000000---

प्रथम अध्याय

"लक्ष्मीबाई चरित" का शब्द भण्डार

कविहिं अरथ आखर बलु साँचा.[1]

कवि का सच्चा बल तो उसके द्वारा प्रयुक्त शब्द तथा अर्थ है ।
सम्पूर्ण विद्या, शिल्प और कला शब्द-शक्ति से सम्बद्ध हैं । शब्द शक्ति से पूर्ण या सिद्ध समस्त वस्तुएँ विवेचित और विभक्त की जाती हैं ।[2] आरम्भ में शब्द था और शब्द परमात्मा के साथ था और यह शब्द परमात्मा था[3] । शब्द शक्ति है । शब्द ब्रम्ह है । शब्द परमात्मा है । शब्द अमृत से भी अधिक जीवनदायक है । शब्द की महिमा अपार है । जिसने शब्द को साध लिया, उसने सब कुछ साध लिया । भाई दयाल जैन ने ठीक ही लिखा है : संसार की अनेक छोटी-बड़ी बोलियों, भाषाओं और साहित्यों का आधार शब्द ही है । यही उनकी इकाई है । शब्दों के महत्व को अनेक उपमाओं से समझाया जा सकता है । शब्द फूल हैं- जिनसे रंग-बिरंगी और सुगन्धित फूलमालाएँ बनती हैं । शब्द मोती हैं- जिनसे कण्ठहार बनते हैं । शब्द रुपये हैं, जिनसे कोश बनते हैं । शब्द ईंटें हैं, जिनसे भाषा-भवन तैयार होते हैं ।[4]

पं० द्वारिकेश मिश्र ने अपने "लक्ष्मीबाई चरित" काव्य की भाषा का आधार बुँदेली को बनाया है इसका उल्लेख पीछे किया जा चुका है । कवि की शब्द सम्पत्ति का ज्ञान उसके द्वारा प्रयुक्त शब्दावली के माध्यम से प्राप्त होता है । बुँदेली में भावों, विचारों को व्यक्त करने की अपार क्षमता है । डॉ० कृष्णलाल हंस का कथन इस तथ्य की पुष्टि करने के लिए पर्याप्त है : प्रत्येक मानव-भावना, जीवन-व्यापार, विभिन्न पारिवारिक सम्बन्ध, अंग-प्रत्यंग, पशु-पक्षी, वृक्ष-लताएँ, फूल-फल, कृषि-प्रक्रिया, विभिन्न उद्योग और व्यवसाय, शासन, स्वास्थ्य, ज्योतिष, पूजा-अर्चना, भक्ति-भावना, विभिन्न वस्त्राभूषण आदि कोई ऐसा विषय नहीं है जिससे सम्बन्धित सूक्ष्म और विस्तृत शब्दावली बुँदेली में न हो । इसे भले ही भाषा न मानी जाय, पर उसे निश्चित ही वह विशाल मूल्यवान शब्द-सम्पत्ति प्राप्त है, जो इसकी भाषायी गरिमा की द्योतक है ।[5]

"लक्ष्मीबाई-चरित" के कवि ने शब्द भण्डार की दृष्टि से संस्कृत की तत्सम शब्दावली का प्रयोग कम किया है । उसने सोच-समझ कर ग्रामीण बुँदेली का व्यवहार किया है इसलिए "लक्ष्मीबाई-चरित" में उसकी शब्दावली का आधार तद्भव और

देशज शब्द अधिक हैं । लोक-भाषा की यह विशिष्ट प्रवृत्ति होती है कि वह निरन्तर सम्पर्क के कारण दूसरी भाषाओं की शब्दावली को निरन्तर ग्रहण करती जाती है । किंतु, इसे वह तत्सम रूप में ग्रहण न कर तद्भव अथवा अर्द्ध तत्सम रूप में ग्रहण करती है । इसलिए "लक्ष्मीबाई-चरित" में संस्कृत के अलावा अंग्रेजी, मराठी और फारसी के शब्द भी मिलते हैं ।

<u>संस्कृत तत्सम शब्दावली</u> :-

अनाचार-31, 127	अन्नदाता-160	कुर्यात मंगलम-98
अकाल-52	अपार-86	कोप-25
अपार-22	अपघात-215	कोट-37
अंग	आतुर-103	कुमाता-54
अन्तस	उमंग-236	कुचाल-91
अधीनता	उमा	काली-19
अधीर-22	उच्चार-35	कुलवधू-69
अधीन	उदास	कुलदेवी
अमर	उपचार-69	काल
अबला नारी	उत्तर	खण्डिता
अकुत-50	औखद-24	गान-22
अर्चन	कथा	गात-20
अकाल-52	काम-87	गगन-69
अभागी	कण्ठ-65	ग्रन्थ-129
अहल्या-85	कन्या-60	गुरु-60
अन्नदाता	कुल	गीत
आनन्द-56	कोकिल	गोपुर
आनन-105	कुन्ती	गोपाल
आवाहन-64	कलंक	गंगाधर
आराम	कुलदेव	गंगाजल
अघट-घट-207	कमल	गंगादास
अपरस-42	कलावन्त	गंगातट
अधीनता-242	कन्त	चतुर
अनुप-242	कवि	चेतन

राज मंदिर-39

राम मंदिर-39

रूपक-70

रुचि-13

रूप-29, 64, 62

रसिक प्रिया-123, 114

राजकुमार-26

राहु-21

लेप-24

लहर-37

लेख-92

समर-19

सुर-52

सुख-71

संघ-48

समेत-182

सगुन-105

सुरक्षित-49

सुराज-143

सुता-18

सागर-209, 139

सार-109

सुरधाम -106

सुखधाम-65

संस्कार-183

संसार-18

सिद्धपीठ-39

सिद्ध-37

सत्कार-35

सुरेश-51

सुफल-36

सुकर-41

सर-30

संत-43

सोपान-94

सम्मत-62

सावित्री-22, 84

साधु-131

सीता-22

सुन्दर-208

समता-91

सोपान-194

सार-91

समाज-66

श्याम-54

शान्ति-242

विलास-123

विद्रोह-123

श्यास-77

विधि-विधान-105

विचार-105

वसुधा-92

पीताम्बर-69

पातकी-208

हिलोर-176

हास-114

हरिओम-241

तद्भव

बिसाल ताल-39

बाचाल-34

बाला गुरू-72

बलवान-85

बलवन्त-85

बुद्धि-48

अधरम-127

अनुकूलें-75

अहवम्मा-46

अनाचरन-72

अप्छरा-51

अगन-88

अंक-133

अधरम-111

अबोद-107

अरथी-106

अनचार-35

अमरा-44

अछत-63

अरघो-217

अकाज-17

अपकीरत-168

अन्नधान-167

अपच्छनी अबला-168

अच्छित-69

अस्टक-69

अच्छत-68

अंस-85

अनुसइया-84

अनरीत-167

अरसी §अलसी §-99

अमानुस-141

अमलेख-196, 94

असनान-93

आहुतीं-अहुती-100

अकासी-54

असाढ़-86

अभिआँ-86

अगहन-87

अेक पन्थ दो-
काम-236

अँसुआ-223

अँखियाँ-21

आखर-33

आठैं-67

अँगुरूभा-24

आकास-64

आस-35

आँगरह

आचरन-34

आसिस-34

आठ-201

आग-128

आँगन-72

आसरो-30

आसनें-30

आसरे-128

आँनिन-95

देशज शब्दावली:-

मराठी के शब्द

मनूबाइ-20

मरहठा

चिमाजीपन्त-21

धौंदूपन्त नानाराव-22

ताँतिआटोपे-22

काका-32

बामन नारो शंकर-45

सिवराम भाउ-47

दक्खिनिआँ-48

रांगड़े-48

यहाँ तक लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त बुंदेली शब्दावली का संकलन किया गया । इस संकलन से कवि द्वारा प्रयुक्त शब्द-प्रवृत्तियों का पता चलता है । उसने अपने कथ्य के अनुरूप उस समय प्रचलित शब्दावली का भरपूर उपयोग किया है । उसकी शब्दावली का मूल आधार संस्कृत की तत्सम तथा तद्भव शब्दावली है । बुंदेली के ठेठ शब्दों के साथ उसने अरबी, फारसी तथा अंगरेजी के भी शब्दों का सहारा लिया है । मराठी भाषा के भी कतिपय शब्द मिलते हैं । संकलित शब्दावली के पर्यवेक्षण से सूचित होता है कि उसने अंगरेजी, अरबी तथा फारसी की शब्दावली का प्रयोग तो अवश्य किया है किन्तु उसने शब्दों की रचना में बुंदेली अथवा हिन्दी के व्याकरणिक नियमों का पालन किया है । बुंदेली के उच्चारण का रंग पूरी आगत शब्दावली पर चढ़ा हुआ है । "लक्ष्मीबाई-चरित" में प्रयुक्त भाषा पूर्णतः बुंदेली है इसका प्रमाण इस ग्रन्थ में प्रयुक्त क्रिया-पद-संरचना है । क्रिया-पद या तो संस्कृत-उद्भूत हैं अथवा वे पूर्णतः देशज हैं । अधिकांश की व्युत्पत्ति हमें मूल स्रोत तक आराम से ले जाती है । क्रिया-विशेषण, विशेषण तथा सर्वनाम पद भी तत्सम अथवा तद्भव या ठेठ बुंदेली के हैं । मेरे कथन की पुष्टि आगे के विवेचन से हो जायगी ।

यहाँ "लक्ष्मीबाई-चरित" की जिस शब्दावली का संकलन किया गया है इसकी व्याकरणिक कोटियों का निर्धारण अगले अध्याय में किया गया है । व्याकरणिक कोटियों के निर्धारण के बाद उनका विश्लेषण किया गया है । विश्लेषण के द्वारा बुंदेली की प्रवृत्तियों को खोजा गया है ।

-----000-----

द्वितीय - अध्याय

शब्द स्वरूप

{क} व्याकरणिक अध्ययन:-

व्याकरण का अर्थ होता है अच्छी तरह किया गया विश्लेषण[1]। भाषा के टुकड़े-टुकड़े करके उसका ठीक स्वरूप दिखलाना व्याकरण का काम है। कामता प्रसाद गुरु के अनुसार व्याकरण का अर्थ भली-भाँति समझाना है[2]। व्याकरण में यह बताया जाता है कि शब्दों का निर्माण कैसे हुआ, उनके प्रयोग के नियम क्या हैं[3]। इस आधार पर किसी भाषा के बोलने तथा लिखने के नियमों की व्यवस्थित पद्धति को "व्याकरण" कहते हैं[4]। व्याकरण के लिए "शब्दानुशासन"[5] शब्द का भी प्रयोग किया गया है। आचार्य किशोरीदास वाजपेयी ने "व्याकरण" के लिए शब्दानुशासन शब्द के प्रयोग को ही उचित ठहराया है। कामता प्रसाद गुरु का कहना है कि व्याकरण भाषा के अधीन है और भाषा ही के अनुसार बदलता रहता है[6]। अर्थात् भाषा को नियमबद्ध करने के लिए व्याकरण नहीं बनाया जाता, वरन् भाषा पहले बोली जाती है, और उसके आधार पर व्याकरण की उत्पत्ति होती है। भाषा या बोली के पीछे चलने के कारण पं० किशोरीदास वाजपेयी ने व्याकरण को शब्दानुशासन कहा है। व्याकरण न तो शब्दों के रूप बदल सकता है, न मनचाहे अर्थ में किसी शब्द को धकेल सकता है। वह भाषा के अनुसार ही चलेगा। यही उसका "शासन" है। भाषा के पीछे चलने के कारण "अनुशासन"[7]। चूँकि मेरे विवेचन का आधार बुन्देली शब्दों का विवेचन है इसलिए "अनुशासन" शब्द उस पर सटीक बैठता है।

ध्वनि की सार्थक इकाई को शब्द कहते हैं। शब्द अपना अर्थ वाक्य में ही द्योतित करते हैं। व्याकरण में इन्हीं सार्थक ध्वनियों पर विचार किया जाता है। व्याकरण में शब्दों का वर्गीकरण कई प्रकार से किया गया है। यास्क के अनुसार शब्द चार प्रकार के होते हैं- नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात[8]। यह वर्गीकरण स्पष्टतः व्याकरणिक है और आज तक सर्वथा वैज्ञानिक है[9]। पाणिनी ने शब्दों के दो प्रमुख भेद किये हैं- सुबन्त और तिङन्त। यास्क ने आख्यात शब्द का प्रयोग क्रिया शब्दों के लिए किया है, पाणिनी इसे तिङन्त कहते हैं और शेष तीन अर्थात्-नाम, उपसर्ग निपात पाणिनी के सुबन्त के अन्तर्गत आ जाते हैं। अंग्रेजी व्याकरण के अनुसार शब्द आठ वर्गों में विभाजित किया जाता है- संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रिया

विशेषण, समुच्चय बोधक, संबंध सूचक तथा विस्मयादिबोधक । प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक येस्पर्सन ने व्याकरणिक दृष्टि से शब्द को नाम या संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम, क्रिया तथा अव्यय इन पाँच वर्गों में बाँटा है[10]। डॉ० भोलानाथ तिवारी ने प्राच्य और पाश्चात्य शब्दशास्त्रियों द्वारा किये गये वर्गीकरण के आधार पर शब्दों को पाँच वर्गों में बाँटा है । उनके आधार हैं इतिहास, बनावट, अर्थ, व्याकरणिक प्रयोग, प्रयोग में परिवर्तन-शीलता ।

‡क‡ इतिहास के आधार पर शब्दों का वर्गीकरण :-

इतिहास व्युत्पत्ति अथवा स्रोत के आधार पर शब्दों के तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी भेद किये जाते हैं । डॉ० तिवारी ने इस वर्गीकरण को समीचीन न मान उसे परम्परागत, गृहीत और निर्मित तीन वर्गों में रखकर इनमें से प्रत्येक के तत्सम, तद्भव भेद किये हैं । उन्होंने निर्मित शब्दों के दो भेद देशज और द्विज करके प्रत्येक को पुनः तत्सम तद्भव में बाँट आठ भागों में विभाजित किया है[11]। डॉ० तिवारी का वर्गीकरण वैज्ञानिक है ।

‡ख‡ बनावट के आधार पर वर्गीकरण :-

इस दृष्टि से शब्दों को रूढ़ि, यौगिक तथा योगरूढ़ि तीन भागों में बाँटा गया है । रूढ़ि शब्दों के सार्थक टुकड़े नहीं किये जा सकते । इन्हें मौलिक या अयौगिक भी कहते हैं । रूढ़ि शब्दों में उपसर्ग, प्रत्यय जोड़कर बने शब्दों को यौगिक कहते हैं । इन निर्माण अन्य शब्दों से भी किया जा सकता है । योग रूढ़ि वे शब्द होते हैं जो यौगिक होते हुए किसी एक अर्थ में रूढ़ हो जाते हैं ।

रचना के ही आधार पर शब्दों के समस्त, पुनरुक्त ‡पूर्ण तथा अपूर्ण पुनरुक्त‡, अनुकरणात्मक ‡ध्वन्यात्मक, दृश्यात्मक‡, अनर्गल, अनुवाद युग्मक तथा प्रतिध्वनि शब्द छह भेद किये जाते हैं ।

‡ग‡ अर्थ के आधार पर वर्गीकरण :-

इस आधार पर शब्दों के कई भेद हो सकते हैं, यथा सार्थक, निरर्थक, निषेधार्थक, विधेयार्थक, अर्थ की एकता अनेकता के आधार पर एकार्थी, अनेकार्थी, एकमूलीय भिन्नार्थक, समध्वनीय भिन्नार्थक आदि ।

‡घ‡ व्याकरणिक प्रयोगों के आधार पर :- इस दृष्टि से संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण आदि

‡ङ‡ प्रयोग में परिवर्तनशीलता-अपरिवर्तनशीलता के आधार पर:-

कुछ शब्दों में लिंग, वचन, पुरुष, कारक, काल आदि के कारण परिवर्तन हो

जाता है । इस दृष्टि से शब्दों को विकारी तथा अविकारी दो भागों में बाँटा जाता है । संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण तथा क्रिया विकारी के अन्तर्गत आते हैं और जिन शब्दों में परिवर्तन नहीं आता वे अविकारी कहे जाते हैं । अविकारी में क्रिया विशेषण, अव्यय, विस्मयादि बोधक, संबंध बोधक, समुच्चय बोधक शब्द आते हैं ।

प्रस्तुत अध्याय में शब्दों का अध्ययन व्याकरण तथा प्रयोग की दृष्टि से किया जायगा । शब्दों की रचना वाग्ध्वनियों के आधार पर होती है । इसकी लघुतम इकाई वर्ण है । वर्ण को स्वर तथा व्यंजन दो भागों में बाँटा जाता है ।

बुन्देली के मूल 10 स्वर तथा 28 व्यंजन हैं । डॉ० भोलानाथ तिवारी ने कुछ संयुक्त व्यंजन मिलाकर बुन्देली के व्यंजनों की संख्या 37 मानी है ।

बुन्देली के मूल स्वर : अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ

बुन्देली के मूल व्यंजन: क, ख, ग, घ

च, छ, ज, झ

ट, ठ, ड, ढ, ड़,

त, थ, द, ध, न

प, फ, ब, भ, म

र, ल, व, ह .

देव नागरी लिपि के 16 अक्षरों–ऋ, ॠ, ऌ, अं, अः, ङ, ञ, ण, ढ़, श, ष, य, व, क्ष, त्र, ज्ञ, का प्रयोग इसमें नहीं होता है ।

अ– बुन्देली में यह अर्ध विवृत मध्य स्वर के रूप में प्रयुक्त हुआ है । इसके उच्चारण में जिह्वा का मध्य भाग थोड़ा उठ जाता है और ओठ थोड़े खुल जाते हैं । "लक्ष्मीबाई–चरित" में इसका प्रयोग शब्द के आदि, मध्य और अन्त तीनों में किया गया है :

<u>शब्द–आदि में</u> :–

अटम्मर {भारी मात्रा में} उन्तीसक तोपैं, गोलन के अटे <u>अटम्मर</u> सैं ल्यायें[12]

अटे {ढेर के ढेर रखे हुए} गोलन के <u>अटे</u> <u>अटम्मर</u>[13]

अनोयें {उपाय} जो <u>अनोयें</u> कर लवें तौ[14]

अकड़ {ऐंठ} तोउँ न छूटी नत्थे खाँ की <u>अकड़</u>[15]

<u>शब्द–मध्य में</u> : –

अथएँ {संध्या} हते <u>अथएँ</u> कं पाँच किले में[16]

अटकीं {रुक जाना} पाछैं <u>अटकीं</u> हिनहिनयात[17]

अड़चन §बाधा§ : रानीं बोलीं, का अड़चन[18] है

उसरा §दालान§ : इपका अन्त उसरा[19] में

शब्द -अन्त में:-

ठाटन §दिखावा, वैभव-पूर्ण व्यवस्था§ : सबरे खिलात के ठाटन भरौ खजानों[20]

बिचकन §दूर जाना, छड़कना, बचकर रहना§ : हिन्दू मुसलमान पल्टन के, बिचकन लगे कुचालें देख[21]

दुक §छिप जाना§ : लगा बेडवानें घर में दुक जावें[22]

अॅ- अर्ध मात्रा वाला यह बुन्देली का मध्य स्वर है । इसका प्रयोग लक्ष्मीबाई-चरित में मध्य के साथ-साथ अन्त में भी किया गया है । लक्ष्मीबाई चरित में अर्ध मात्रा के प्रयोग अन्य स्वरों के भी मिलते हैं ।

मध्य में:-

अॅसइ §इसी तरह§ : अॅसइ करत चकोलें,[23]

चौपरा §चौराहे पर§: जा उतरीं नगर-चौपरा तीर[24]

शब्द के अन्त में - रावें, दावें, बरकावें,- बढ़कें आएँ गद्दी के रावें, आकें घलत दावें बरकावें ।

शब्द के अन्त में अर्धमात्रा वाले अकार की प्रवृत्ति वहीं मिलती है जहाँ शब्दान्त में वकार होता है और उसके पहले दीर्घ अकार होता है । जैसे-पावें, बरयावें,[26] आवें, डरावें भरबावें, अड़ावें,[27] उठावें, मुरकावें,[28] तड़कावें[29] । कुछ उदाहरण ऐसे भी मिलते हैं जहाँ अर्ध मात्रा वाले "अकार" का प्रयोग आवें प्रत्यय के साथ न होकर अन्त्य "यकार" के साथ होता है । जैसे- बेपारिन से कवें समजायें,[30] कालइं से करवाँएं अनोय[31] । कहीं-कहीं इस स्वर का प्रयोग कवि ने ह्रस्व अकार के बाद भी किया है । जैसे, सुनों अकेलें धोको दवें तब, हमसें बुरवें न जानों कोयें[32] । यहाँ पर अकार ह्रस्व के साथ-साथ ओकार के साथ भी इस स्वर का प्रयोग मिलता है- "अनोयें," "कोयें" तथा कुछ उदाहरण "आय" §समजायें§ के भी हैं । इस तरह के उदाहरण अव के साथ भी हैं जैसे- लवें रानीं ने राज, आगवें होय सुराज[33] । "आयें" के अन्य उदाहरण हैं- छाती पीट टेर घिघिआयें, अब भारत कों का कुदा बचायें[34] । घरवायें, लगायें, इड़िआय,[35] मिलायें, सुदिआयें[36] भी इसके उदाहरण हैं ।

अऽ :- इसके उच्चारण में मूल स्वर अ के उच्चारण की अपेक्षा अधिक समय लगता है ।

इसे डॉ0 हंस ने विलम्बित तथा लुप्त स्वर कहा है । उनके अनुसार बुन्देली में इसका प्रयोग शब्द के मध्य में ही होता है । किन्तु उनके इस मत से सहमत नहीं हुआ जा सकता कि शब्दान्त में इसका प्रयोग केवल निमाड़ी और मालवी में होता है बुन्देली में नहीं । लक्ष्मीबाई-चरित में इसका प्रयोग शब्द के मध्य में तो हुआ ही है किन्तु कवि ने इसका प्रयोग शब्दान्त में भी किया है--

फरका वें-{फरक बताना} फिरकें झलकारी उरजाएँ, फरकाऽवें करे ।[36]

यहाँ पर शब्द-मध्य में प्लुत उच्चारण युक्त अ का प्रयोग किया गया है । इसी तरह के उदाहरण ना वें, शब्द में किया गया है- काऽ नाऽवेंधरे ।[37]

शब्द के अन्त में भी प्लुत अकार का प्रयोग मिलता है- "काऽ", "नाँऽ" इसी तरह के उदाहरण हैं ।[38]

" कोउ नाँऽ जानें ।"

लक्ष्मीबाई-चरित में "अ" के सानुनासिक प्रयोग शब्दाय तथा शब्द-मध्य दोनों में मिलते हैं ।

शब्दाय में:- अँकवालई {अंक में ले लिया} रानी याँ सुन्दर अँकवा लई, सुन्दर दामोदरे समार ।[39]

अंग लगाइ {अपनाना} तौउ मनू ने अंग लगाइ[40]

अँदरा जायें {अँधेरे हो जाता है} बैरी अँदरा जायें[41]

अँसुआ भर {आँसू भरकर} रानी ने अँसुआभर[42]

शब्द-मध्य में :-

रहँट {कुएँ से सिंचाई करने का एक यंत्र} सुदरायें रहँट की आरें[43]

मलंगा, छलंगा {मनमौजी, कूदते-उछलते हुए} फिरें मलंगा, भरें छलंगा[44]

हुरदंगा {अमर्यादित हो-हल्ला}- गैलन हुरदंगा[45]

आ-

उच्चारण-प्रयत्न के अनुसार इसे बुन्देली का पश्चविवृत स्वर कहा जाता है । इसके उच्चारण के समय जीभ का पिछला भाग कुछ ऊपर उठ जाता है और ओठ "अ" के बोलने की अपेक्षा थोड़े अधिक खुल जाते हैं । इसके दो अन्य सहस्वन आ और आँ हैं । लक्ष्मीबाई चरित में इसके दोनों रूप मिलते हैं ।

1. आ- ~~कककक~~ लक्ष्मीबाई चरित में इसका उच्चारण शब्द के आदि, मध्य और अन्त तीनों में मिलता है ।

आदि में- आखर §अक्षर§, आठैं §अष्टमी§, आसिस, आसरे §आशीष, आश्रय§, आपुस में §परस्पर§.

-सैं करो है आखर ग्यान-33,

-आठैं बाँ गनेस-मन्दिर में, गूँजीं भोरइँ सें सहनाँईं-67

-आसिस दैंन किलें-दरबार-34

-मिटे आसरे, कलाबन्त, साजिन्दे फिरबैं माँ उतरात-128

-पै कर पाईं न कितउँ बगिआन नें, आपुसमें तुलन-समार-186

मध्य में-

सिन्सारी §सांसारिक§- मन उचटो सिन्सारी माया सें-5।

मनाबैं §मनाना§ - पण्डित रोज मनाबैं दोज-50

सुमाउन-64, सिरदार-51, मनिआयें-51, सिलयाउँ-50, घुटिआर-27, उफनानी-109, अड़यार-82, झटकार-208, अक अबारें-30, चटसाला-129 आदि इसी तरह के प्रयोग हैं ।

शब्द के अन्त में-

अड़या §डटे रहने वाले§- भरती करकैं अड़या ज्वाँन-166

कनभरा §कान भरने वाले§-कनभरा लगे चिपके, राजन के काँनें-124

घुरआ-मुरआ §घोड़ा आदि§-घुरआ-मुरआ, बरछीं-मरछीं-67

अन्य उदाहरण हैं आल्हा-132, करया में-20, खरा में-86, कुतका-25, कठमा गरें-20, अटका-49, उतरा में-86, उल्था-58, कोटा-72, कँकड़िया-81। आदि ।

ऑ-

भाषा-शास्त्रियों की दृष्टि से इस स्वर का उच्चारण स्थान बुन्देली के मूल स्वर अ तथा आ के मध्य का है । लक्ष्मीबाई-चरित में इसके भी कुछ उदाहरण मिलते हैं।
अड़ॉव §लगा दिये§ पेरे पै जोधनें अडॉव-178 स्यॉव-143

सॉसउँ §सचमुच§ का इनसे सॉसउँ होत, अपुन कौं छोभा-76

शब्द मध्य के अलावा इसके उदाहरण शब्दान्त में भी मिलते हैं ।

तमा §गरमी§ - जब तमा तपैं-89

हवा §वायु§ कउँ हवा चैं-89

पत्ता (पत्ते)- पत्ता न क्यें सिखिआनें ।

शब्द के आदि में इस स्वर का प्रयोग लक्ष्मीबाई चरित में मिलता है ।

आवें (आ गया)-झटका-सो आव-62 सॉलच-127

गहा (देकर) पाती गहा पेसुआ की-62

आन (आकर) बई छिन रूप मनू को आन-35

लक्ष्मीबाई चरित में आ के सानुनासिक प्रयोग भी विद्यमान हैं ।

आ के सानुनासिक प्रयोग:-

लक्ष्मीबाई-चरित के कवि ने आ के सानुनासिक वाले प्रयोग शब्दादि तथा मध्य में बहुतायत से किये हैं ।

शब्द के आदि में:- भाँड़ेरी-218, आँसी-145, आँगें-233, आँखन देखत-182, जाँ जिअें-144 आदि

शब्द के मध्य में:-

कुमाँनों-32, छकाँय-126, पिछिआँयें-131, उराँयनों-76, उलाँटि-20 कुचकुचयाँनि-196 आदि ।

शब्दान्त में:-

बैर-मुकुइँयाँ-52, बिटिआँ-52, चौरिआँ-46, पपेलाँ-46, पातुरिआँ-123, आदिआँ-192, पल्टनयाँ-246 आदि ।

इ :- भाषा विज्ञान की दृष्टि से यह बुन्देली का अक्षरात्मक ( ) संवृत है । इसका उच्चारण दीर्घ ई के स्थान से थोड़ा नीचे अन्दर की ओर किया जाता है । लक्ष्मीबाई-चरित में इसके प्रयोग शब्द आदि तथा मध्य में किये गये हैं । इसके दो सहस्वर इ तथा इँ हैं ।

शब्द-आदि में:-

इमरत-4, इक सैं-202, इसतोत-100, इतेकइँ पै-28, इठिआत, इकले-26 आदि

शब्द-मध्य में:- खिरिआन-87, गिगिआनीं-65, गरिआँयें-54, मामुलिया-27, गुँगिआनें-88 आदि ।

शब्दान्त में:-

कबताइ- पोथीं, बेद-पुरान-सास्त्र, जोतिस, नाटक कबताइ मँगाइ-57 मँगाइ .

सजवाइ- मिहल सामनें दो मन्जल पुस्तक साला बनवा सजवाइ-57

गुरभाइ- से गुरू और गुरभाइ खिलात सयानें-59

गइइ- भूँकी हुअे, गइइ भरकें सरोंट लगालै-27

बुन्देली के कुछ सामान्य भूतकालीन क्रियापदों को लिखा तो ईकारान्त जाता है किंतु श्रव्य रूप इकारान्त ही होता है । मेरे विवेच्य कवि पं0 हरिकेश मिश्र ने इन्हें लिखा भी ह्रस्व इकार में है जैसे--

कइ- हँस कें कइ पेलुआ-32 गाइ- जी की करनीं- कथा, बुंदेले हरबोले उमगा कें गाइ-19

लिआइ- में लिआइ सी लाद, अेक सौ-26

"इ" की तुलना में "इँ" अनाक्षरिक{ } संवृत ह्रस्व अग्र स्वर है ।

डॉ0 हंस के अनुसार यह स्वर सामान्यतः अ के पश्चात् आकर संध्यक्षर{ } का रूप ग्रहण कर लेता है । जैसे गइँया, भइँया, मइँया । इन्हें संध्यक्षर के रूप में गैया, भैया और मैया भी लिखा जाता है । लक्ष्मीबाई-चरित में इसका प्रयोग संध्यक्षर के रूप में शब्द मध्य में मिलता है और संध्यक्षर के अलावा भी कवि ने इसका प्रयोग शब्द मध्य किया है ।

रइँअत {रैयत} - रइँयत सों धमकान-31 .

बइँअरें {बैरें} -भगत फिरें अंगरेज बइँअरें-138

लोइँअन {लोलैयाँ}-निपटी लराईं लोलइँअन किलें बुलाकें-144

तइँआर {तैयार}- झाँसी पै चढ़वे तइँआर-164 बतइँआ{बतैया} सातउ जात बिहुर-बतइँआ-63

शब्द-मध्य के अन्य उदाहरण :-

गुइँअन- अपनी गुइँअन नों जाकें-27, गुँदिआय-33 ,

जरइँआ- रकत और जरइँआ जावें-166 नाइँका-भेद-77, मोनिआ-198

सिपाइँअन- सब सिपाइँअन की अगवाँ-166 पिछिआँयें गपिआएँ-44

रइँओ- छूँछे गोला घालत रइँओ-208

शब्द-अन्त में - दुइँ-दुइँ तरवार चलाय-30

बिदाइँ दइँ- झाँसी बारन सों बिदाइँ दइँ-65

लगाइँ- देस-धरम की बाँग लगाइँ-134

लइँ- तुपक लइँ तान-137

उतइँ- जैसे वे हैं उतइँ हम हो जावें फिरका परे तबाद-14

बुन्देली के ह्रस्व इकार का सानुनासिक प्रयोग भी शब्द के आदि तथा मध्य में मेरे

विवेच्य काव्य लक्ष्मीबाई-चरित में मिलता है ।

शब्द के आदि में :-

इँदिआरे- इँदिआरे से माता द्वारन-178

सिन्तारी- मन उचटो सिन्तारी माया सैं-51, सिंगार-228

सिंघनी-चढ़ी सिंघनी बन बैरिन पै-182, सिंगतार-22

सिंघासन- गंगाधर जू सिंघासन पै-70 सिंगार-223,

शब्द के मध्य में :-

नरसिंग टौरिआ-45, नइँतर , तरइँआँ-64, गुइँआँ-26, सइँअर पहार-37, गुसइँअन-40, दोइँअन-48, मुकुइँआँ-52, मइँनाबार-56 आदि

शब्द के अन्त में :-

झटटइँ- झटटइँ केमासन कीं तोपर को-204

हिनइँ- हिनइँ चुक गइँ बाइसाब-204

पौंचतनइँ- पौंचतनइँ दरसन के लाने-61

धराइँ-कुची के पक्के रँगन-धराइँ-57

सुदराइँ- पाछैं डरी भूम सुदराइँ-57

नाँइँ- डठके करी टका-सी नाँइँ-52 , दस गारीं ओर सुनाइँ-52, बनबाँइँ-49, कड़बाँइँ-49 आदि ।

ई-

इसे बुन्देली का संवृत दीर्घ अग्र स्वर कहा जाता है । इसका उच्चारण करते समय जिव्हा की टोंक ऊपर उठकर तालु के अत्यंत पास पहुँच जाती है । इसका उच्चारण स्थान मूल स्वर ई से किंचित नीचे है ।

ह्रस्व इ की तरह इसके भी दो सह स्वन हैं- ई और ईं ।

ई- लक्ष्मीबाई-चरित में इसका प्रयोग अन्य स्वरों की तरह शब्द के आदि, मध्य व्यंजन के बाद शबद शब्दान्त में भी मिलता है ।

आदि में:- दीया मची-211, जीतें निमोरकें-169, भीतर-बाहर-41, बीरन की-41, दीक्षत-39, तीरथ-37, टीपनाँ-36, सीकें-90, नीचट-186, तीकुर-किनान-89, धीरज दरको-209 आदि ।

मध्य में:- पसीता देत-209, अबीर-गुलाल-80, हवीली-58, पछीते-144 आदि

अन्त में:- अदादुन्दी-148, अगरी-145, हवीली-58, झैसी-126, परी-139, उनगारी-83 आदि ।

उँ - लक्ष्मीबाई-चरित में इसका प्रयोग शब्द मध्य तथा अन्त में किया गया है । इँ की तरह इस स्वर ने भी कहीं-कहीं संध्यक्षर का रूप ग्रहण कर लिया है ।

शब्द के आदि में:- नुगइँआ-82

संध्यक्षर का रूप:- बउँनी§बौनी§ करान हर हूरैं-87, चउँअर बेहरैं, गजब तो करैं§चौअर-87 गलउँआ §गलौआ§ मीडैं-81, भुलउँअन§भुलौआ§ के अइयार-82, छिबउँअल§छिबौअल-93§

मध्य में प्रयोग:- जीउँन खाँ धिक्कार-89, दिउँरा हुरयारौ-81 .

शब्द के अन्त में प्रयोग:- जिनके न पीउँ, तरफाय जीउँ, सबठौर छीउँ मन मारैं-87

बेहर जुड़ाउँ, कनमक भाउँ, हत उँतै जाउँ-86 ठबरा कैं ।

उँ का उच्चारण स्थान उ की अपेक्षा कुछ नीचे है । इसके उच्चारण में उ की अपेक्षा ओंठ कम वर्तुलाकार होते हैं । अन्य स्वरों की तरह उ के भी सानुनासिक प्रयोग लक्ष्मीबाई-चरित में भूरिशः मिलते हैं ।

शब्द के पहले :- कुँअरन के संगै-22, बुन्देले-19, भुन्सारौ-180, मुंग-मयंग-227, मुँड़केरी-229, तीन नुँ गईं आँ डार-82, गुँदिआँयँ-195, गुंजारौ-145, गुँदिआय-33, गुँगिआनै-88 ।

शब्द मध्य में :- कहाउँत बौ दिनाँ-83, घुरँअन चढ़े-बड़े सिरदार-68, फागुन आवें छिउँलिअन की करिअल घेंटी चटकीं ललचौंन-80 अनाउँती कतकारन-80

शब्द के अन्त में:- कबउँ-कबउँ चकचौंदें मन में-22, तीनउँ हतीं जात की ओछीं-22, कबउँ-कितउँ-26 , कौनउँ रुआँसी-74, कउँ पेरै-87

ऊ :- उच्चारण की दृष्टि से इसे बुन्देली का संवृत दीर्घ पश्च स्वर कहते हैं । इसका उच्चारण करते समय जीभ का पश्च भाग "उ" के उच्चारण की तुलना में अधिक ऊँचा उठकर कोमल तालु के निकट पहुँच जाता है । बुन्देली में इस स्वर का उच्चारण स्थान प्रधान स्वर "ऊ" से किंचित नीचे माना जाता है । इसके उच्चारण के समय ओठ "उ" की तुलना में अधिक गोल हो जाते हैं । इसके दो सहस्वन हैं । "ऊ" तथा ऊँ ।

ऊ - लक्ष्मीबाई-चरित में इसके प्रयोग अन्य स्वरों की तरह शब्दान्त, मध्य तथा आदि में मिलते हैं ।

शब्दादि में :- ऊसर हरयानैं-86, ऊपरी रैन-86, न लूदें काउ उधारै-82, दिन ऊँगे भोर-186 , ड्डदन में कुद मरैं-156, सब काट लैं, घास न छोटैं-189, ऊदर-49, दूनीं-51, भूम-52, दूल्हा-68, ऊसत-कूदत-20 ।

शब्द के बीच में :- भरपूर-50, जरूर-50, सबूबाइ=51, चितूरत-65, रमतूलन को तुर

सरति-68 , अकूत कलाकारी कीं-73 आदि । कछुक डरे कलारें-156

शब्द के अन्त में :-

पेलुआजू-31, झकझोरू-76, फुरोरू-76, हितू-7, बड़बोलू-31, डाँकू-162

ॐ.- इसके उच्चारण में दीर्घ उ के उच्चारण की अपेक्षा कम समय लगता है । बुन्देली में इसका प्रयोग शब्दान्त में स्वर के पश्चात् होता है । इसके प्रयोग से क्रियार्थक विशेषण या संज्ञार्थक विशेषण बनते हैं ।

लक्ष्मीबाई-चरित में इसका प्रयोग स्थल विशेष उच्चारण से निश्चित होता है ।

कछु- नातिदारन सें सुनिआरें कछु खबरें, उनखाँ भुगतायँ-163

यहाँ दीर्घ ऊ का उच्चारण दीर्घ की तरह न होकर उससे निचले स्तर से होता है ।

डाँकू- ल्यावें डाँकू पकराय-161 । इस उदाहरण में भी "ऊ" के उच्चारण की स्थिति वही है ।

दिखनौंतू- जो-जो आए, बड़ौन ब हवेलीं अपनी दिखनौंतू बनवाएँ-49

यहाँ "दिखनौतू" में "तू" का उच्चारण मूल स्वर "ऊ" से कुछ कम समय लेता है । एक अन्य उदाहरण से स्थिति और स्पष्ट हो जायगी ।

"भाऊ" तथा "कछू"- देखौ-समजौ राज-काज, भाऊ नें कछू दिनन सब लेख-47

इन दोनों "ऊ" के उच्चारण में "कछू" की तुलना में "भाऊ" के उच्चारण में कम समय लगता है । यद्यपि इसके प्रयोग में अन्य स्वरों की तरह ऊकार के साथ कवि ने ह्रस्व या प्लुत के लिए निर्धारित चिन्ह का प्रयोग नहीं किया है ।

अनुस्वरित उच्चारण :- लक्ष्मीबाई-चरित में अनुस्वरित "ऊँ" का प्रयोग शब्द के आदि, मध्य तथा अन्त तीनों में मिलता है ।

शब्दादि में :- कूँद कें हुमकें-23, मूँज कें डार-227, हूँ-हूँ कय कें-25, मूँड़ चढ़ाइ-31 ऊँची बुरजें-41, ढूँढन बीन-बीन कें बाँधें-53, गूँजी चौगिर्द जे जैकार-67, उचकन-कूँदन-72 .

शब्द के बीच में :-

लक्ष्मीबाई-चरित में ऊँ का प्रयोग शब्द के बीच में एक मिला है - अनूँठि-125

शब्द के अन्त में :- फिरकूँ-186, कितऊँ बे-मेल-36, आगूँ-सागूँ-69

अगारूँ-ब कबऊँ अगाऊँ जाकें कूँदें-181, घनी डाँग में भगज्यायँ अग्गा-बि पिछूँ-162

ए.

यह अर्ध संवृत दीर्घ अग्र स्वर कहलाता है । बुन्देली में इसका उच्चारण स्थान प्रधान स्वर ए से कुछ नीचे है । इसके उच्चारण में ओंठ ई के उच्चारण की तुलना में कुछ

अधिक खुल जाते हैं । जिह्वा का का उठा हुआ भाग प्रधान स्वर ए की अपेक्षा थोड़ा पीछे रहता है । बुन्देली में इसके तीन सह स्वन मिलते हैं- दीर्घ आग्ररिक ए, ह्रस्व ऍ तथा अनाग्ररिक ए॒ । लक्ष्मीबाई-चरित में इन तीनों का प्रयोग हुआ है ।

दीर्घ आग्ररिक -ए :-

बुन्देली में हिन्दी की तुलना में स्वरों के उच्चारण की स्थिति बिल्कुल भिन्न है । ए तथा ऐ और ओ तथा औ इन्हें बुन्देली उच्चारण के अनुसार अ+ए, अ+ऐ, इ तथा उ को अ + इ और अ + उ लिखा जाना चाहिए । ओ तथा और बुन्देली के अनुसार अ + ओ, अ + औ हैं किन्तु अ, ओ तथा औ में मिल जाता है इसलिए इसमें उसकी पृथक स्थिति का बोध नहीं होता है । लक्ष्मीबाई-चरित के कवि ने बुन्देली स्वरों के इसी मूल उच्चारण का अनुसरण करते हुए ए तथा ऐ को सर्वत्र अे तथा अै लिखा है ।

आदि में :-

अेक :- अेक दिनाँ पुरुवा दौराबे, चारउ जनें चले रुचिआय-23

अेक :- अेक भोर नाना के मन में, उपजो सेर करें कौ चावें-24

अेक :- अंक ताँतिआ और आ मिले-32 अेकइ तिथबार -131, अंकइ गोत-45 ।

मध्य में :- करेजे-छेवेंलियन नें काइ करेजे तेंदुरिया दगरानें-81

नाईंका-भेद उचारों-80, परभाव परेख-80, भुमानी जू के गारें-80, कब परदेसी दावें देस-78 ।

अन्त में :- आदे दिन खाँ-76, बाहर कड़बे खाँ-74, कौरे पनौट कें-167, झाँसी पै चढ़बे-169 । गए-21, लए-23, रए-31, कुँदवादए-161

ह्रस्व ऍ :-

लक्ष्मीबाई-चरित में इसका प्रयोग अनेक स्थलों पर हुआ है । कवि ने इसका प्रयोग ह्रस्व के चिन्ह के साथ किया है । यह चिन्ह इसके उच्चारण-स्थान का द्योतक है । "ए" के उच्चारण की अपेक्षा इसका उच्चारण नीचे स्थान से होता है । इसका प्रयोग लक्ष्मीबाई-चरित में सिर्फ शब्द के अन्त में मिलता है । ☓

उचकत भग लएँ-28, दबकें कारें रहें-27, सिहाएँ-32, दच्छिन से बुलाएँ बामन-45, नएँ दिसावरी-46, बनबाएँ, बनाएँ-46, करबाएँ, बुलबाएँ, बढ़बाएँ, झकताएँ -49, फूट गएँ, उजर गएँ-52, आएँ-52

ए- अनुस्वरित रूप

शब्द के आदि में :- अेंगर-252, अेंनस-252

शब्द-मध्य में :- खैंच कें झटकी-177, निसानैंबाज-184

शब्द के अन्त में:- उजिआएँ-20, सबरँ-20, सपनें में-176, दायनें-181, रएँ-47 आदि ।

ऐ का प्रयोग:-

शब्द के आदि में :- ऐसो मर्दो-176, ऐतेंडू-252

शब्द के मध्य में :- रै-169, पै-169, करवै देख-174, पैल-184

शब्द के अन्त में :- धर दैं-169, है-169, अबै-168, चितै-168, कितै-168, उतै घुसै-171, कोट भीतरै-171, तातिऐ-85, हुऐ-27, हुईऐ-33

दीर्घ ऐ के अनुस्वरित प्रयोग:- आदि में:- ऐंड़-171, ऐंगर-176, ऐंनसमान-183,

शब्द के मध्य में :- मैंदान-177, कैंमानस-176, फैंका को-183

शब्द के अन्त में :- जैं-169, कैं-169, रानिऐं-169, धरैं-169, कड़कैं-178, पछैलैं-181 जिऐं-187, काकरिऐं-31

ओ- उच्चारण की दृष्टि से यह अर्ध संवृत पश्च दीर्घ स्वर है । बुन्देली के प्रधान स्वर "ओ" की तुलना में इसका उच्चारण-स्थान थोड़ा नीचे की ओर है । इसे बोलते समय ओठ गोलाकार हो जाते हैं । "ए" की तरह बुन्देली में इसके भी तीन सहस्वन मिलते हैं- दीर्घ आक्षरिक ओ, ह्रस्व ओ तथा अनाक्षरिक ओ़ । लक्ष्मीबाई-चरित में इसके निम्न रूप मिलते हैं ।

ओ का प्रयोग :-

शब्द के आदि में :- ओवद-252, ओछो-252, ओलम सें-252, ओली-252

शब्द के बीच में:- चोबोल-184, टटकोरै-184, टोर कें-185, जोधन को-186, होय सुराज-187

शब्द के अन्त में:- गोला-बारूद लगालो-187, जुरबालो-187, लयैंरहओ-187, दिओ सहारो-187 ।

"औ" का प्रयोग :- यह अर्ध विवृत पश्च स्वर है । इसके उच्चारण में मूल स्वर "ओ" की अपेक्षा ओंठ कम खुलते हैं । इसके दो सहस्वन हैं- औ, औं । संयुक्त स्वर में इसकी स्थिति अ + उ तथा अ + ओ है । लक्ष्मीबाई चरित में इसके प्रयोग-

शब्द के आदि में :- औघट-252, औचक-252, औसर-252

शब्द के मध्य में :- भौतक अड़ी लगाई-171, चौथे लछमी दार समार-173, दमचौर-1[illegible]

शब्द के अन्त में :- करिऔ परचा-34, ऊँचौ-171, हिऔ चौगुन-41, बढ़ौ-171, अँड़ भरौ-171

अनुस्वरित "औ" :-

शब्द के आदि में:- कौंकेल-253, टौंचना-255, टौंन-255, टौंको-255

शब्द के बीच में:- कानौं डारैं-174, तिरछौंय-178

शब्द के अन्त में :- जितनौं-189, तपिआनौ-181

अनुस्वरित रूप में "औ" के प्रयोग:-

शब्द के बीच में:- हिचौंन-184, सौंपौ-173, पौंची बण्डेरा-180, दौंचै-182, पौंचाय-184

शब्द के आदि में:- औंठ बिदकौंय-32, औंदै-252, औंड़ छे दार-173

शब्द के अन्त में:- लुभौनौं गात-32, सलौनौं रूप-32

अनाधरिक "औ" तथा "ओ" का उच्चारण और प्रयोग लक्ष्मीबाई-चरित में मिलता है । और इसे कवि ने अपनी तरह से व्यक्त किया है ।

अनाधरिक "ओ" अथवा ओ का वह रूप जिसमें वह ओ दीर्घ की अपेक्षा निचले स्तर से बोला जाता है लक्ष्मीबाई-चरित में वँ के रूप में बोला जाता है । जैसे-हमावँ-109 यहाँ पर बोला जाता है x हमाओँ । इसमें दीर्घ आकार की मूल ध्वनि की अपेक्षा ह्रस्व रूप में बोला जाता है और "ओ" ध्वनि भी मूल ध्वनि की अपेक्षा ह्रस्व रूप में बोली जाती है । कवि ने इसे "आवँ" के रूप में व्यक्त किया है । इसी तरह का उच्चारण "सबवँ §सबओँ -सभी-256§ बुरवँ §बुरा-130§ बुरओँ, गवँ§210-गओँ §, भवँ-261 भओँ, कवँ §कहा-201 कओँ, नावँते-189, नओँ ते §तंत्र-मंत्र जानने वाला§, दवँ-169 उतर दवँ- उत्तर दिया-दओँ, रवँ-26, रओँ -रहो-रहा, भवँ§हुआ-211§x भओँ §हुआ-211§ भओँ - लवँ §लिया-208§ लओँ, गवँ §गया-195§गओँ आदि में मिलता है । इसी प्रकार कवि ने "ओ" स्वर को ओँ के रूप में व्यक्त किया है । पीछे कहा जा चुका है कि "औ" का उच्चारण दो प्रकार से व्यक्त होता है-औ= ऊ + आ, अ + ओ ।

ऊँ + आ जैसा उच्चारण दउँआ-182 दौँआ तथा कटउँआ-174 कटौँआ, दिखउँआ-196, दिखौँआ तथा अ + ओ का उच्चारण उरओन-200 अ + ओँन में मिलता है । दौर-पदौर-198 में भी यही उच्चारण है ।

ई ए = उतकीले-68, रीते-104, पीरे-31, पछीतें-41, तीजे-45, तलीके-46

ई ऐ = तरीचैं-171, मीतैं-41

ई औ = पीबौ-102, रीतौ-29, बीतौ-29, तीकौ-30, सजीलौ-32, मीठौ-40

उ अ = उमगा-19, तुम-20, मुखड़-20, निउर-20, पुचकारैं-20, उचकायँ-20,

= घटस्अन-20, तुतरात-21

उ आ = तुमारी-20, तुहात-20, गुलॉर-20, जुड़ायँ-20, तुमाउनी-21, उथापुचेल-21,

= उजात-22

उ इ = उजिआरैं-20, स्नहुनिआय-20, दतुलिआँ-21, लहुदिया-21, गुइँअन-21,

= हगिआले-21, हुदिआ-25, दुधिअन-24

उ ई = दुबीच-23, छुटी-48

उ उ = घुरुया-21, घुरुवाय-24, हुरुआइँ-24, कुटुआँय-84

उ ए = कुंदिले-19, उथापुचेल-21, जुदे-24, पुरेत-31

उ ऐ = हुअैं-28, रुपै-22, उतै-24, तुपैंच-24

उ ओ = उदोत-21

उ औ = कुकौ-29, तुतौ-30, तुलौ-34, तुडौल-36, जुटौ-36

ऊ अ = पूरनमासी-20, ऊलत-20, मूँड, तूरमा-22, तूरन-22, तूक-24, गूद-24,

= दूनर-25, मूसर-26

ऊ आ = छूटा-20, घूरा-20, घरघूला-21

ऊ ई = पूजीं-20, ऊबी-21, पूँछी-24, तूदी-27, भूँकी-27, ऊँघी-41

ऊए = फूलें-20, पूरे-36, तूबेदार-45, दूजे-45, मूतेतुरन-46

ऊ अे

ऊ ऐ = बिठूरै-20, बंदूकैं-189, पूछैं-22

ऊ औ = रूठौ-21, दूनौं-25, कूटौ-25, तूनौ-35

ए अ = देबलोक-21, तेज-22, पछेल-22, सेलन-23, लेजम-23, हेत-31, रोह-44, गनेस-45

ए आ = अेंचातानी-27, रेता-21, बेजाँ-21, बेजार-25, पेला-43, बेपार-43,

= तूबदार-45

ए इ = दो-देरि-आ

ए ई = रिमबेदी-45, हवेलीं-47, कुंदेली-48, झरबेरी-86, बेटी-86

ए उ = पेतुआ-20

ए ऊ = फिकेरूं-132

ए ए = जेठें-42, उपदेसें-85

ए ऐ = खेलैं-23, देखैं-23, परेखैं-29, लेखैं-34

ए ओ = देखो-44

ए औ = देखौ-23, लेखौं-26, खेलौं-26, पठेलौं-27

ऐ अ = जेब-26, ऐंठ-26, पैल184, ऐंड-171, ऐंगर-176, ऐंन-183, मैदन्ना-23

ऐ आ = फैंका-183, कैंमातिन-176, बैठार-23, पलैंचा-24, हैरान-25, पैला-28

ऐइ = अंबैई-33, तैंई-25

ऐई = कैसी-21, बैठीं-52, बनैंती-30, ऐसी-36, भैरी-41

ऐउ = परेउँ-20

ऐऊ = कैबू-28

ऐए = ऐंड़े-145, बैड़े-145, ऐसैं-252, तिकैबे-22, फैलें-23, भैसें-24, बैठे-32

ऐऐ = बैचें-21, कैसें-22, छिपैहैं-24, लैकें-35, पैलें-35, नैचें-42

ऐओ = ऐसो-176

ओअ =होंनहार-20, उदोत-21, तिरछोंय-178, बोलन-22, चटकोलन-22, मरोर-22,
= फोर-24, रोट-27

ओआ = टोंटा-189, जोधा-21, घोरा-22, होवाय-36

ओइ = जोतिस-34, चोलिअन-153, गोरिआँ-89

ओई = बोली-21, ओली-252, धोकी-32

ओउ = कोउ-23, लोउ-23, सोउँ-25

ओए = हरबोले-19, कोकिल-253, मोरें-26, टोपे-24, तोरे-25, सोले-28,
= चोखे-32, टोरे-45

ओऐ = रोकैं-20, टटकोरें-184, होबैं-148, धोमैं-27, होजें-31, जोरें-36,
= कोदें-46

ओओ = मोरोपन्त-20

ओऔ = ओछौ-252, छोड़ौ-27, जोरौ-32, चोखौ-34

औअ = भलौंयँ-20, लौंड़-21, बौंन-21, पौंच-183, मौतक-171, औघट-252,
= चौकस-23

औआ = औतान-20, पौंचाय-184, दौराके-23, तकरौंदा-23, पौड़ारे-23,
= खौंटा-24, दौरानैं-28

औइ = पौंपिआँ-20, टौरिया-23, मौड़ियन-24, जौइ-34, पौंरियाँ-41

ओ अ अ अ इ = पोंचतनई-32

ओ अ इ अ अ = तोपथिअन-203

5. छ: स्वरों का संयोग:-

अ अ अ अ आ अ= हड़बड़पाट-172

अ अ अ अ आ ओ= हड़बड़आबो-180

अ अ अ अइ आ = मनकरनिका-94

अ अ ई आ अ अ= लायचीदाँनन-58

अ अ उ इ अ अ = पचकुइंअन

अ उ आ आ अ अ= बरुआसागर-171

इ अ इ अ आ ओ= हियकियआबो-206

इ अ इ अ आ ओ= हिलबिलयाबो-207

-----xxxx-----

इस प्रकार लक्ष्मीबाई-चरित में सभी स्वरों के संयोग मिलते हैं । स्वर-संयोग की स्थिति दो स्वरों से लेकर छह स्वरों तक है । इस स्वर-संयोग से कई निष्कर्ष निकलते हैं ।

o स्वर संयोग शब्दों के प्रारम्भ, बीच तथा अन्त में भी मिलता है । इस प्रकार के उदाहरण कवि द्वारा दो स्वरों के संयोग अ-इ, आ-ई,अ-उ, आ-ए, अ-ऐ, आ-ऐ,अ-ओ, अ-ओ, आ-ओ, आ-ओ, आदि के साथ अधिक प्रयुक्त किये गये हैं ।

o कवि ने सजातीय स्वरों तक के प्रयोग किये हैं । अ-,अ,आ-आ, इ-इ, ई-ई,ए-ए, ओ-ओ, औ-औ तक के उदाहरण मिलते हैं ।

o कुछ स्वर-संयोग ऐसे हैं जो लक्ष्मीबाई-चरित में उपलब्ध नहीं होते हैं और कुछ के उदाहरण बहुत थोड़े मिले हैं । ई-इ, ई-ओ, उ-उ, ऐ-ओ के स्वर-संयोगों का प्रयोग कवि ने नहीं किया है । इसी प्रकार ई-ऐ, ए-इ, ए-ई, एऊ, ए-ए, ए-ओ तथा ओ-इ के एक-एक, दो-दो उदाहरण उपलब्ध हुए हैं ।

o स्वरों का संयोग व्यंजनों के पहले तथा बाद में और कहीं-कहीं व्यंजन-विहीनता की स्थिति में भी लक्ष्मीबाई-चरित में मिलता है । अकइ, समयो, करये, जितेक, कारीगर आदि व्यंजनों के साथ स्वर-संयोग मिलता है और आइ, अईं, आए,

0 ऊपर कहा जा चुका है कि बुन्देली का रुझान अनुस्वरित ध्वनियों के प्रयोग का है । इस तथ्य की सत्यता संयुक्त ध्वनि ग्रामों में अनुनासिक व्यंजन ध्वनिग्राम "न" की भूरिशः प्रयुक्ति है । उन्नयासी मूल शब्दों में इस नासिक्य ध्वनि का संयोग रूप में प्रयोग किया गया है । संघर्षी व्यंजन ध्वनि स के साथ "न" की संयुक्ति ग्यारह शब्दों में हुई है और ह संघर्षी ध्वनि के साथ तीन शब्दों में अर्ध स्वर य के साथ केवल एक स्थानपर । अन्य नासिक्य व्यंजन-ध्वनि म,ण तथा ङ. के ध्वनिग्रामों का संयोग सत्ताईस शब्दों में हुआ है ।

0 अर्ध स्वर य तथा न के साथ स्पर्शी, संघर्षी, पार्श्विक, लुण्ठित और अनुनासिकों का संयोग क्रमशः बीस, चार, दो, एक तथा एक शब्दों के साथ हुआ है । पार्श्विक तथा स्पर्शी और स्पर्शी तथा संघर्षी व्यंजन ध्वनि ग्रामों का संयोग मात्र एक-एक शब्दों के साथ हुआ है । इससे शब्द-प्रयोग के प्रति कवि के रुझान का पता चलता है । एक तो कवि की रुचि संयुक्त शब्दों के प्रयोग की ओर वैसे ही कम है, उसमें भी उसने स्पर्शी व्यंजनों के साथ नासिक्य ध्वनि ग्राम न कार द्वारा निर्मित शब्दों का प्रयोग अधिक किया है ।

समस्त पद -

संयुक्त वर्णों की तरह "लक्ष्मीबाई-चरित" के कवि ने समस्त पदों के प्रयोग द्वारा अपनी भाषा को बोझिल नहीं बनाया है ।"लक्ष्मीबाई चरित" में तत्पुरुष समास का प्रयोग अधिक किया गया है । कुछ उदाहरण द्वन्द्व और द्विगु समास के मिलते हैं । बहुव्रीहि और अव्ययी भाव की उपस्थिति अत्यल्प है । लक्ष्मीबाई-चरित की भाषा समास बहुला नहीं है । समस्त पदों का प्रभाव वहीं किया ब गया है जहाँ पर कवि को विवश होकर संस्कृत तत्सम पदावली का सहारा लेना पड़ा है ।

तत्पुरुष समास-

लक्ष्मीबाई-चरित में तत्पुरुष के सभी भेद मिल जाते हैं ।

गनपत-मन्दिर-62, देव-थापना-62, वचन-तुमारी-63, गंगा-तट, गंगा-जल, गंगा-तीर,-18, मिहल-बगीचा-74, मिहल-बास-238, बीरसिंह-चरित-123, । ये सब षष्ठी तत्पुरुष के उदाहरण हैं ।

कीरत-करनी-61, मनु-गंगाधर-60, इक-दुवे-60, रात-दिनां-61, सरंजाम-सवाट-63 बूढ़े-अधबूढ़े-63, बरछीं-तरबार-123, मईअन-मईअन-124, गैल-गली-118, मोंती-चूही-96, सुन्दर-सुन्दर-96, ऊँच-नीच-91, तन-मन-91, जात-पाँत-92, राम-रहीम-91, दावँ-पेंच-89,

तीर-तमंचन-89, नाच-गान-89, ढुलक-नगरिआ-81, आला-उदल-78, नचबो-गाबो-76 नट-बहेलिआ-66, मढ़-मन्दिर-66, दस्तकार-कारीगर-48, । इन समस्त पदों में द्वन्द समास हैं । लक्ष्मीबाई चरित के कवि ने द्वन्द्व समास का प्रयोग बहुत अधिक किया है ।
अकूत-सम्पदा-224,

अदबूढ़े-63, कलित लेखना-60, पीताम्बर-69, राजमुकुट-36, सुफलकारज-36, घनगरज-209, नीलकण्ठ-180, मटया-180 । इन पदों में कर्मधारय समास है । अव्ययी भाव समास का लेखक ने कम प्रयोग किया है । फिर भी इसके कुछ उदाहरण लक्ष्मीबाई चरित में मिल जाते हैं ।

भाँत-भाँत, जथा जस्थान-69, अदपेटाँ-195, घरी-घरी पै-139, अनुकूलैं-75, अनाचरन-72, अचौरत-168, अनरीत-167, औघट-125, औगुन-228, निचिन्त-204, निरदोषी-223, परपाटी-29, प्रतच्छ-80, अनोपान-62 । लक्ष्मीबाई-चरित ने उपसर्गों का सहारा लेकर अपनी भाषा को तत्सम या साहित्यिक बनाने का प्रयास नहीं किया है । इससे उसकी भाषा ठेठ बनी रही है । द्विगु समास के उदाहरण संख्यावाची शब्दों के साथ मिलते हैं जैसे चौ मंजला, तिमैला, सत मंजला, पचकुईंआँन, चौमुखी आदि । अन्य उदाहरण इस प्रकार हैं ।

दो पच्छन-147, दो महला-46, नो असवार-29, पाँचउँअन-135, दूनी होंस-229, चारउँ कोदें-46, चारउँ दिसाँ-136, चौगिर्दे-152 आदि ।

<u>बहुब्रीहि .</u>

भागीरथी सुता-29, कुलबधू-30, सदासिव-30, तेजबन्त-31, श्रीमन्त-31, निरधन-35, गुनबन्तीं-35, राजेसुरी-40, मुरलीधर-48, कुटिलआंनों-50, श्याम चौपरा-54, रूपबन्त-62, गंगाधर-83, नाटकसाला-90, जागीरदार-92, रनबासन-95, नरसिंघ-104 गुनबान, तेजबान-105, सिरपेंच-262, सीमन्ती दस्तूर-262, निरद्वन्द-234, पूरनपुरी, श्रीखंड, फुलबाग-240 ।

<u>सन्धि</u>

"लक्ष्मीबाई-चरित" में सन्धियों का प्रयोग बहुत कम किया गया है । बुन्देली में दो स्वर निकट रहकर अपनी पृथक उपस्थिति बनाये रखते हैं । उनमें किसी प्रकार का ध्वनिगत परिवर्तन नहीं होता है इसलिए बुन्देली में सन्धियों की सम्भावनाएँ वैसे भी कम है । उधर कवि की प्रवृत्ति ग्रामीण बुन्देली के के प्रयोग की होने के कारण उसने संस्कृत तत्सम शब्दावली या संस्कृत-व्याकरण के नियमानुसार होने वाले ध्वनिगत

परिवर्तनों को स्वीकार नहीं किया है । विसर्गों या पंचम वर्णों का प्रयोग बुन्देली में अपवाद रूप में ही होता है । दो व्यंजनों के निकट आने से उनमें उच्चारण के कारण जो परिवर्तन होते हैं बुन्देली में वे सन्धि का रूप धारण नहीं कर पाते हैं । फिर भी कुछ संस्कृत शब्दों और प्रत्ययों के योग से बने बुन्देली शब्दों में स्वर सन्धियों की विभिन्न स्थितियाँ मिलती हैं ।

स्वर सन्धि -

अनाचार - अन् + आचार दीर्घ सन्धि-31 अनाचरन- अन-आचरन-72 पीताम्बर- पीत + अम्बर-69, सिंघासन- सिंघ + आसन§स्वर दीर्घ सन्धि§-70, । बुन्देली प्रत्ययों के योग से भी कहीं-कहीं दीर्घ सन्धि हो जाती है जैसे पिआनैं-पिअर+ आनैं-81, हुरयारो-81- हुरया + आरो = हुरयारो । इस प्रकार के शब्द और भी हैं । किन्तु लेखक ने सन्धियों के किसी विशेष नियम का पालन नहीं किया है । कई स्थलों पर दो स्वरों की पास-पास उपस्थिति है किन्तु वहाँ किसी प्रकार की सन्धि नहीं होती है । घुरुआई-24 यहाँ पर घुर + उ + आई में उ तथा आ के मिलने की पूरी सम्भावना थी किन्तु दोनों में सन्धि नहीं हुई । उ + आ मिलकर व नहीं हुआ । अगर सन्धि होती तो शब्द बनता "घुर्वाई" । इसी तरह के अन्य शब्द हैं परिअक §इ + अ§-32, नौअक §औ+अ§20, सिआनी §इ +आ§ ,लरकइ §अ+इ§-30, पेतुआवु-30, करिअै, रईअत-31, भरउँआ-53, भी इसी तरह के शब्द हैं ।

व्यंजन सन्धि

"लक्ष्मीबाई-चरित" में इसके उदाहरण अत्यल्प मिलते हैं । वे अकस्मात् इसमें आ गये हैं क्योंकि व्यंजनों में इस कारण जो परिवर्तन होते हैं उन नियमों का पालन लेखक ने अपने काव्य में नहीं किया है ।

उच्चार-35, उत् + चार §व्यंजन सन्धि- त के बाद च के कारण हुआ परिवर्तन§, जगन्नाथ-194, - जगत् + नाथ= जगन्नाथ । किन्तु इनका प्रयोग संस्कृत तत्सम शब्द के रूप में कवि ने किया है किसी सन्धि के नियमों के अनुपालन के लिए नहीं । होज्जात-109,- इस शब्द होत + जात है में सन्धि तवर्ग के बाद यदि जवर्ग हो तो तवर्ग जवर्ग के उसी वर्ग में बदल जाता है । इस तरह के दो उदाहरण हैं । उच्छव-178 और अच्छरी[51] ऐसे शब्द हैं जिनमें सकार छकार में और तकार चकार में बदल जाता है- उत्सव, अप्सरा । एक शब्द जरूर ऐसा मिला है जिसमें उच्चारण काल में "अ" की उपस्थिति का भान होता है । यह शब्द है- भौदिआँसें-160 । इस शब्द के

उच्चारण के समय मों के बाद अकार की उपस्थिति अस्फुट रूप में ही सही प्रतीत होती है । इस प्रकार लक्ष्मीबाई-चरित में सन्धियों का अधिक क्या नहीं के बराबर प्रयोग हुआ है ।

रूप-विचार : शब्द-रचना

शब्दों का एक भेद विकारी तथा अविकारी है । लिंग, काल और वचन के अनुसार जिन शब्दों में परिवर्तन आ जाता हैं उन्हें विकारी और जो सभी स्थितियों में विकार रहित रहते हैं उन्हें अविकारी कहते हैं । अविकारी में क्रिया विशेषण, अव्यय , सम्बोधन, समुच्चबोधक और सम्बन्ध-बोधक शब्द आ जाते हैं । यहाँ पर सर्व प्रथम विकारी शब्दों अर्थात् संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया पदों का अनुशीलन किया जायगा । पीछे कहा जा चुका है कि शब्दों के रचना की दृष्टि से रूढ़ और यौगिक दो भेद होते हैं । लक्ष्मीबाई-चरित में दोनों प्रकार के शब्द मिलते हैं ।
रूढ़- पटा-30, पाग-50, हटे-192, टोर-128, टरे-82, गहा-35, माध-87, भरम-112 आदि यौगिक- तुलनभर-87, निबला-205, तिरबेनी-93, धरनमाता-236, अन्नधान-169 आदि । लक्ष्मीबाई-चरित में यौगिक शब्दों की रचना में कवि ने या तो मूल शब्द में एक या एक से अधिक उपसर्ग-प्रत्यय जोड़कर काम चलाया है अथवा दो शब्दों को मिलाकर उनकी रचना की है । कहीं-कहीं कवि ने शब्दों की आवृत्ति के आधार पर भी शब्दों को बनाया है ।

प्रत्यय-जोड़कर - मूल शब्द में एक या एक से अधिक उपसर्ग और प्रत्यय जोड़कर- निहते-139 नि + हते- ए - निहते निहत्थे करें- खाली हाथ करके ।
उतपातु-16। उत + पात + उ = उतपातु {विपत्ति, अन्याय}
अभागी-85 अ+भाग + ई = अभागी {भाग्यहीन}
निपोरें दाँत-3। नि + पोर + ऐं निपोरें {दाँत दिखाना, अपनी स्थिति का बोध करा देना}
ललथरयात-241, ललथरया + आत ललथरयाते हुए पैरों से आना ।
गुँगिआनैं-88- गूँगा + आनैं = गुँगिआनैं {छाना}
दो या अधिक शब्दों से निर्मित शब्दों को समास कहा जाता है । इन पर पीछे विचार किया जा चुका है । लक्ष्मीबाई-चरित में तत्पुरुष समास का ही प्रयोग अधिक है । शब्दों की आवृत्ति से बने शब्दों का विश्लेषण आगे पुनरुक्ति युक्त शब्दों के साथ किया जायगा ।

शब्द रचना और उपसर्ग

स्रोत की दृष्टि से उपसर्गों के दो भेद हैं- 1. तत्सम, 2. तद्भव । इन दोनों उपसर्गों का भाषाओं की दृष्टि से संस्कृत से आगत तत्सम, तद्भव और अरबी-फारसी फारसी से आगत तत्सम, तद्भव इन दो वर्गों में विभाजन किया जा सकता है । लक्ष्मीबाई-चरित में संस्कृत और तद्भव उपसर्गों का प्रयोग अधिक किया गया है । कवि ने अंग्रेजी तथा अरबी-फारसी या मराठी के जिन शब्दों को अपनाया है उनमें उपसर्ग बुन्देली अथवा संस्कृत के जोड़े हैं ।

तत्सम उपसर्ग

संस्कृत- आगत-

संस्कृत से आये उपसर्ग जिनका प्रयोग केवल तत्सम शब्दों में हुआ हो अथवा तत्सम, तद्भव दोनों में हुआ हो अथवा केवल तद्भव शब्दों में हुआ हो ।

तत्सम शब्दों में प्रयुक्त उपसर्ग

लक्ष्मीबाई-चरित में तत्सम शब्दों में प्रयुक्त उपसर्गों की संख्या ग्यारह है । इनका प्रयोग कवि ने इन शब्दों में किया है-

अ = §नकारवाची§
= = अकाल, अपार-22, अधीर-22, अकुल-50, अभागी, अहल्या-85 आदि में

आ = §पूर्णता द्योतक§
= आनन्द कन्दा-56

उद् = ऊपर, उत्कर्ष
= उच्चार §मुखरता से उच्चारण करना§-35
= उत्तर-24

उप = निकटता, सहायक
= उपचार-69

नि = भीतर, नीचे, अतिरिक्त
= निदान-129

निर् = रहित, बाहर
= निर्बला-238, निरधार-135

प्र - अधिक, आगे, ऊपर प्रद्य सत्कार-35

प्रजा-125, प्रताप-22

वि - भिन्नता, हीनता, असमानता, विशेषता,

विलास-123, विद्रोह-123

सम् पूर्णता, संयोग

संस्कार-183, संसार-18, सम्मत-62

सु-स श्रेष्ठता और साथ के अर्थ में

सुरक्षित-49, सुराज-143, सुरेख-41, सुफल-36, सुकार-41, सुन्दर-208

<u>तत्सम तथा तद्भव शब्दों में</u>

अ §निषेध§	तत्सम	अमर-22
	तद्भव	अटूट-236, अछत"63, अमानुस-141, अनीति-78
आ §पूर्ण§	तत्सम	आरम्भ-236
	तद्भव	आसिरन-34
उद् §ऊपर§	तत्सम	आसिरन-34
	तद्भव	उतर-145, उच्चान-39
उप	तत्सम	उपचार-59
	तद्भव	उपदेसें-85
निर्	तत्सम	निरधार-135
	तद्भव	निबारौ-81, निबाँधे-61, निरमान-56
सम्	तत्सम	संस्कार-183
	तद्भव	सन्जम-48, सन्मान-45, सन्तोक
सु	तत्सम	सुन्दर-208, सुकर-41
	तद्भव	सुफलन-36, सुगर-30

<u>तद्भव शब्दों में</u>

तद्भव

अन §नहीं§ अनाचरन-72, अनचार-35, अनरीत-167, अनअनर्याँय-288

अद§अर्ध§ §आधा§ तद्भव उपसर्ग + तद्भव + तद्भव + तद्भव + तद्भव

तद्भव अदबूड़े-99, अदमरे-183, अदपेटों-195, अदबीचे-88

तत्सम + तद्भव

अनु §पीछे§ अनुकूलें-75

तद्भव

तद्भव

कु (तद्भव शब्द में) तत्सम + तद्भव
कुचालैं-169, कुमाता-54

चौ तद्भव चौरस्ता, चौ बोल

अरबी-फारसी से आगत उपसर्ग -

लक्ष्मीबाई-चरित में इन उपसर्गों की स्थिति इस प्रकार है- कवि ने अपने काव्य में अरबी-फारसी के कुछ शब्दों का प्रयोग तो अवश्य किया है किन्तु इनके उपसर्गों का प्रयोग उसमें अधिक नहीं किया है । लक्ष्मीबाई-चरित में मात्र बे, बा, बि, सर, सिर तथा हर उपसर्ग मिलते हैं- जिनका उपयोग लेखक ने अरबी-फारसी से आगत तद्भव शब्दों के साथ किया है ।

बे- (बिना, रहित) प्रतिकूल तद्भव
बेगौंत-259
बे-बन्देज-259
बे जाँ-259
बेजार-259 , बेईमान-108

बा- सहित, तद्भव
बा जोर-258

बि- रहित, बिना बिचारें-259
बिचाहें
बिचको-259
बिबूँचे-259

सर, सिर - ऊपर, श्रेष्ठ तद्भव
सिरकार-82
सिर पाँच-262
सिर पेंच-262

हर हरकारो-262

दर दरबारैं-114

उपर्युक्त उपसर्गों में बि तथा सर उपसर्ग ऐसे हैं जिनका प्रयोग लक्ष्मीबाई-चरित में हिन्दी शब्दों के साथ किया गया है । निः उपसर्ग ऐसा मिला जिसके तद्भव रूप निस का प्रयोग कवि ने फिक्र शब्द के तद्भव रूप के साथ निसफिकिर-163 के साथ

किया है ।

ऊपर दी गई तालिका से यह निष्कर्ष निकलता है कि संस्कृत के तत्सम उपसर्ग अ, आ, उद, उप, नि, निर, प्र, वि, सम, सु-स को प्रयोग लक्ष्मीबाई-चरित में केवल संस्कृत से आये तत्सम शब्दों के साथ किया गया है । अ, आ, उद, उप, निर, नि, सम, सु, तत्सम उपसर्गों का प्रयोग संस्कृत से आये तत्सम तथा तद्भव दोनों शब्दों के साथ किया गया है । अनु, अद {अ}, अम, औ, उन, पर {प्र}, पर {परि}, नि {निर, निः}, दुर, कु, वि, बिन, स्व, सर, बि, यो, ऐसे तद्भव उपसर्ग हैं जिनका प्रयोग लेखक ने अधिकतर तद्भव किन्तु कहीं-कहीं तत्सम शब्दों के साथ भी किया है । विदेशी भाषा अरबी-फारसी से आये सिर्फ से, बे, बो, वि, सर, सिर, हर, दर, उपसर्गों का ही प्रयोग कवि ने अरबी-फारसी से आये तद्भव शब्दों के साथ किया है ।

शब्द-रचना और प्रत्यय-

लक्ष्मीबाई-चरित में कवि ने शब्द-रचना के लिए हिन्दी और संस्कृत के अनेक प्रत्ययों का उपयोग किया है । अरबी-फारसी और बुन्देली में प्रचलित कुछ विशेष प्रत्ययों का योग भी लक्ष्मीबाई-चरित में मिलता है । इस प्रकार के प्रत्ययों का उल्लेख व्याकरणिक कोटियों के विवेचन के समय आगे किया गया है । लक्ष्मीबाई-चरित में शब्द-रचना की दिशा बताने के लिए यहाँ कुछ प्रत्ययों को दिया जा रहा है-

मूल क्रिया-धातुओं में जिन प्रत्ययों को जोड़कर शब्द बनाये जाते हैं उन्हें कृदंत तथा मूल-क्रिया-धातुओं के अतिरिक्त शब्दों में प्रत्यय जोड़कर जो शब्द बनते हैं उन्हें तद्धित कहा जाता है । डॉ० हंस ने कृदन्तों को विकारी तथा अविकारी दो रूपों में बाँटा है । विकारी कृदन्त प्राय: संज्ञा अथवा विशेषण शब्दों के अन्त में प्रत्यय लगाने से बनते हैं और अपने लिंग-वचन के अनुसार इनमें परिवर्तन आ जाता है । उन्होंने बुन्देली में इनके सात प्रकारों की चर्चा की है ।लक्ष्मीबाई चरित मेंयेइस प्रकार बनाये गये हैं {पृष्ठ-282, बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप} ।

1. भाव वाचक कृदन्त- इनमें मूल क्रिया ही भाव-वाचक संज्ञा का रूप धारण कर लेता है ।

0 लक्ष्मीबाई-चरित में भाव वाचक कृदन्त कहीं-कहीं मूल क्रिया के अन्तिम वर्ण का लोप करके बनाया गया है जैसे-- अड़ोंवें-178, अकड़-178, ऐंठ-26 आदि ।

0 धातु में आव प्रत्यय लगाकर- गहावें, करावें-138, चढ़ावों, पेलावें, छुड़ावें, जावें, उसकावें-84, बरकावें-138, अटकावें-139, आदि ।

0 धातु में आई अथवा प्रत्यय जोड़कर- लुटाई-148, अटकों-181, धाई-83, चढ़ाई-129,

लरवाई-33।

0 धातु में न प्रत्यय जोड़कर - अंठन-184, इण्आन-178, उफान-89, उड़ान-88, दिपन-20, मरन-20, दमकन-20, सरकन-20, खेलन-26, तुलन-30 आदि। हंसन, मिलन, बोलन, चटकोलन कृदन्त भी इसी श्रेणी में आते हैं।

0 धातु के अन्तिम वर्ण के बाद त लगाने से- अड़ुयात-173, मर-मरात-175, तनुतनात-181, मरत-9।

0 धातु में आन प्रत्यय लगाकर- उमगान-218, हरकान-21, गान-22, दिखान-25, करबान-174, बतयान-174, घिरआन-174, लगान-174, कटवान-175, उमगात-178, पुजान-179, करान-179.

0 कुछ भाव वाचक कृदन्त मूल धातु में आनैं प्रत्यय लगाने से बनाये गये हैं- निअरानैं-81 पिअरानैं-81, दगरानैं-81, डरानैं-81, पिरानैं-81, बगरानैं-81, आनैं-174, घानैं-, हनैं-174, टोरैं-175.

0 लक्ष्मीबाई-चरित के कवि ने कुछ भाव वाचक कृदन्त मूल धातुओं में बो प्रत्यय लगाकर बनाये हैं-- घालबो-23, कहबो-25, समजाबो-33, मरबो-20, कुछ को वे प्रत्यय लगाकर बनाया है-- मरबे-181, खिताबे-45, खेलबे-24, बैठबे-25, पचैबे-24, दोराबे-23, पूजबे-179, लुआबे-179, बतयाबे-174, करबे-174

<u>कर्तृ-वाचक कृदन्त.</u>

लक्ष्मीबाई-चरित में कर्तृ वाचक कृदन्त, इया, उँआ, ऐल, इलगाकर बनाये गये हैं- गबईआ-34, मरउँआ-53, भगैल-24, पुजाई (पुजारी)-196, आदि। कुछ कर्तृवाचक कृदन्त आउँ प्रत्यय लगाकर बनाये गये हैं - टरकाउँ-45, निमाउँ-45, इसी तरह के उदाहरण हैं। रुऔसी-53, चितेरे-59, लिखबईआ-72। इस कोटि के अन्य कृदन्त हैं- उचक्का-227, नचकिन-28, दिखनौंतु-149 आदि।

<u>गुणवाचक कृदन्त</u>

लुभौनों (लुभाने वाला रूप)-32, "लुभौनों गात अनूप" बाचाल (अधिक बोलने वाली), हो गइ है बाचाल नैंक-34, दिखनौंतु (दर्शनीय) दिखनौंतु बदन, तेज-तरताज-36, लबीलो (लगा हुआ) लबीलो न कबनकोब-70

हिलाबी (7) नचकान (नाचती हुई) नचकान मोर तरसाबे-86, नचनीं (नाचने वाला), हतो करेरा नचनीं पुतरा -92

उपर्युक्त धातुओं में औनों, आल, औंतु, ईलो, कान तथा नीं प्रत्यय लगाकर कवि ने

भोगें बैठे ते गोरन कौ दुस्टीपन-196 {भोगे हुए}

टटकोरे {खोजता था} टटकोरे चतुरई सें इत कौ उत करकें-184

मार {मार कर} बन गयें मिन्त खुसामद मार-184

डूबो {डूब जाना} डूबो सहर सोक-सागर में-107

परी {पड़ना} सबरें सूनर परी दिखात-107

ढरीं-ढरीं {ढलकर} मुरकौ तेज, बदन पिअरो-सौ, आँखि ढरीं-ढरीं मुरझ्याईं-100

कढ़ीं {निकलीं} रानी कढ़ीं सोर सें बाहर-100

कुड़कें {कूद कर} अलीबहादुर के मिहलन में रईअत कुड़कें आग लगाई-184

छुटक्कें {छूटकर, मुक्त होकर} जाँ चायँ छुटक्कें जावें-163

सुनकें {सुनकर} खिंचौ सनाकौ फौजिन में सुन कें रानीं के बचन कठोर-142

झटको {झटक कर} पकर हाँत झटको, खैंचो, पटको अपनें घुरखा पै डार-162

करण वाचक कृदन्तों के भी कुछ उदाहरण लक्ष्मीबाई-चरित में मिलते हैं-

झूलन {झूला} झूलन झूलें धनिआँ फूलें, जोबन उभें उपकाबें-86

डोल {डोर ग्लास} बड़ दिनाँ हती डोल-ग्यास जल-बिहार की-146
{डुगना-चलना, हिलना}

चटनी-27

घोल-51

संज्ञा - लक्ष्मीबाई-चरित में अ, आ, इ, ई, उ, ऊ ए तथा से अन्त होने वाले संज्ञा शब्द मिलते हैं। इनमें पुल्लिंग, स्त्रीलिंग दोनों कोटियों के शब्द हैं। संज्ञा नाम पदों में लिंग, बचन तथा काल के अनुसार जो परिवर्तन होते हैं उन विकारों का उल्लेख भी आगे किया जा रहा है।

	पुल्लिंग	स्त्रीलिंग
अ	धरम-186, गम्मत-39	जोत-40 तरछट-38
	करम-186, सिद्धपीठ-39	रनभूम-37
आ	झिरना-222, साँतिआ-35 परसरटा-39	धजा-169, नगरिआँ-63, छिड़िआँ-38
	थन्ना-45, मेला-40	धरा-194, बगिआ-38, बजरिया-39
	अठखम्मा-46, चौपरा-38	नाईका-77, महआँ-38
	घोरा-134, खण्डेरा-38	टीपना-34, धरमसाला-38
इ	हरि-241	लराई-144, टोरिआ-38, राधा-38

"टा" प्रत्यय लगाकर-

कछौटा-72

झपट्टा-204

लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त अन्य भाववाचक संज्ञाएँ इस प्रकार हैं--गदबद-25, चाकरी-33, छलछन्द-145, जाँच-परख-236, झमकान-82, झारन-38, झाँक-139, झड़कार-172, झपट्टा-27, दरसन-190, दौंचन-153, धमाकौ-66, पलीता-138, फराइँ-88, फूटन-127, बिजै-196, बतबइयावें-203, भाव-125, भरभराट-175, भरोसौ-241, मिलौंनी-126, रच्छा-206, सौगन्द-242, अनमान-85, आवाहन-64, ललकार-219, ठोंग, बिपता-52, वरदान-30 आदि ।

<u>लिंग-</u>

लक्ष्मीबाई-चरित में पुल्लिं ग और सभी स्त्रीलिंग दोनों का प्रयोग हुआ है । लिंग-परिवर्तन सम्बन्धी नियमों को लक्ष्मीबाई-चरित में इस प्रकार खोजा जा सकता है ।- एक बात ध्यातव्य है कि बुन्देली में ओकारान्त की प्रवृत्ति होने से अकारान्त शब्द भी ओकारान्त ही लिखे जाते हैं ।

क. अकारान्त अथवा आकारान्त संज्ञा अथवा विशेषण शब्दों में ई प्रत्यय जोड़कर

सलोनो रूप-- सुछब सलोनीं, जन-जनीं-52

यहाँ रूप पुल्लिंग है किन्तु उसका विशेषण ओकारान्त है । इसी को जब सुछब के साथ प्रयुक्त किया गया तो विशेषण तो ईकारान्त हो गया किन्तु छबि§इकारान्त§ अकारान्त हो गई । अकारान्त होने के कारण वह पुल्लिग नहीं हुई । पहले उदाहरण में रूप अकारान्त है किन्तु उसके लिए प्रयुक्त विशेषण ओकारान्त होकर आया उसे सलोना नहीं लिखा गया है । लक्ष्मीबाई-चरित में शब्दों का लिंग निर्णय अथवा लिंग-परिवर्तन सन्दर्भ के अनुसार होता है । सन्दर्भ से अलग हटकर देखने से भ्रम होने की संभावना है । जैसे- घुर-सवार, हतयार-चलाबो, खरो बोल्बो, सबइ छिपाबें ।

इस उदाहरण में घु-सवार शब्द का लिंग निर्णय सन्दर्भ से अलग हटकर करें तो होगा घोड़े पर बैठने वाला §पुल्लिंग§ किन्तु यहाँ पर यह स्त्रीलिंग है- घुड़ सवारी करना, हथयार चलाना और खरा बोलना, यह ताँतिआ ने सभी छिपा लिया-62 .

नचनों-नचनीं §नचनीं-नचनों, साज-सबइऔं नामीं कनात्त बुलबाएँ-58

0 इआ प्रत्यय जोड़कर- मइ-मड़िआँ-49

0 एकारान्त संज्ञा शब्द में ई प्रत्यय जोड़कर §विशेषण किन्तु संज्ञा की तरह प्रयुक्त§

अरदास- अरदासैं-79, रईअत की अरदासैं रोज-79

0 इआँ प्रत्यय जोड़कर- नुगई - नुगईआँ-82 तीन नगुईआँ डार

0 इकारान्त में कहीं कहीं ऐं प्रत्यय जोड़कर-

नचकिन- नचकिनें - सात नचकिनें आईं किलें-85

0 जिन विशेषणों में इआ होता है उनमें अन लग जाता है"

गवईआ - गवईअन-85 नचनीं मोतीबाई, गवईअन जूही, रूप्पा, हीराबाई

0 कुछ अन्य बहु वचनान्त शब्द इस प्रकार हैं--

घुन, बुंदिअन, बूंदन, दादुरन, रनबेतन, बदरा, बदरा, झूलन, धनिआँ, जोबन, भौंरा, बिनो, उसर, तरु, बेलें, रतिआँ, छतिआँ, बतिआँ, बिजुरी, बोझर, बादरें, जलधारा, दिनों, गैलन, नरवा, नदियाँ, धान, काँस, बामनें, बेटीं, देबिन, भजनें-86, कलान, गाँठिन, डलिआँ, गलिआरें, रौंम, खोटन, बिआवें, बधावें, गारीं, मूसर, मुरईआँ, नारीं, तिलान, मूंगें, हर कौड़ी, सपनें, किसना, फूलन, भमरन, तीरथ-87, बिरछन, पात, बेलईआँ, मौंर, अमिआँन, झौंर, झाँझें, चौकड़िआँ, फाग, गैलें, कोंइन, मलंगा, उन्ना, रँगन, मुठिअन, बस्तिअन, बन, बिरिआँ, लाँकें, चनान, आरें, बिटिअन, गुईअन, तीकुर, लंगातिनें, नचकिनें, तरबारन, तमन्चन, जनिअन, नचकिन, नारीं-89, घरन, दासिअन, सीकें-90

उपर्युक्त बहुवचनान्त शब्दों का विश्लेषण करें यह निष्कर्ष निकलता है कि कुछ शब्दों का रूप एकवचन और बहुवचन में एकसा है किन्तु, यहाँ उनका प्रयोग बहुवचन के रूप में किया गया है । वे बहुवचनांत हैं इसका निर्णय उनके साथ प्रयुक्त बहुवचनीय क्रिया पदों तथा सन्दर्भगत अर्थ से होता है । घन, बदरा, जोबन, भौंरा, उसर, तरु, बिजुरी, जलधारा, नरवा, काँस, बिआवें, बधावें, मूसर, हर, तीरथ, पात, फाग, घर, छबा, शब्द एक वचन में भी इसी रूप में प्रयुक्त किये जाते हैं किन्तु इनके साथ आये क्रिया पदों और सन्दर्भ-गत अर्थ से इनके बहुवचनांत रूप निश्चित होता है ।

घन घेरें बाड़, गरजें बदरा, जोबन उलें, उसर हरयानें, तरु फरयानें, बिजुरी चमकें, बरसें अपार जलधारा, नरवा घुमड़ें, भए, काँस सेत-86, तीरथ अन्हाँयें-86, घर-घर बिआँव, गावें बधावें की गारीं, मूसर उठायें, बउनीं करान हर डूरें-87, फिर पात आन, फाग सुनावें -87

लक्ष्मीबाई-चरित में बहुवचन में एक ही शब्द के कई रूपों का प्रयोग हुआ है । यह विचलन बुन्देली की जीवंतता और गतिशीलता का द्योतक है ।

भौंरा- भमरन, किसना - किसनाँन, गैलें - गलिअन, जनीं- जनिअन, नचकिनें - नचनीं- नचकिन .

साधकर §से करण कारक का चिन्ही छिपा हुआ है । अन्य कारकों की स्थिति भी इसी प्रकार की है-" कुलपुरेत दिखवान" कुल पुरेत के द्वारा दिखवाने के लिए रखली । यहाँ भी तृतीय और चतुर्थी का कारक चिन्ह लुप्त है । बुन्देली में कृदन्तों के प्रयोग से कारक चिन्ह " के लिए" सम्प्रदान का आहरण कर लिया जाता है । अधिकरण कारक में भी बुन्देली में ऐ का कहीं-कहीं प्रयोग किया जाता है- "चली" बिठूरे गंगा-तीर" में के स्थान ऐ के प्रयोग के कारण संज्ञा पद में ऐ प्रत्यय लगाया गया है । हो सकता है यह संस्कृत के अधिकरण कारक की विभक्ति की ही अपभ्रंश रूप में प्रयोग हो- "बिठूरे पालिता" जहाँ कारक चिन्ह लुप्त होते हैं उन्हें वैयाकरण शून्य कारक कहते हैं । लक्ष्मीबाई-चरित में इस तरह के शून्य कारकों के प्रायः कई उदाहरण मिल जाते हैं । लक्ष्मीबाई-चरित में संबोधन के लिए हे और अरे का प्रयोग हुआ है-- "हे झाँसी सोबाँ-217 जो का अर्थ है करतार-233 ।

क्रमशः--99 पर

- प्रान बचा कें नत्थे बाँ, डीलन भग धरो मान कें हार-183
- धर दई नींउ सुराज की, रानीं उत्तर देत ।
- दक्खिन उतर्नीं दो रहो, मन में भरो कलेस ।।-185
- सुनकें सबकी आँखें बरतीं, थर-थर कपो करेजो सूर-215
- राजा नें ओली बैठारो तो, भरतन छिन दैकें आन-215
- बाबा बोले, "गीता पढ़कें, मन में काएँ करे अटकावें-242
- रानीं बोली, "पैलाँ कहँती, राव साव सें, तुमसें बीर-243
- रामचन्द्र ने पकरो घुरूवा ले कें चले कुटी की ताँईं
- उतै आएँ रगनाथ सिंघ, सुन्दर बाँ लयँ, आँखें उबराई-247

कर्म कारक-

- भोरई सें नानाय बुलान-32
- करो तीन बाँ टेर, तबई गोली आ लगी बगल में अेक-247
- अँगरेजन नें कतरे ओसान-20
- मनू छबीली बाँ बैठार-25
- लगे महाउत बाँ दुपिआन-25
- कीने देबे भाग ९-25
- दस-दस हाँती-होदा लिख दए हैं-25
- तासें तुरत जोडं कुटिआ उदेर कें तुलसी-चिता बनावें, पाँच तत्त की देह अगिन बाँ अरपो, पाँच तत्त मिलवावें-247
- उतै रोज नें लब लवें, रानीं बाँ मुरकत, घोरा अड़यात
* तुरत लगा दएँ, जिअत घेरबे, अपनें पल्टनयाँ छै-सात-246
- दाँतन बीच लगाम दाब कें, दो हाँतन दुधार तरबार-210
- भरत जाँयें कड़बे गा-गा कें, भग्गी जू की भन्जें गाँयें-210
- दतरएँ पै कुल देवें पूजबे, जाँनें मन्दिर बण्डेरावें-179
- चली सैंन, दो-तीन घरी रयें रात, बोल बण्डेरा द्वार-179

करण कारक-

- बाइसाब की पै के सुर सें झाँसी को असमेर गुँजावें-142
- दो हाँतन दुधार तरबार-210
- बाइसाब कई बोधन सें दतरएँ पै ठैंकुर पूजन जाँयें-179

- दाँतिन दयँ लगाम, दुई हाँतिन करैं दुधारा की फटकार-180
- हनैं हुमक कें, एक दावँ में चार-चार खाँ पटकैं मार-180
- लातन में धरनी धर पाटी, बाइसाब नें करकें मार-180
- टाप घाल तरुआ धर फोरे, दाँतिन भरे बकोट चबायें-181
- अँगरेजन सें कर लूटी सैंध-48

सम्प्रदान कारक-

- लरबे उमजो चौगुन चावैं-181
- अपनी गद्दी भर के लाजैं-117
- पाँच तत्त की देह अगिन खाँ अरपो-247
- बिटिआ को कारज करन कैसें होय अनोय-25
- दादा देत हते बुलवा कें असहाँयन खाँ राज सहाँय-52
- अँगरेजन नें करो फेसला, गादी दइँ गंगाधर राव-56

अपादान-

- छिन्नन तन सें बढ़ी तमेरिन-183
- बहँ सें आगें, नत्थे खाँ की फौजन को तो जबर जमावें-179
- लाल फूल मूरत सें उपटो, टपको बाइसाब के सीस-179
- आँखन सें चिनगारी छूटीं, लरबे उमजो चौगुन चावैं-181
- बैरिन खाँ धर दौंचे पाछे सें हिरदेस बिलन्दी मार-182
- सागर सिंध करी डेरी कोदन सें, तेगा की फटकार-182
- भगा मौंठ अमरा सें खेदे-45, गादी सें उतार दवँ उन खाँ-128
- कबउँ कनपटी तर सें बरकें गोली सननात कढ़ जात-181
- कलकत्ता से आव गवन्नर जण्डल को फरमान लिआरें-90
- रानी की बड़कुल आँखन सें अँसुआ टपके-94
- ओरछे सें नानाय बुलान-32

सम्बन्ध कारक-

- चरित बीर झाँसी की रानीं को-19
- झाँसी-हौदा देव मनु को मन मचलो-25
- बिटिआ को कारज करन कैसे होय अनोय-25

विभक्तियों के निम्नांकित चिन्हों को निश्चित किया जा सकता है ।

0 बुन्देली में कर्ता कारक का चिन्ह "ने" वर्तमान और भविष्य काल में प्रयुक्त नहीं होता है केवल भूतकाल के छह में से पाँच रूपों में विकल्प लगता है. अपूर्ण भूतकाल में नहीं लगता । लक्ष्मीबाई-चरित के कवि ने भी इसी नियम का पालन किया है । किन्तु उसने सामान्य भूत में भी कहीं-कहीं इस चिन्ह का प्रयोग नहीं किया है- "धर दइ नींव सुराज की रानीं उत्तर देत" तथा "प्राब बचाकें नत्थे खाँ डीलन भको" भग धरो" में । "मोरोपन्त कोप कें बोले" , "नानाराव न मानें कहबो", भी उदाहरण इसी प्रकार के हैं । किन्तु कहीं-कहीं सामान्य भूत में " ने" का प्रयोग मिलता है । जैसे- "कही पेसुआ नें" तथा "की ने देखे भाग" में ।

0 कर्म कारक में कवि ने "ए", "खाँ", "ए", "आ", खों" {आन भगाएँ गुलइँअन खाँ-44}, {ओंड़छे के गपिआएँ ठिकानें} "ऐ"- बागी किलो मान कें देखो हआे कारन्द नें लगायँ, चिन्हों का प्रयोग किया है । कहीं-कहीं कवि ने इन चिन्हों का प्रयोग नहीं भी किया है जैसे- "कतरे औसान", "दाँतन बीच लगाम दाब कें", "भग्गी जू की मन्जें गायँ" में ।

0 करण कारक के चिन्ह "सें" का प्रयोग कवि ने एक वचन के साथ सदा किया है किन्तु बहुवचन संज्ञा के साथ इसका प्रयोग विकल्प से किया है । जैसे- "दो हाँतन दुधार तलबार", "दाँतन दयें लगाम", "दुई हाँतन करें" में इस चिन्ह का प्रयोग नहीं किया गया है किन्तु "लासन सें धरनी धर पाटी", "अँगरेजन सें", "जोधन सें" में इसका प्रयोग किया है । करण कारक में कवि ने कहीं-कहीं "करकें" चिन्ह का भी प्रयोग किया है । जैसे- भगदर करकें रईअत धमकान-209 .

0 सम्प्रदान कारक में कवि ने "ए", "लाजें", "खाँ, "अ", "के काजें", "खों", "अे" का प्रयोग किया है । यथा-चिन्ने भये कारज करबे खाँ, बिटिआ बारे झाँसी आँयें-63 में । कहीं-कहीं कवि ने सम्प्रदान कारक का प्रयोग "लागर" चिन्ह के साथ किया है । यथा- "अपनी बाइसाब के लागर, कइकें करो समर झकझोर"-210 . में । "ए" का प्रयोग निम्न उदाहरण में भी है- "झाँसी के ब्यादन में अड़ गईं होड़, चढ़ावे रन में प्रान ।"

0 अपादान कारक के लिए कवि ने सर्वत्र "सें" अथवा "सैं" चिन्ह का प्रयोग किया है ।

0 सम्बन्ध कारक के लिए कवि ने का, की, के, कौ चिन्हों का प्रयोग किया है । कहीं-कहीं कवि ने "केर" तथा "क्यार" चिन्ह का भी प्रयोग किया है । यथा- बातन केर चौक सै लीप ।

0 अधिकरण कारक के लिए कवि ने "ए", "औ", मैं, "पै", "लौं" चिन्हों का प्रयोग किया है । जैसे - मौरा करौ घन गरज कौ नीचे लौं-209 ।

0 सम्बोधन कारक के लिए कवि ने "अरे, "अरी" चिन्ह का भी प्रयोग किया है ।

सर्वनाम-
=====

---000---

नाम पद में संज्ञा, सर्वनाम और विशेषणभी आ जाते हैं । संज्ञा के प्रतिनिधित्व करने वाले नाम पदों को सर्वनाम कहा जाता है । कामता प्रसाद गुरु और आचार्य किशोरीदास वाजपेयी के अनुसार इनके भेद पुरुष वाचक, निजवाचक, निश्चय-वाचक, सम्बन्ध वाचक, प्रश्नवाचक और अनिश्चय वाचक हैं । डॉ0 हरिकिशोर दीमशिल्स ने एक संयुक्त या क्रम वाचक विशेषण और माना है ।

हिन्दी में सर्वनामों की संख्या-11 है- मैं, तू, आप, यह, वह, सो, जो, कोई, कुछ, कौन, क्या । पुरुष वाचक में मैं, तू, आप, निजवाचक में आप, निश्चयवाचक में यह, वह, सो, सम्बन्ध वाचक में जो, प्रश्नवाचक में कौन, क्या, अनिश्चयवाचक में कोई, कुछ ।

बुन्देली में इसके भेद-33 होते हैं-10 मूल और 23 इसके रूपान्तर ।

लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयोग किये गये सर्वनामों की तालिका निम्नप्रकार है-

<u>पुरुष वाचक</u> मूल रूप

<u>उत्तम पुरुष</u> मैं, मोए, मो, मोईं, हम

<u>उत्तम पुरुष के विकृत रूप-</u>

उत्तम पुरुष "मैं" के लक्ष्मीबाई-चरित में विभिन्न कारकों में निम्नलिखित रूप मिलते हैं :-

0 हो जाय गुजारो हमावें, हुकम कहा दें 1-145 {हमारा}

0 इतनों हित करो हमारो-145 {बहु वचन}

0 बिरथों जात हमावें कहो तो-30

0 हम-सबकी पिन्निले पचे लहें के दउँ गोद न मोंनी जाय-108

मध्यम पुरुष तुम, तू .

कर्ता कारक-

0 हमखों सुनावें खुलकें तुम अपनों गाबो-155

0 अब तुम कहो काएँ के लाजें-141

0 तुम जुगत लगा, हरें हरें रहँअत फोरो-146

0 खटका न करो मन में, जिन मानों उनीं-146 {तुम छिपा है}

0 तुम जावें पैल दतिया बारन खों पूँछो-150

0 तुमनें बनावें अपराज के राइ- कुरा को-151

कर्म कारक-

* का तुरमाई को हो गवें तुमखों कुपचो ?-168

* का करे कोउ अब तोखों मान-224 { तुमको}

* काका जू मानत हैं मनसें तोय सबाई-28 {तुझे}

* तोय न छोड़े को मन में ठानीं उर में-217

करण कारक - × तुमसें चौगुन बढ़ो दिखावें । 202

× तुमसेंउ बड़ो और कोउ -149

× तुमसों और न कोउ दिखाय-219

सम्प्रदान कारक-

× कोंसें तुमें गहोंयें ? तुम्हारे लिए-141

× हम देहें जागीर तुमें करकें दूनीं-146

अपादान × ×

सम्बन्ध कारक-

0 रानीं तुमावें बिगारो किते ? -168

0 तोरे भाग न होंती आय-25

तुम जानों झाँसी तुमाईं है, सोंपो चाय बचालो आन-201

0 रे जें तुमाएँ जोधा, बीतें निपोर कें-169

0 बार न बाँको हुओ तुमारो, जौनों रकत बूँद परमान-201

0 तोरो नावँ उजरो करबे में, चढ़ जाबें मोरे प्रान ! 217

अधिकरण कारक

0 तो पै ललक-लाड़ बरसाबें-28

0

अन्य पुरुष — बो {वह} बे,

कर्ता कारक

0 बानें निअत करी तुमाएँ राज पै चितै 9-168

0 बे चौकस हो जायँ-166

0 बो तो बिचाइँ दिन काटत घरै बैठकें-168

0 बो बामन, फिर नार, और तउ पै बिदवाँ-168

0 बो जानत झाँसी खाँ बाला को हलुआ-168

0 बा नें तरें तरेंहँ, बागिअनें जोर कें-169

बोई बागिअन को अगुआ है-184

कर्म कारक- 0 सब चूक जें, जो बो उड़ जाय-184

0 बा खाँ छोड़ो झाँसी, बना भेदिआ-184

0 ऊ खाँ न कूत अबे नाँ बलन्त काँ बँधे-168

0 बइँखाँ जाय पछारें पैलाँ-186

0 उन खाँ पकर बाँद के पौंचातें हैं भलें-135

उनें गाँठ लवँ पीर अली नें-184

करण कारक 0 बो छुटक रावँ तो देखो-26

सम्प्रदान कारक × × ×

अपादान - 0 बइँ तें आगें फोजन को तो जबर जमावँ-179

सम्बन्ध कारक 0 बइके उन्हार कुल-गोत को-30

0 बाके मन बइकें अगरो माटी तें चावँ-20

अधिकरण 0 तुम काए परे ऊ पै बकबका ऐंठ कें-168

0 बइँ में करें तदेतो लेबो-देबो-135

0 बा पै तुम तानें तुदवा-168

0 बामें देत हुते हरताए-55

0 बो बइँ पै परें चपेंड़-167

कर्ता कारक : उन {ऊ}

: उननें ढाँसी वाँ लिंगारो-43

कर्म कारक : कउँ अनीं परे पे उनेंउँ चखा है मजा-169

: उनें मनावें-36

: उनें दाँत सें काटे सें हो जें है अधम-137

: उनखाँ करो अनन्त निहाल-43

: उनवाँ जानें-59

करण कारक : उनई सें मिलकें खेलें-26

: उनसें रोस न करवो साजे-27

: उनसें मनू न बोलो-28

: उनसें मिहल-मन्दिरन में चितोर करोइ-57

सम्प्रदान कारक : उनें मिहल दवें रेबे वाँ-56

: जो बाँटी जायँ उनें ईसाइ किताबें-लेख-131

अपादान कारक : × × ×

सम्बन्ध कारक : उनई के संगें-20

: उनकें सुम गोत-20

उनको इतराबो-27

: उनकी आव भगत देखें-31

: उनको हिन्दी में उल्था करवावें-58

अधिकरण कारक : तुम काए परे ऊ पे बकबका ऐंठ कें-168

ओ

कर्म कारक : ओइवाँ-कयँ कछू ओइ वाँ करे मिसिल में आगें-141

सम्प्रदान कारक : समर ओई के लायें करनें परदेसिन सें धरम बचान-236

अपादान कारक : ओइ दिनाँ से कइ गयें सबरें बाइ साब रानीं कौ नावें-148

सम्बन्ध कारक : हमें ओइ की है बस अठस-236

: जी सें पाई सहाय ओई के, नठया लगो कतरबे पाँछ-128

: इ - यह

कर्ता कारक :

कर्म कारक : बेजाँ स्ठी आज इऔ पर है समजानें-27

: की ने देखे भाग 9-25

: को बेहे आन-32

कर्म कारक : का करनें जू-27

: कोन भागताली है-32

: का करते-56

: कोनउँ-कोनउँ बींद अबें जाँयें, पकराँहैं आँयें दुपकें छुक जाँयें-211

: को है जो बमयक पारें-156

: का होनें आँगें कोन हवाल-241

: का हो गवें तुम खाँ बीरन-242

करण कारक : काउँ तराँ सें डिगरत, गिरत-परत, पोंचे रजधानीं आयें-52

: कैसें होयें अनोय, कौन को दारो देखें-29

: तोउँ बगावत के मुखिअन नें, थाँमों काउँ तराँ से रोस-137

सम्प्रदान कारक : काउँ-काउँ खाँ लालिच देकें काउँ काउँ खाँ बना अबोद-127

: को खाँ रोबें अपनी बिपदा, किऐ सुनाबें ? काउँ खाँ कछू-
: महाबे बारे-145

: अब तुम कहो काएँ के लाजें, जो करिआ माँ हमें दिखावें?141

अपादान कारक : × × ×

सम्बन्ध कारक : की की कोख धन्न उजिआन-32, कोन के केबे सें करबैठीं काएँ-52

अधिकरण कारक : बोली मनू रितानें की पे ?-24

अनिश्चय वाचक

कछू

कर्ता कारक : कछू कहत-42

: कछू न बोली भरीं तरईंआँ-65

: आएँ कछू बागी दिल्ली के झाँसी की पल्टन उकसान-138

कर्म कारक : कछू जन्ट तोपें ढरवा लईं घर बारूद-गोला बनबाएँ-47

: कछू-कछू खाँ तो, राजा कुआर की अंगत नें भगवायें-42

: कछू, साउँकारन कें गाँनों, बिना हिसाबी धन धरवायें-114

करण कारक : × × ×

सम्प्रदान कारक : कछू दिखावा करबे काजें कछू भीतरी घुसी जतान- 99

अपादान कारक : × × ×

सम्बन्ध कारक : × × ×

अधिकरण कारक

0 कछु दिनन में चउँआर कर दवें नगर-43

0 कछू दिनन तौ बेर-मकुईंआँ-मउआ-गुलकट राखी लाज-52

0 कछु दिनन में लीकलाक अपनीं रानीं बचन निभान-79

0 कछु सुत में करबे कौ, नईं हतौ काउँ वाँ कितउँ उकास-137

0 कछु साँतिआ की आसा में, समर-साज दुनाँ करवाँईं-205

निज-वाचक

अपुन

कर्ता कारक

0 अपुन सिधारी सुरग हमैं जो बिपद बिदो गईं-29

कर्म कारक

0 अपुन लयें जावें टीपनीं-34

0 अपनों राज तिहाई दान दवें-43

0 अपने घुरवा वाँ मुरका कें, लौट परी ललकारें देत-23

0 तनक उकास अपन वाँ मिल जै, औसर मिलै समकबे हेत-165

0 जो जाँ हतौ, बीद कें रे गवें, अपएँ-अपएँ मोरचा समार-138

सम्प्रदान तथा अपादान- × × ×

0 तुमसें लेयें, अपवें दे जायें-49

0 अपुनी-अपुनीं धुनें न मानें कोउ-203

0 अपुनों लपन-तेज बिस्तार-33,

0 के आपुस की फूटन में धर दए-22

0 अपुन के लाड़ईं नें तौ मूड़ चढ़ाइ-31,

0 अपनें नाँ की चीजें-49

0 अपनीं गुइअँन नों जाके-27

0 अपनें सपूत मानें छतसाल-43

0 अपने कुल-पुरेत सिरनाम-32

0 आपुस कौ परेज टूटो-66

अधिकरण कारक

0 अपनें में न समाबे-25

0 काँ हुनो अपुन में आयें-173

0 कर उठे आपुसईं बतबड़यावें-203

0 आपुस में फूटें, करत बाहर के घातें-124

0 अपने में अंइ कोउँ-काउँ खाँ न मानें-124

0 आपुस में बिनगुत के करन लगे घेरा-124

लक्ष्मीबाई-चरित में सर्वनाम पदों का प्रयोग कवि ने जिस प्रकार विभिन्न लिंगों, वचन और कारकीय परिसर्गों के साथ किया है उसके विश्लेषण से कई निष्कर्ष निकलते हैं ।

0 लक्ष्मीबाई-चरित में उत्तम पुरुष वाची सर्वनाम "मैं" का छह रूपों में प्रयोग किया गया है । मूल रूप "मैं" विभिन्न कारकीय प्रत्ययों के साथ विभिन्न विकारों को धारण कर लेता है । कर्ता कारक का "मैं" कर्म कारक में तीन रूपों "मोखाँ", मोइखाँ, तथा "मोय" के रूप में प्रयुक्त हुआ है । इसी के सम्बन्ध में कारक में दो रूप प्रयुक्त हुए हैं । एक "मोरैं" तथा दूसरा "मोर । इसके अन्य कारकीय प्रयोग "लक्ष्मीबाई चरित में उपलब्ध नहीं हैं ।

0 उत्तम पुरुष वाची सर्वनाम का दूसरा रूप "हम" बहुत बचनांत होते हुए भी कई स्थानों पर एक वचन "मैं" के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । जैसे-"हमतो मरे", "हमनें का", आदि । इसका बहु-वचन रूप अन्य सन्दर्भों के अन्तर्गत प्रयुक्त हुआ है जैसे हम सब, हम सबरे अथवा "वे कयैं हमावें ताजिआ", "इतनों हित करो हमारो", "हम सबकी विन्तिसैं पचे लईं" आदि उदाहरणों में ।

0 विभिन्न कारकों के साथ मूल रूप में "हम" सर्वनाम के विभिन्न रूप इस प्रकार हैं-- कर्ताकारक के साथ "हम" या "हमनें", कर्म कारक में "हमखाँ", "हमें", करण कारक में "हमसेंउँ" तथा "हमसें", सम्प्रदान में "हमें", अपादान में "हमसें", सम्बन्ध कारक में "हमाई", "हमनों","हमारे", "हमावें", "हमारो" । अधिकरण कारक में इसका कोई रूप कवि ने प्रयुक्त नहीं किया है ।

0 मध्यम पुरुष "तुम" के कर्ताकारक में दो रूप प्रयुक्त हुए हैं "तुम यथा "तुमनें" । कर्म कारक में इसके "तुमखाँ", "तोखाँ", "तोय", "तोयें" तथा करण कारक में "तुमसें", और "तुमसेंउ" दो रूप प्रयुक्त हुए हैं । सम्प्रदान कारक में भी ब दो रूप "तुमें" तथा "तुमें" मिलते हैं । अपादान कारक में इसका कोई रूप उपलब्ध नहीं हुआ है । सम्बन्ध कारक में इसके छह रूप मिलते हैं--"तुमावें", "तोर", "तुमाई", "तुमारे", "तुमारो", "तोरो" । अधिकरण में इसका सिर्फ एक रूप मिला है-- "तो पै" ।

0 अन्य पुरुष "वो" के कर्ता कारक में तीन रूप प्रयुक्त हुए हैं- "वानें", "वो" तथा "वोई" । कर्म कारक में कवि ने इसके छह रूपों का प्रयोग किया है--"वो", "वाखों",

"उखाँ", "उखों", "उनै" तथा "बइँखाँ" । करण-कारक में तथा सम्प्रदान में इसका कोई रूप नहीं मिला । अपादान में सिर्फ एक रूप "बइसें" का प्रयोग किया गया है । सम्बन्ध-कारक में इसके दो रूप मिलते हैं--"बइके" तथा "बाके" । अधिकरण में इसके "औ, "बइमें", "बापै", "बामें", "बइँपै" रूप प्रयुक्त हुए हैं ।

0 इसी का दूसरा विकृत रूप उन §उ§ के भी कवि ने विभिन्न कारकों के साथ विभिन्न रूपों का प्रयोग किया है । कर्ताकारक में इसका सिर्फ एक रूप "उननें" मिलता है । कर्म-कारक में इसके तीन रूप प्रयुक्त हुए हैं-- उनेउँ, उनें तथा उनखाँ । करण कारक में केवल दो रूप मिलते हैं-- "उनसे" तथा "उनइ सें" । सम्प्रदान में इसके दो रूप प्रयुक्त हुए हैं--"उनै" तथा "उनें" । अपादान कारक का कोई रूप नहीं मिला । सम्बन्ध कारक में कवि ने इसके चार रूपों का प्रयोग किया है--"उनई", "उनकें", "उनको" तथा "उनकी" । अधिकरण कारक में सिर्फ एक रूप प्रयुक्त हुआ है--"औ" ।

0 अन्य पुरुष सर्वनाम का एक अन्य रूप "ओ" को भी कवि ने कई रूपों का प्रयोग किया है । कर्ता कारक में इसका कोई रूप हो ही नहीं सकता । कर्म कारक में इसका "ओईखाँ", सम्प्रदान में "ओइके लानें", अपादान में "ओइ दिनाँ सें", सम्बन्ध कारक में "ओइकी" तथा "ओइके" रूपों का प्रयोग किया गया है ।

0 निश्चयवाची सर्वनाम इ§यह§ का कर्ता कारक में कोई रूप नहीं मिलता । करम कर्मकारक में कविने इसके तीन रूपों का प्रयोग किया है- "इऔ", "इनखाँ" तथा "इनें" । करण कारक में दो रूप मिलते हैं--"इसें" तथा "इनसें" । सम्प्रदान का एक रूप है-- "इनें" , अपादान, सम्बन्ध तथा अधिकरण में इसके कोई रूप नहीं मिलते हैं ।

0 सम्बन्ध वाचक सर्वनाम जो §य§ के लक्ष्मीबाई-चरित में कई रूप प्रयुक्त हुए हैं । कर्ताकारक में कवि ने इसका प्रयोग "जीनें", "जिन, "जो" के रूप में किया है । कर्मकारक में इसके "जीखाँ", "जे" दो रूप मिलते हैं । करण कारक में "जीसें" तथा "जासें" और अपादान में मात्र एक "जईसें" रूपकमिलता है । सम्प्रदान कारक में इसका प्रयोग नहीं हुआ है । सम्बन्ध तथा अधिकरण में इसके क्रमशः "जीकी", "जीके" "जिनके" और "जामें" तथा "जापै" रूप प्रयुक्त हुए हैं ।

0 इसी प्रकार प्रश्नवाची सर्वनाम "को" के ऋजु तथा तिर्यक दोनों रूपों में कई रूप मिलते हैं । कर्ताकारक में इसके "कोउ" "को" तथा "कीने"तीन रूप मिलते हैं । कर्म कारक में कवि ने इसके तीन रूपों का-"का", "कौन" तथा "कोनउँ" का प्रयोग किया है । करण कारक में इसका प्रयोग कवि ने "काउँ तराँ सें" "केसें" इन दो रूपों में किया है । सम्प्रदान कारक में इसके बदलेहे हुए रूपों "काउँ, "काउँखाँ", "कीखाँ",

तीन-तीन-193

चार-चार अपरा तर-अर-198

छै-छै हाँत अपरो जायँ-181, छै नायक छै जाँगाँ-231

दस-दस तोप मोरचा रोप-171, लगे पचास-पचास कोट के बुरजन पै-174

सौ-सौ ज्वान लगे हर दरबाजे-173, एक सौ एक मुहर-132

निश्चित संख्यावाची क्रमिक आवृत्ति परक भिन्न विशेषणों की दृष्टि से लक्ष्मीबाई-चरित के कवि ने कुछ विशिष्ट प्रयोग किये हैं । यथा--

दो-एक दिनाँ गोला बारूद-203, दो-चार दिनाँ मैं-196, दो-तीन मिहल-43
दो-तीन घरी मैं-179

दो-चार मुक्ख सिरदार-48, दो-चारन-59, दो-तीन दिनाँ-134, तीन-चार अँगरेजी अफसर-137, पाँच-सात सरबरया-160, छै-सात दिनाँ मैं मसकी मउ मरोर कैं-170, पन्द्रा-बीस-79, दस-पाँच डँकुअन के माडारे सैं-161, दस-बारा हाँती-57, नौ-दस मई-137, दस-बीस-196, दस-बीस हजार-228, बारा हाँती तेरक सौ सवार पैदरिआ चार हजार-179, एक दावें मैं चार-चार सौं-180 दुहत्तू चला दुधारा-181

अनिश्चित-

अनगिनत तोप-232, अनगिन्ती तुपकैं सरबार-204, अनगिन तोप-232,
अकूत सम्पदा-224, अपार सम्पत-236,

कछू-- कछू दिनन सौ बेर--मकुईआँ--मउँआ-गुलकट राखी साज-58
कछू जन्ट तोपें दरवा लई-47

कितेक-- जात कितेक दूर नों हुईंजैं-32
को-कितेक जोधा सरगै गयें, को-को घाइल भयें सिरदार-183

भौत-- तोपें सो हैं भौत किले मैं, कायें न घालत चला हलूद-174

मुलक-- तड़कीं बिकट मुलक मैंदान-175

मुतके-- लगीं रकत की पिचकैं छुटन, मुतके घाव बदन पै बाए-212

अपार--सौंनो-चाँदी भरो अपार-222

किरोरन-- कार किरोरन भारतवासी दाबें मुठी भरे अंगरेज-109

सब-- सब बिरादरी के पंचन नैं-54
-- सब पिसनारी के गुन गायँ-54
-- सबरे सुख ईसुर नें दयें हैं-35

नैंक-- नैंक न सरकी दुस्टन-53

जाता है । रचना की दृष्टि से इन्हें साधित अथवा निर्मित धातुएँ कहा जाता है । कुछ धातुओं को संदिग्ध व्युत्पत्ति वाली धातुएँ कहा गया है ।

लक्ष्मीबाई-चरित में कवि ने संस्कृत से आई हुई जिन धातुओं का प्रयोग किया है उनके तद्भव रूप ही मिलते हैं । इनमें से कुछ तो सामान्य रूप में हैं और कुछ उपसर्ग युक्त रूप में हैं । कुछ प्रत्यय युक्त हैं और कुछ संयुक्त । इन सभी के तीन रूप हैं-- कर्तृवाच्य, कर्तृवाच्येतर तथा प्रेरणार्थक । निर्मित धातुओं को अकर्मक, सकर्मक तथा प्रेरणार्थक में विभाजित किया जाता है । नामधातुएँ संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम और क्रिया विशेषण से भी बनाई जाती हैं । एक अन्य भेद अनुकरणात्मक धातुओं का होता है । देशज धातुओं को संदिग्ध व्युत्पत्ति वाली धातुओं के रूप में रखा जाता है । लक्ष्मीबाई-चरित में आई धातुओं और क्रिया रूपों का अनुशीलन इसी दृष्टि से किया जायगा । संस्कृत से आई पाली-प्राकृत-अपभ्रंश के प्रभावों को समेटती और बुन्देली में सुरक्षित कियाएँ तद्भव, परवर्ती तद्भव और तत्सम रूपों में मिलती हैं ।

लक्ष्मीबाई-चरित में सिद्ध अथवा परम्परागत धातुएँ इस प्रकार हैं--

1. संस्कृत से आई तद्भव सिद्ध धातुएँ-

<u>क</u> - करत-32 (कृ-करना), कहें-32 (कहना-कथ्), कढ़बे-147 (कर्षण), कूँदन (कूर्द)-72, कतरबे (कर्तरि)-128, कपें-कपरएँ-89, 160 (कम्प), कूकें-88 (कूजन--कुक्कई--कूकइ), कसना-174 (कर्षण), कटउआ पर गर्वे-139 (कर्त्तन) ।

<u>ख</u>- खरयाकें-82 (सं० खर (तेज) प्रा-खर (कठोर), खात-52 (खाद), खेलें-79 (खेल्-प्रा-खेल्ल--खेल--अप--खेल्लण--अव० खेल्लइ--हिं० खेलना- पं. खेलणा बँ० खेला), खिलबें-71 (सं० स्खलन- खिलना-खिलबें कन्ज उजास-71), खुलो-162 (सं. क्षुर (काटना या खोदना) प्रा. खुल्ल, मराठी-खोलणें, सिं. खोलणु, उ० खोलिबा, बँ. खोला) हिं. खुलना का सकर्मक रूप- हमनें मों खोलो, खुलो साँकरन को कसावें-162 आदि, खेंच कें-177 (कर्ष), गएँ-131 (गम्-गतः)

<u>ग</u>- गरजीं-175 (सं. गर्ज- सं. गर्जन--प्रा. गज्जण (सं. गर्ज--प्रा. गज्ज)--हिं गरजना), गुनकें-33, (सं. गुण्य (आवृत्ति करना, याद करना)--प्रा. गुण, गुणइ--अप. गुण्णइँ--अव. गुन्नइ--हिं गुनना) .गाड़े--55, सं. गर्त--प्रा. गड--गाड़ हिं. गाड़ना, गपिआएँ-44, सं. जल्प--गल्प--गप--गपयाना,

गहा-35 (सं. ग्रहण--पा. गहण--प्रा. गहणय--हिं गहना--बुन्देली--गहबो)

बुन्देली- उतराबो § ।

-- उठायँ-149§सं. उद्+स्था+ल्युद--उत्थापन--प्रा. उट्ठावण--हिं. उठाना

निर-- निरबारो-81§सं. नि+वारण--निरवारना--बुन्देली--निरबारबो§ ।

प्र- पसरो-128 §सं. प्रसर= प्र+सृ+अप्§ आगे बढ़ना, फैलना । हिं.-प्रसाद-पसार, बुन्देली- पसरबो--पसरो ।

वि- बिराजे-39 §सं. वि+राज्--हिं. विराजना--बुं. बिराजबो ।

णिजन्त §प्रेरणार्थक सिद्ध धातुएँ-

-- उगलवा-82 §प्रेरणार्थक सं. उद्गीरण से बनी है ।§

-- उरजाएँ-83 §सं. आ + रूध्य--प्रा. अरुज्झाला--अप. ओरझत--हिं. उलझ+ना बुं. उरजाबो ।

--- उठवाएँ-151§सं. उत्तिष्ठ से बना §

-- गहा-35 , §सं. ग्राह्यति§

गुँजाव-142§सं. गुन्ज§ गुँजना--गुँजाना--गुँजाबो ।

छुड़बावें-183 §सं. छोरण्ह--प्रा. छड्ड, छड्डण--अप छड्डइ--हिं. छोड़ना--बुन्देली- छोड़बो--छुड़वाबो ।

छिदवायँ-198§सं. छिद्--छिन्यते-छेदयते--प्रा. छेद--हिं. छेदना--छिदवाना--बुन्देली- छिदवाबो ।

जगाएँ-175§सं. जागृ--जाग्रय--प्रा. जग्गावेइ--हिं. जगाना--बुं.-जगाबो-जगवाबो ।

फहरॉव-139 §सं. स्फर, स्फुरण--स्फारयति--फहराना§हिं. §-बुं.-फहराबो ।

झरवायँ-53§सं. झर--प्रा.--झर--हिं. झरना--प्रे. झरवाना§झरझरायते§--झरवाबो-बुं.

तपिआय-19,§सं. तपन§तप्§ प्रा. तप्पण--हिं. तपना§तप्यते§ बुं. तपयाबो-

लिखवाय-135§सं. लिख्--पा. लिखति--प्रा. लिह--हिं. लिखना-बु.लिखति, लिखवाई§लिखवाता है§--बुन्देली--लिखवाबो ।

संदिग्ध व्युत्पत्ति वाली धातुएँ-

अड़ाकें-126, अगुआई-134, अँकुवाबई-105, अकड़के-169, अरगिवें-208, अकबकायें-204, आँसी-74, आँयन आवे-159, ऍदिआयँ-195, आबड़ पर गएँ-223, उकताने-129, उकता कैं- 148, उपाड़े-89, उबारकें-86, निपोरकें-

{ग} मिश्रित अथवा संयुक्त एवं प्रत्यय युक्त धातुएँ-

लक्ष्मीबाई-चरित में संयुक्त तथा प्रत्यय युक्त दोनों प्रकार के क्रिया-पदों का प्रयोग किया गया है ।

प्रत्यय युक्त धातुएँ-

पं० द्वारिकेश मिश्र ने अपने लक्ष्मीबाई-चरित काव्य में अनेक प्रत्ययों से युक्त धातुओं का प्रयोग किया है । उनकी रुचि परम्परागत प्रत्ययों के प्रयोग के अतिरिक्त नवीन प्रत्ययों के प्रयोग की अधिक है । उनके क्रिया पदों का रचनात्मक दृष्टि से अनुशीलन करने पर क्रिया-पद संरचना के कुछ खास ढंग उजागर होते हैं । उनके अधिकांश क्रिया-पद इन्हीं प्रत्यय-गुच्छों के अन्तर्गत आ जाते हैं ।

"कैं" के प्रत्यय युक्त धातुएँ =

अड़ाकैं, अटकाकैं, अरकैं, आकैं, आनकैं, उतराकैं, उकसाकैं, उभराकैं, कुढ़कैं, काटकैं, करकैं, खुलकैं, खेंचकैं, खाकैं, गसकैं, गड़वाकैं, गाँसकैं, पढ़कैं, भरकैं, गाकैं, गिनकैं, सुनकैं, घेरकैं, बैठकैं, घुसकैं, घुटकैं, चलकैं, चीरकैं, चुनकैं, चटकैं, छराकैं, छिरकैं, जोरकैं, जुजाकैं, जाकैं, झमकैं, लुटकैं, झरकैं, झुककैं, टोरकैं, ठाँसकैं, पठैकैं, पिटकैं, पढ़कैं, बटाकैं, बैठकैं, लड़ाकैं, हारकैं, हुरकाकैं, हलाकैं, हिलुर कैं आदि ।

"आव" प्रत्यय युक्त धातुएँ-

करावें, गहावें, आपावें, उसकावें, कढ़बावें, खरयावें, खावें, खुदयावें, गुँजावें, गाँव, चेतावें, चुकावें, छुड़ावें, छिपावें, जमावें, जगावें, झड़कावें, टकरावें, बितावें, बतावें, मुरकावें, भुलावें, हुरकावें आदि ।

"आय" प्रत्यय युक्त धातुएँ-

आयें, उठायें, भिड़ायें, उचकायें, उड़वायें, उभरायें, कसकायें, कटुआयें, खायें, खुलवायें, खरकायें, गुन्जायें, घबरायें, घिघिआयें, चलायें, चढ़ायें, चबायें, छकायें, छिड़ायें, छुड़ायें, छिदवायें, जायें, जुड़ायें, झरवायें, झिपायें, डकरायें, ठनायें, तपायें, तपिआयें, धकधकयायें, निभायें, निबटोंयें, पनिआयें, पड़ायें, पटायें, पिछिआयें, पिरायें, पुछुआयें, पठवायें, फहरायें, फलकायें, भरायें, बचायें, बगरायें, बरसायें, बिदकायें, बिधवायें, भरवायें, भरायें, भिंजायें, मनायें, मगायें, मचाँय, मुदायें, रोंयें, रचायें, लठयायें, लटकायें, लिवायें, लुदयायें, लुरियायें, सिरायें, हुरकायें, हुदिआयें ।

"इ"/आइ" प्रत्यय युक्त धातुएँ-

अगुआइँ, अनखनखाइँ, आइँ, कराइँ, कबाइँ, करवाइँ, खाइँ , गाइँ, चढ़ाइँ, छुड़ाइँ, जगाइँ, जमवाँइँ, टपकाइँ, तनिआइँ, दुहराइँ, दिखुआइँ, पथराइँ, पटवाइँ, पयताइँ, फराइँ, बनाइँ, बिलमाइँ, भँजयाइँ, लिआइँ, सरकाइँ, सुदिआइँ, सिकाइँ, हड़बड़याइँ ।

"अन्" प्रत्यय युक्त धातुएँ-

आतन, उचकन, उनगारन, उतरतन, कूदन, खेलन, गिरन, गिरतन, झारन, टारन, ढूँड़न, निघारन, निगन, बिचकन, भुलऊँअन, मरतन, हँसन ।

"आन" प्रत्यय युक्त -

आन, उलकान, उतकान, उठुआन, घिसआन, खिरिआन, गान, गिगिआन, छान, जुरान, जान, झमकान, ठाँन, टरयान, निमान, फैलान, बुलान, बँधान, बतायान, मलवान, हिलबिलयान ।

"ए" अथवा "वे" तथा "रे" प्रत्यय युक्त धातुएँ-

अकड़बे, आएँ, ब उठवाएँ, एसटाएँ, उघड़बे, कमाबे, काटे, कतरे, केबे, करँए, खोने, गएँ, गाबे, गहाबे, गटके, गाड़े, गिरे, घुते, चले, चिपटे, चीरे, चढ़बे, चढ़े, छाँटे, छाएँ, छोड़बे, जुरे, जगाएँ, टरे, टिके, टकराबे, ठाँड़े, डरे, टरबे, दएँ, परे, पैरबे, पिछयाबे, पथराएँ, फिरते, फैले, बिराजे, बटबे, बिछाते, बिस्तारे, बरकाबे, भेजे, भूले, मरे, लिपड़े, समराबे, हरबाएँ, हारे ।

"ओ" प्रत्यय युक्त धातुएँ-

अऊँओ, उफनानो, दिओ ।

"औ" प्रत्यय युक्त धातुएँ-

उठौ, उगारौ, उकतारौ, उटारौ, करौ, कटौ, खोलौ, चलौ, छाड़ौ, चाहौ, जोरौ, जानौ, टोड़ारौ, टटकोरौ, टूटौ, ठाँड़ौ, ठँसकौ, ठोँकौ, देखौ, दरकौ, छरकौ, छेड़ौ, धरनौ, निखारौ, पकरौ, पछताबौ, पसरौ, पुचकारौ, बगरैा, बघारौ, मरौ, भेबौ, सुदारौ, सीकौ ।

संयुक्त धातुऐं-

लक्ष्मीबाई-चरित में संयुक्त धातुओं की संख्या भी बहुत है । प्राय: कवि ने दो धातुओं अथवा कृदन्तों की सहायता से क्रियाओं का निर्माण किया है ।

कूँद लगाकैं, गदबद दे कैं, गाबौ सुनकैं, चौकस रे कैं, जाँच-परख कैं, झपट्टा दे कैं, ठोक-बजाकैं, आ पावें, कर पावें, होत आवें, जा समजावें, चीन पावें, कत जायें, धसक की अरधि, पा जायँ, पर जायँ, मारे जायँ, अँकुआलई, खा गई, खिंच गई, बाँध दई, घिर गई, लिपड़ा लई, कर डारौ, कर उठे, खिल गऐं, उखर गऐं, गिर परे, छोड़ भगाऐं, जा मिले, जान पाए, जड़े हते, टुइका दऐं, पिल परे, फिर फिर चले, बिचकन लगे, लटकालऐं, घालैं सान, जा मान, उबार लौ, कै लौ, कर लौ, जान दो, टटो लिओ, धार लौ, ले लौ, बाँद लौ, बिसार दो, मैंक दो, रहन दो, लिकवादो, समजा दिओ, आ जाबैं, आ पावें न, आ जुरे, आन परी ती, आ टपके, उछारैं लेत, उमैंठ कैं, उखर गऐं, कुइ कैं आदि ।

§घ§ अनुकरणात्मक धातुऐं-

लक्ष्मीबाई-चरित में अनुकरण वाची धातुऐं भी कुछ मिलती हैं ।

अर्रा गऐं-208, आँख मुँदिआयँ-195, उनकान-32, किड़किड़ा कैं-192, किकिआबैं-100, बररायावें-182, बनकै-181, §बाँड़ा§ बरकाँय-211, बड़कौ-209, खिलखिलाकैं-222, गुँजाय-142, गात-बजात-81, गुँगिआनैं-88, गदबद देकैं-25, गरजीं-175, गुन्जाय-139, गिगिआनीं-65, §गोला§ घन्नाँय-206, चीर कैं-140, चिचिआयँ-88, चहकौ-99, छमकबे-153, झर-झरकैं-125, झमकान-82, झपकानैं-89, झरीं-106, झड़कावें-191, झपयानीं-27, झपट्टा दे कैं-27, टपकावें-86, टपया कैं-152, ठोक कैं-241, ठसकौ-158, डकरावें-222, ढुलक ठनाय-81, तड़कौ-209, तड़कावें-172, दियाबै-32, दमचमचाँय-172, दौक परीं-141, 194, धुंदियात-171, धसकी अरधि-206, §धजा§ फहरात-179, §बिजली§ तड़कायँ-176, सनझनिआय-20, सन्नाबैं-155 ।

अन्य अनुकरणवाची क्रियाऐं-

झपक-86, भौंरा सरबेटन, दरकै, चमकैं, बमकै, झमकैं, मुसरधार, बादरैं फार, झुमड़ें, घुमड़ें, उमड़ें, दिपान, उजयान, थर-थर कँपान, सिसकारी, झरे, ढूकै, कूके, खन-खन करिया झाँकैं-88, ठनक नगरिआ-98, गमकै ढोल-98, रमतूला कूके

सुर बोल-98, चमके, घरर्य-100, नरजि, हा-हाकार-101, घुरिआँ चटक झरीं रानी कीं-106, हड़बड़, हाय-हाय-106, खनकत-140, खटपटैं-146, खटका-146, दरकौ-झरकौ-148, फटकारैं-152, खनकैं ककरा, छमकि, झुमका झूमैं, लहरैं, छहरैं-153, छनकैं घुरिआँ-153, झाँझन की झनें-154, कउँचकरीं सन्नाबैं, मन्नाबैं भौरा-155, झमचक चारैं-156, पुचकारौ-15, किड़किड़ा-169, सरपट, दमकैं-175, खल-खल पर गई-175, झपकतन-177, तोपैं भड़कीं-177, फड़ाग-180, किड़किड़ कड़कम बजी नगरिआ-81, चकई कि चकदम, ढुलक ठनाक-81, किन-किन-खन-खन करैं मँजीरा, रीं रीं कैंकड़िआ तुरिआय-81 आदि ।

0 लक्ष्मीबाई-चरित में एकाक्षर और द्वयाक्षर दोनों प्रकार की धातुओं का प्रयोग किया गया है । कुछ का उल्लेख नीचे किया जा रहा है ।

<u>एकाक्षरी धातुएँ-</u>

आ, गा, जा, पी, जुर, कर, मर, चढ़, पड़, रह, बढ़, देख, खा, उठ, उड़, दुक, चुप, कप, पर, जर, कूक, कढ़, कह, आदि ।

<u>द्वयाक्षर धातुएँ-</u>

कसबौ, कुटबौ, खेलन, खुलना, खड़कबौ, कुचकबौ, खदेरबौ, गड़बाबौ, गबात, घलाबौ, गिरबैं, चबाबौ, पकड़बौ आदि ।

0 लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त धातुओं का वर्गीकरण स्वरान्त तथा व्यंजनान्त रूप में भी किया जा सकता है ।

<u>स्वरान्त धातुएँ-</u>

आ-जा, धा, ला, गा, छा, घबरा,

ई- जी, पी,

ऊ- छू,

ए- दे, ले

ओ- रो, हो, बो बो,

<u>व्यंजनान्त धातुएँ-</u>

क- अटक, किलक, कूक, खनक, टुक, तिक, झमक, चिपक, डुड़क, भिक, बरक, बिचक, मुरक, झटक ।

ख- लप, जप, देख, दिख

ग- जग, निग, लग, भग, माँग ।

- बे मालिक, हम चाकर हैं-27 - बहु वचन

- बौ तीरथ {वह तीर्थ है-37} - एक वचन

0 भूत निश्चयार्थ-

	पुल्लिंग	स्त्रीलिंग
उत्तम पुरुष -	था, थे	थी
अन्य पुरुष -	था	

लक्ष्मीबाई-चरित में भूतकालिक निश्चयार्थ क्रिया था, थे, थी अथवा थीं का प्रयोग कहीं नहीं हुआ है । बुन्देली व्यंजन ध्वनियों में होने वाले परिवर्तन के कारण लक्ष्मीबाई-चरित में भी "थ" के स्थान "त", "ध" के स्थान "द" तथा था, थी, "थे" के स्थान पर सर्वत्र ता, ती, ते तथा हते , हतीं, हतो का प्रयोग किया गया है ।

उत्तम पुरुष - हती कबउँ, अब तो दासी हों-242

{मैं}-कभी थी किन्तु, अब तो मैं दासी हूँ ।

यहाँ पर "मैं" छिपा हुआ है जो सन्दर्भित वाक्य से स्पष्ट है ।

उत्तम पुरुष एक वचन- रानीं बोलीं, पैलाँ कहँती, राव साव सें, तुमसें वीर ।

{मैंने पहले ही कहा था-243}

उत्तम पुरुष बहुवचन के साथ इसका कोई प्रयोग कवि ने नहीं किया है । अन्य पुरुष के साथ इसके अन्य रूप इस प्रकार हैं--

अन्य पुरुष एक वचन स्त्री लिंग -

- बाइसाब तीं राजकाज के सोसन बीदीं-164 सम्मान सूचक होने के कारण बहुवचन .

- कासीबाइ किले में रे गईं ती-180

पुल्लिंग- - फौजन को तो खबर जमाउँ-179

,, - फिर का हतो भवानी संकर दे दे कें लड़की घनघोर-177

पु0 बहु0- - दादा देत हते बुलवाकें उसहाँयन बौ राव-सहाँय-52

- बो जो हते किले में-214

- चतुर चितेरे ते सुवनाम-57

- अली बहादुर उनके हते पूत-56

- सिवतम कर गर्ऐ ते, चोखो भेजो तो फरमान-108

स्त्रीलिंग एकवचन- - तुना हती पुस्तान पुस्त की, हती दबामी की जागीर-108

- रानीं बोलीं, "पैलाँ कहें ती, रावसाव सें, तुमसें बीर ।"-243

स्त्रीलिंग बहुवचन - सुन्दर-कातीबाड़ तंग तीं, बिकट झकोरें तेग चलात-246

मध्यम पुरुष का लक्ष्मीबाई में इस क्रिया के साथ कोई उदाहरण उपलब्ध नहीं हुआ ।

0 भविष्य निश्चयार्थ-

"है", हो, है तथा थी, थे अथवा बुन्देली हते, हतो,, हैं, हो, हती, हो, की तरह भविष्य निश्चयार्थ गा, गी, गे सहायक क्रियाओं का प्रयोग स्वतंत्र और अलग से लक्ष्मीबाई-चरित में नहीं किया गया है । भविष्य सूचक इन सहायक क्रियाओं का प्रयोग किसी-न-किसी मुख्य क्रिया के साथ ही किया गया है ।

काल-रचना के विश्लेषण के समय भविष्यवाची क्रियाओं पर विस्तार से विचार किया गया है । यहाँ उसके कुछ उदाहरण निम्न प्रकार हैं--

उत्तम पुरुष एक वचन - बच हैं तो आकें समार लै-245 आकर सम्हार लूँगी ।

- करो समर, कर हैं अगुआई-133

बहुवचन - जावें तो ईमान बचावें मरें, मरे जन्नत में जायें-133 मरेंगे

- हम कर ले हैं-133

अन्य पुरुष एक० - जो जैसो कर है फल भोगे-243

- उसै सब तराँ सुरछित रैहै-245

,, बहुवचन - मर्द न दैहैं संग-133 { मर्द अगर साथ न देंगे ।

0 उपर्युक्त क्रियाओं में हैं, है आदि वर्तमान कालिक क्रियाओं का लक्ष्मीबाई-चरित में कहीं-कहीं अस्तित्व वाची क्रियाओं के रूप में भी प्रयोग किया गया है । ऐसा कवि ने वहाँ किया है जहाँ वह किसी शाश्वत तथ्य अथवा जीवन में सदा रहने वाली किसी स्थिति का संकेत करता है । यथा--

0 रीती भरें, भरी ढुरका हैं का भरनें जू-27

0 जैसें होनहार बिरवन के होत सलोयें चीकने पात-20

0 सबकी जनम भूम है भारत-18

0 अमर बनी गंगा-सी-18

0 जस जगती भर गाय-19

0 का हिन्दू का मुसलमान-सिख, अेक विधाता की सन्तान-91
0 ईसुर केलो, अल्ला केलो, राम-रहीम-करीम समान-91
0 सबको सार जोहें, मानुस की पीरा हरें, धरें ईमान-91
0 सॉंसौ धरम बोहें, जी में, मानुस-मानुस में भेद न होयें -91
0 सुन लेवें, धरम में न कोउँ बड़ो न छोटो-149

कृदन्त-

काल-रचना में सहायक क्रियाओं के साथ कृदन्तों का प्रयोग किया जाता है । कृदन्तों का महत्तव सभी भाषा-शास्त्रिओं ने स्वीकार किया है । क्रियार्थक संज्ञाओं के अलावा कृदन्तों के विकारी और अविकारी दो भेद होते है । पं0 कामता प्रसाद गुरु ने इनके सात भेद माने है । मुख्य रूप से इनके छह भेद हैं-

1. वर्तमान कालिक कृदन्त
2. भूतकालिक कृदन्त
3. कर्तृ वाचक कृदन्त
4. अपूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त
5. पूर्वकालिक कृदन्त
6. क्रियार्थक संज्ञा

लक्ष्मीबाई-चरित में इन कृदन्तों की रचना और प्रयोग-गत स्थिति इस प्रकार है--

1. वर्तमान-कालिक कृदन्त-

इस कृदन्त का उपयोग विशेषण या संज्ञा के समान किया जाता है । यह विधेय में आकर कर्ता या कर्म की विशेषता बताता है । लक्ष्मीबाई-चरित में इसका प्रयोग कवि ने इस प्रकार किया है--कैसा या कैसे प्रश्न के उत्तर में प्राय: यही कृदन्त आता है ।

व्यंजनान्त धातुओं में कहीं-कहीं "अत" प्रत्यय लगाकर इसकी रचना की गई-

पीकत : जैसे पीकत कली के पात पात हरयात-95

मुस्क्यात : दूल्हा बने जॉंयें मुस्क्यात-68 -"आत" प्रत्यय लगाकर .

नचत : अ उनके आँगें नचत पतुरिआँ-68 - "अत" प्रत्यय लगाकर .

बजात : आँगें-आँगें चले बजात-68 -"आत" प्रत्यय लगाकर .

सरसित : रमतूला को सुर-सरसित-68 -"आत" प्रत्यय लगाकर .

स्वरान्त धातु   होत - फिर चली बरात बजारे होत-69 "ओत" प्रत्यय

स्वरान्त धातु   आतन- आतन बैम मिलो राजा खाँ अंगरेजन तैं जो

तनमान 70"तन"प्रत्यय लगाकर .

रहत- रानीं खाँ किलै रहत, महैना भर बीतो-72 "अत" प्रत्यय

सोचत- सोचत रएँ, कैसें राजा खाँ समझावें-73 "अत" प्रत्यय लगाकर

झिरत- ऊपर सें झिरना झिरत रहे पानी कौं§73"अत" प्रत्यय ..

कहीं-कहीं "आन" तथा "अन्त" प्रत्यय लगाकर भी कवि ने वर्तमान कालिक कृदन्त की रचना की है- नचकान मोर तरसाबें-86   "आन" प्रत्यय का प्रयोग करके .

छपरा गिरन्त-86   "अन्त" प्रत्यय का योग

कहीं-कहीं "ओं" प्रत्यय के द्वारा भी इसकी रचना की गई है-

सुआटा खिलिऔं बेटीं-86   "ओं" प्रत्यय का योग .

§2§ भूतकालिक कृदन्त-

§क§ व्यंजनान्त धातुओं में "आ"§पुल्लिंग§ तथा "ई"§स्त्रीलिंग§ प्रत्यय लगाकर कवि ने इसकी रचना की है । कहीं-कहीं "ओ", "ओ" प्रत्यय लगाकर भी इसकी रचना हुई है ।

- चलीं बिठूरें आय-19
- औंदी डरी मनूबाँ, लूटी करी उठावें-27
- डरी निकन्नी माँ में मनू, देख दुखिआनें-27
- रानीं डरीं हिरानीं चेत-107
- माँ-देवी कयँ रानी जू सें-113
- फरकीं नसें, भौंयें झडुयानीं-11
- थामें रही लगाम-138
- जूही चहकी मैंना से बोल-90
- होरी को डाँड़ौ बरौ, चेत पतरौ, मन भरौ भिआनें-88
- बगरी बहार-88
- घिरे किले में अँगरेजन कों-139
- कुटी-पिटी रईअत लुटी, अँगरेजन के हाथ-218
- पढ़ी-गुनीं गीता कौ ज्ञान 9-215

ऊपर दिये गये उदाहरणों से यह सिद्ध होता है कि लक्ष्मीबाई-चरित के कवि

ने भूतकालिक कृदन्तों की रचना में "ई", "ए", ओ प्रत्ययों का प्रयोग किया है ।

(3) कर्तृ वाचक कृदन्त-

लक्ष्मीबाई-चरित में "आरी", "ऊ", "रू", "नीं", "उँआ", "नी", नों", "इआ", "ऐल", "ओर, इओं" आदि प्रत्ययों को लगाकर कर्तृ वाचक कृदन्तों की रचना की गई है ।

-- जो गत देख पतीज, रखाँती भइ, पिसनारी तरजुबाइ-53

-- तन-तन पेट भरउँआ लाख-53

-- नचनी-नचनों ताज-बजइँआ, नामी कलावन्त बुलवाएँ-58

-- होत मुर्खरू जात दिनैं-दिन-30

-- बड़ बोलू-सी तो लगत भलाँयँ-31

-- समर-जुझारू बीर-कथा के नएँ-निकोर नाटक रचवाएँ-113

--- जड़कारे की हड़ फोरू बेहर, दत्ती तैं दत्त बजायँ-190

--- तीनों नाना के भगैल घुरुवा बाँ-24

-- चली मनू इड़िआत रिसा कें तन्नानीं-सी-26

-- आन गिरी घर में धरती पै भन्नानीं-सी-26

--झाँसी की नचकिनैं, फौजिअन बाँ भड़कउँआल गीत सुनाँयँ-132

-- झलकारी कोरिन सी, हँस तोर मिलनिआँ-96

(4) अपूर्ण क्रिया द्योतक कृदन्त-

कवि ने लक्ष्मीबाई-चरित में इस कृदन्त का प्रयोग द्विरुक्ति और अन्य स्थानों पर किया है । इसके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं-

-- बाके रत, अँगरेजन फिरकें जमाँ पाँयँ भारत में पाँवँ-186

-- बा ओर उतरते भान, जनिअन की भीर जुरी झमकान-82

-- उचकत भगत धार नों जावें-21

-- तरग सिधारीं मइआ, तीन बर्स की मनू छाँड बिलखात-21

-- राजकुमार चढ़त हाँती पै (ऊँठ बजानैं)-26

-- मरत-मरत रनसूर बँदेला, हेरत रएँ मरदन की बाट-192

--- दामोदर मुख अगन देत बिलखो, हिलकिअन पुकारें "आइ" 1-248

(5) पूर्वकालिक--- कृदन्त-

लक्ष्मीबाई-चरित में इसका प्रयोग कवि ने ए, के, कें, प्रत्यय लगाकर किया है ।

— कबउँ बाँस की फन्द बाँद कें-21।

— मलक मचक्कें अँड़ लगाकें-21।

-- पी-पी कें बिठूर को गंगाजल उमगी चोगुनी उजास-22

-- मरकें लूक-साक जे पावें-24

-- हाँसी-हौदा देब, मनु कौ मन मचलौ-25

-- हँसकें कुसका लगे दिवान-25

--"हूँ हूँ" कयें कें-25

-- कही पेसुआ नें करें कें-25

-- पाती लिखवा कें-77

--पढ़कें हिरदेस ब्यास कौ, भरौ करेजौ-79

-- कलम मेंक-79

-- कर कलेउ मिलहन के द्वारें कढ़े-112

-- सबकों खबरें लै दे कें, ब्यारी की बेर किले में जायें-112

-- सीस झुका कर जोरे-179

इस प्रकार लक्ष्मीबाई-चरित में पूर्वकालिक कृदन्तों की रचना क में कवि ने कहीं-कहीं एँ अथवा ऐं का प्रयोग न कर केवल अकारान्त अथवा आकारान्त क्रिया के पूर्वकालिक रूपों से काम चलाया है । यथा "देब", मेंक, "कर", "झुका" आदि ।

§6§ क्रियार्थक संज्ञा-

कामता प्रसाद गुरु ने अपने व्याकरण में इसका विवेचन कृदन्तों के साथ न करके पृथक रूप से किया है । किन्तु, कवि की भाषा- सम्बन्धी विशेषताओं को उजागर करने के लिए इसका उल्लेख यहीं किया जा रहा है । क्रियार्थक संज्ञा कृदन्त का ही एक रूप है । लक्ष्मीबाई-चरित में इसका प्रयोग अनेक बार हुआ है । इसकी रचना कवि ने अन, आन, बे, ऐ आदि प्रत्यय लगाकर की है ।

— देबी-ढारन रोज हवारन जनीं जायें-198

— धरें कोंडिअन की लटकन-झालर की कुइँई बनाकें कूँड़-198

— माई के भजन गवात-198

— रन में अड़कें सीस कटानें-199

— भारत सें अँगरेजन भगानें-199

— बोल बनान साँकँनी गायें-132

-- दोउन बाँ देतन-लेतन में, भीतर ख लें भवें सकुच-कलेस-132

-- मिलबाबे की जुगत लगाँयें-131

-- दुपट फिरंगी दूर भगाबे सबनें मन में ठानी ती-120

-- हूला-धातो परो-118

-- जबर बलूली की कुटाई से गाँवन के गरीब उकताएँ-119

-- अबे उरजबे में तो सार न रै है-116

-- इत की उत करबें उरजान-113

-- भरबे उड़ान पुरबइआ-88

-- हूँ-हूँ कयें कैं हुदिआउठे महाउत बाँ हाँती उठुआन-25

-- मनू लगी दूनर अफनान-25

-- उतै लगे अँगरेज उपड़बे-186

--फिर कर बैं सोटा की मार-186

-- न तो काउँ के मन में केबे-सुनबे , देस-धरम की भावें-227

{4} <u>काल रचना</u>-

लक्ष्मीबाई चरित में मुख्य रूप से निम्नलिखित कालों का प्रयोग हुआ है--

1. सामान्य वर्तमान
2. सामान्य भूतकाल
3. सामान्य भविष्य
4. पूर्ण वर्तमान
5. पूर्वकालिक वर्तमान
6. पूर्ण भूत
7. हेतु हेतु मद भविष्य
8. सम्भाव्य भविष्य
9. वर्तमान आज्ञार्थ

1. <u>सामान्य वर्तमान</u>-

<u>उत्तम पुरुष</u> -- मैं अबला नारी हौं-130

एक वचन -- मैं का बहु झान्नी हौं ?-26 "औं" प्रत्यय लगाकर

बहु वचन -- हम चाकर हैं सब कैं रएँ हाकैं-27, "एँ" प्रत्यय लगाकर

-- हमें मूसर बदलानें ?-26

--- हम राजा हैं आइ-53 "ई" प्रत्यय लगाकर

--- हम महआ बन्दी-सी राखैं-61 ..

--- तुमतें हम हालई पूँछ न पावैं-76 ..

--- हम चाहत, अपुन कजात उदास न होवैं-76 "अत" प्रत्यय लगाकर

--- हम तो तुमारें कुल के हैं भलो चेत हैं-169 "ऐं" प्रत्यय लगाकर

--- हमें राज-सुख भाग न चाने-236 "ऐं" प्रत्यय लगाकर

मध्यम पुरूष-

एक वचन--- फिर तुम तो माती हो-215 "ओ" प्रत्यय लगाकर

बहु वचन--- हो हमारें तुम सब बैनें-155 "ओ" प्रत्यय लगाकर

अन्य पुरूष

एक वचन --- बीर होत बो जो समरांगन में जीतै-125 "त" तथा "ऐ" प्रत्यय लगाकर

बहु वचन --- बड़े हुऔं तो होयें हमें सुतर बदलानें-26 "ऐं" प्रत्यय तथा "य" प्रत्यय लगाकर

2. सामान्य भूतकाल-

उत्तम पुरूष

एक वचन--- हती कबउँ, अब तो दासी हों-242 "ई" प्रत्यय लगाकर .

--- मैं सिआइ सी लाद ओक सो ओक उठावैं-26 ..

--- इक बखत तो फिर छोड़े तुमें-163

--- मिटा न पाई, फिरंगी परदेसी-अधीनता जो दुख देन-242 "इ" प्रत्यय

--- रानीं बोलीं, "मैनों कहती, राखें साब सें, तुमसे बीर]-243 "ई" प्रत्यय

बहु वचन --- x

भूतकाल में उत्तम पुरूष बहु वचन का प्रयोग लक्ष्मीबाई-चरित में नहीं हुआ है ।

मध्यम पुरूष-

मध्यम पुरूष एक वचन तथा बहु वचन के भूतकाल में प्रयोग लक्ष्मीबाई-चरित में उपलब्ध नहीं है ।

अन्य क पुरूष-

एक वचन --- किलेदार नें काढ़ कुर्सी धरी बरनन में डार-142 "ई" प्रत्यय लगाकर

--- रानीं ने हामीं भर दी-142 "ई" .. ..

--- फिर बाके टोडारी जेल-140 .. ..

--रानी कहीं आन भई ठाँड़ी-140 "ई" प्रत्यय लगाकर

बहु वचन --सबरे सिरदारन नें दैकें बचन उनें समजाँइ-142 "आँइ" प्रत्यय लगाकर

--रातें आएँ मिहल में, रईअत के सब पंच चलाबेदार-142 "ए" ,, ,,

-- आठक सौ सिपाई गए-142 "ए" प्रत्यय लगाकर

-- साउँकार, बेपारी, नौतिदार, पुराने सब सिरदार, रानी सें बिन्ती कर बोले-142 "ए" प्रत्यय लगाकर

3.सामान्य भविष्य-

उत्तम पुरुष-

एक वचन -- हम तौ अमर लैहैं समार-142 "आर" प्रत्यय लगाकर

-- हम दैं है सब बर्षासत नगदपुका हैं-159 "ऐं" प्रत्यय लगाकर

-- हम डाँकू तौ पकराँयँ-161 "आँय" प्रत्यय लगाकर

-- हम सिबकाईं करैं, ईमान निबाँयँ-162 "ऐं" तथा "आँयँ" प्रत्यय

बहु वचन -- सो जिन कुचको, हुकुम करो, हम रन ठानें-159 "ऐं" प्रत्यय

-- कउँ अनीं परे पै उनेउँ चखा है मजा-169 "ऐं" प्रत्यय लगाकर

-- हम गोरन गैल छेड़ हैं जाय-188 "ऐं"प्रत्यय लगाकर

-- बस भर तौ हम गैलइ में हरवा दैं हैं गोरन कौ जौ-188 ,, ,,

-- हम रे हैं घाटन में हुसिआर-188 "ऐं" प्रत्यय लगाकर

मध्यम पुरुष-

एक वचन -- जौ कजन्त कें मिले चाकरी तुमें,फौज में तौ का चावें ?-162 "आव" प्रत्यय लगाकर

-- बच न पेबें पानीं में डूबें-163 "ऐब" प्रत्यय लगाकर

-- डूबी रेहौ राजा के रस में-67 "औ" प्रत्यय लगाकर

बहु वचन -- बोली मनू, "तुमें का हो गवँ,तुम रेहौ जीउँन भर संग-64 "औ" प्रत्यय लगाकर

अन्य पुरुष-

एक वचन -- का दस-पाँच डाँकुअन के माड़ारे सें,मिट वे जो छौत-161 "ऐ"प्रत्यय

-- जो भर है रईअत में हिम्मत-69 "ऐ" प्रत्यय लगाकर

-- धर दै हैं राजाय सुदार-69, "ऐं प्रत्यय लगाकर

बहु वचन -- किले ताईं तौ चौकस हुइउँ-174 "उँ" प्रत्यय लगाकर

-- बा के रत, अँगरेज न फिर कें जमाँ पाँयें भारत में पाँवें-186 "आँयें प्रत्यय लगाकर

-- कछू दिनन में जर ते जैं हैं उखर-186 "ऐं" प्रत्यय लगाकर

-- परैं बिरथाँ सब दाँवें-186 -ऐं" प्रत्यय लगाकर

4. पूर्ण वर्तमान-

-- गुजरो जनम चाकरी करतन, गहैं पेलुआ चरनन ठौर-33

-- बड़े दुखन की पाली बिटिआ, करी अभागी माता जाय-33

-- हम तो देखे गिरा-नछित्तुर, जोतिस फल को करो विचार-34

-- हम तो भले अब तमारैं अबै, तुमाहैं कोद तें राज तुमारैं-164

-- भगवा दएँ बागी नाँ तें, उनबाँ न कर दवें दाह-दबाह-164

5. पूर्ण पूर्व कालिक वर्तमान-

-- जीनें प्रान होंम कें, जग में आजादी की जोत जगाइ-19

-- अब नत्थे खाँ टीकमगढ़ को, उफना रवें करबे अखत्यार-164

-- जो जिन जानों हम डरवा रएँ, बैरिन तें मन में भै खाँयें-173

-- देखे रामचन्द्र नें अँगरेजी पल्टनयाँ घेरन जात-246

6. पूर्ण भूत -

-- देख चुके तो नत्थे खाँ की तोपन के गोलन की मार-196

-- भोगें बैठे ते गोरन को दुस्टीपन, दुपटो बेहार-196

7. हेतु हेतु मद भविष्य-

-- जो कजन्त मैं चली जाऊँ तो, तुमैं देऊँ सौगन्द धराय-244

-- जो हमारें राजा की थाती, आप राखिओ प्रान च- 244

-- जो कजन्त कऊँ हम घिर जाँयें, अपने हाँतन चीर डारिओ, जिअत सरीर न बे छी पाँयाँ-243

-- जे सब बातें छूँछी पर जैं, जो कजन्त हुइओ संजोग-36

8. सम्भाव्य भविष्य:-

-- जोड़ भोत है कितउँ मनू, अपनें घर की रानी बन जाय-34

-- अेक जोत तें इते देखिओ लाखन जोत उजागर होत | |-248

--

9. वर्तमान आज्ञार्थ-

-- दिनों आगवें, रिन धरन को उतार लो ।
   बिरन, बीर-बेस धार लो ।।-199

-- जननीं जनों आज के लानें
   उको दूद न तुमें लजानें-199

-- मन जिन ऊनों करौ, करत रवें अपनों करतब चित्त लगाय-243

-- छीमन्ते की माता जिन रवें, डर झटकारौ मन उनगाँव-84

-- आँखन को परदा भर राखौ, अपनई अपनों धरम रखावें-84

-- सीकौ तन हतयार चलाबौ, कसरत करौ, सरीर बनावें-84

10. आसन्न भूत-

लक्ष्मीबाई-चरित में कुछ उदाहरण आसन्न भूत के भी मिलते हैं ।

-- जाँ देखौ ताँ, करें जेइ सब, बातें जनीं, बनाकें झुण्ड-63

-- मिहलन कोदें दौरत जावें-10, लरका-बिटिआ लपक उझण्ड-63

-- बूढ़े-अदबूढ़े हरसावें, देख मिहल-तन दौर-धदौर-63

-- सब के मन में हुलक, हरस की उमड़त- उछरत अउत हिलोर-63

-- होड़ै-सी लग रईं तीं-66

-- टरवाँ नैन निहारत आ रईं तीं-67

-- मन में आ रऐं अेक, अेक जा रऐं से, घट मिटतौंयें विचार-67

इस प्रकार लक्ष्मीबाई-चरित के कवि ने काल-रचना के अन्तर्गत विभिन्न प्रत्ययों के योग से विभिन्न क्रिया-पदों की रचना की है । कवि ने वाक्य-संरचना पर भी पर्याप्त ध्यान दिया है । कुछ के उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं--

सरल वाक्य

-- बाहर कोट बसी नइ बस्ती-46

-- कछू जन्ट सावें टरवा लईं-47

-- अैसें कटी अकाली-बिपदा-54

-- हतो बजानों भरो-56

-- चतुर चितेरे से सुखलाल-57

-- कविअन बाँ दयें राज-सहारौ-58

-- रूपवन्त है-62

प्रश्न वाचक वाक्य-

--कैसी लगहे बुंदे, हो घुरुवाँ पै असवार ?-67

-- अधरम को जो करम, कौन के कैबे सें कर बैठीं काए ?-52

-- बारी मनू ! किते सें पा गईं, ऐसी जबर भाग चमकात ?-63

-- का बिगार पर है दिखबाँयँ-101

-- का हो गवें, सबरे राजन खाँ, काँ गवें सूरमाइ को तेज ?--109

-- काए किरोरन भारतबासी, दाबें मुठी भरे अँगरेज ?-109

-- रानी बोलीं, "अरे बुंदेलन में का करनें बीर-जगान-111

-- राजन के बेहाल, प्रजा खाँ कौन बचावै ?-125

-- कीखाँ रोबौ अपनी बिपदा, किखै सुनावे ?-125

-- तुमसेंउँ बड़ो और काउँ तुमें दिखानो ?-149

-- कउँ डाँकू के उतपात बतारँ ?-161

-- कैसें डाँकू बन जात ?-161

-- बाइसाब ! का करहें ? काँ गवें पढ़ो गुनों गीता को ग्यान-?*-215

निषेध-वाचक वाक्य-

--पै मन में सन्तोक न भवें तो-92

-- दबें-दबें कउँ सबरो राज न जायँ डकार-92

-- जैसें पावें न जीबे को रवें, हिरदो कुम्ल्यानों भवें छीन-108

-- मैं अपनीं झाँसी नइँ देहों, पिन्सिन में का आग लगादें-115

-- रोस पिन करो, उकतायावें पिन, देखो तेल, तेल की धार-119

-- बेजाँ बात न मानी-127

-- कोनउँ धरम न बुरवें, न हेटो, सबके अपनें-अपनें नेम-130

-- कटै न निरदोसी अँगरेज-135

-- न चलावै कोउँ भूल कें तेज-135

--

बिधि/आज्ञा/प्रेरणा/प्रार्थना-सूचक वाक्य-

-- निच्चै भवें, कारज करबे खाँ, बिटिआ बारे झाँसी आयँ-63

-- लोलइंअन भाँवरें परायँ-63

लक्ष्मीबाई-चरित में कवि ने कर्तृ वाच्य, कर्मवाच्य और भाव वाच्य तीनों वाच्यों का प्रयोग किया है ।

कर्तृ वाच्य-

- मैं सिआह सी लाद, अेक सों अेक उठाकें-26
- राजकुमार बनें, चुरवा बों साद न जानें-26

कर्म वाच्य-

- नाना तो नाना को छुटक राव सी देखो-26
- मोय बता वें रवें तो कुतका, बानें का लेवो-26
- दोइ टीपनों लै लई राजा-62
- राजा चू नें भरदई हों इ-63
- राजा नें दवें हुक्म-63
- दोइ मन्दिरन सैं लाखन की सम्पत लूटी-224
- पलका पै पौड़ारे हाँसन लाद-23
- मोयें न बानें महुआ-महुआ मोंयें भेक दो-27
- कछू जन्अ सोपें टरवा लई-47

उपर्युक्त वाक्यों में आई क्रियाएँ कर्म के अनुसार हैं ।

भाववाच्य-

- भई मूक मरी-सी-96
- लग उठी अकल-96
- सबरे जतन भाग के आगें, ओछे परतन लगे दिखान-101
- बढ़ो खिसेर दिनें-दिन देस में, अँगरेजन को जोर
- अनाचार के बोर हैं, उठना उठी मरोर-127
- गाँवन-गाँवन होंयें तमासे-132

संयुक्त क्रियाओं तथा प्रेरणार्थक क्रियाओं का उल्लेख पीछे किया जा चुका है ।

क्रिया- विशेषण/अव्यय-

1. क्रिया- विशेषण-

व्याकरणिक कोटियों में अव्यय के अन्तर्गत ऐसे शब्द आते हैं जिनके स्वरूप में लिंग, वचन, पुरुष कारक इत्यादि के कारण कोई विकार उत्पन्न नहीं होता । इस कारण इन्हें अविकारी भी कहा जाता है । पं0 किशोरीदास बाजपेयी ने सभी

अव्ययों को क्रिया-विशेषण नहीं माना है । बहुत-से अव्यय ऐसे हैं जिनका क्रिया की विशेषता बताने से कोई सम्बन्ध नहीं है ।

क्रिया-विशेषणों के मुख्य भेद चार हैं : स्थानवाचक, कालवाचक, परिमाण-वाचक और रीतिवाचक ।

1. स्थान वाचक- इसके दो भेद हैं- §1§ स्थिति वाचक §2§ दिशा वाचक । लक्ष्मीबाई-चरित में इनका प्रयोग बहुलता से हुआ है ।

§1§ स्थिति वाचक-

- राजा-मनू करे ठाँड़े, आगूँ-सागूँ पीताम्बर डार-69
- किलो मिलै, सम्पत अपार, ऊपर सैं हतयारन को ढेर-236
- उनैं न छेड़ो, किले भीतरैं जाबे मैं न करो अटकावैं-139
- जो ऊँच-नींच को विचार बनकैं बोटो-149
- दवैं हुकम बादशाह, कोट-बाहर काड़ो-156

§2§ दिशावाचक-

- दक्खिन तन चलो नागपुर लौं हतयाँयें-236
- सौ फुट ऊँची बुरजैं ठाँडीं, तरैं मुलक तहखान सुहात-41
- घनीं डाँग में भगज्जाँय, अग्गाँ-पिछूँ दोउँ देख-परेख-162
- इतै-उतै सैं जोर, लगा लवें घर मैं हतयारन को ढेर-30
- हमनों किते बजानों, काँ सैं तुमें गहाँवैं-141
- उतै बराती बैठे भोजन करबे सबहैं जथा-जस्थान-69
- घर हतो उतैंई, साँसिआ जू को अपनो-59
- जाँ जी चाँयें, कितउँ तीरथ मैं, मन उजया, बेतबा अनाँयें-163
- बच न पैवें पानीं मैं डूबैं, इतको सुरज उत लौं होयें-163
- उतै सैं कर रऐं कोउँ न हूला-चाल-174
- करें कटउआ क्राँती-बारन को, उतकीं कौजें फैल जायें-174

स्थान वाचक-

- आँगन-साँगन छैलें लगे फिरंगी परदेसी हरकान-31
- अब काँ रहैं नादान, दसहैं मैं बीस बरस की परत लखाइ-31
- जाँ देखो ताँ दो महीनाँ सैं, रईअत के जन हरस मनाँयें-34
- जाँ जिअे मिली गैल, भगे प्रान बचा कैं-144

-बे मिहल के पछीतैं, खिरकी सैं कूँदे-144

-करैं आर की पार हिनइँ, अँगरेजन की अँठन कढ़ जाय-193

-भग न पाँयँ अँगरेज कितउँ सैं, घेरैं हुनइँ मूँज कैं डार-227

-हिनाँ नावँ कों बागी नइँआँ, सबरे अपन जीउ लो जान-223

कालवाचक-

- कबउँ पेशुआजू नों मिलबे आँवें, दक्खिन सैं मिहमान-31
- तबइँ जरहँआ के रगनाथ सिंघ, लय जोधा पाँचि आन-193
- का करनैं अब मरनैं हैहैं, कलंकी कायर काऐं कहाँयँ-133
- अब तो करो कछू जुर-मिलकैं, नइँ तो मिटो जात है देस-130
- गिनैं-चुनैं तोपची बचे ते, ऐसे मैं बदले कों जाँयँ-207
- अली बहादुर भड़िरे बत, कबउँ-कबउँ दतिया आजायँ-184
- दतिया बारे कबसैं पकरैं धरम-धजा-169
- अबकेर ताजिअन मैं तुम हाँत न डारो-148
- जब जे बबैं उड़त, किले-मिहलन पौंचीं-148
- हमें ताँतिआ नें तुमावें मन्तक बतावें, बा जोरैं काल-228
- पाती पड़कैं राजा बोले, काल सोच हैं, परों बताँयँ-62

परिमाण वाचक-

- जोह मीत है कितउँ मनू अपनें घर की रानीं बन जाय-34
- कटीं फिरंगी फौजें अदिआँ, बगरो रकत, धरन भई लाल-192
- मनैं छबीली कयँ सैं, तनक औंठ तो खोले-28
- हँसगइ मनूँ इतेकहें पै, नाना मुस्क्यानैं-28
- हो गई नोअक लाल की , मनू रूप भरपूर-29

लगी नैंक, ता पै इतेक चोचले बतानैं ।-26

- जात किलेक दूर नों हुइँअं, हो कैं घुरवा पै असवार-32
- आँग की लोसन मैं परकें, तनक-मनक तो भई हैरान-187
- पौंकि तनक ताँतिआ दीखत, जबर महातुर परे दिखात-33

रीतिवाचक-

- ऐसें सोचत-ब मोचत मनू, ऊँग छपयानीं-27
- बोले दीखत, "सुनों पेशुआ, ऐसी टीप न देखी और-33

धमाधम-98 । कुछ ध्वनिवाची-"किड़ किड़, कड़-कम-81, किनमिन-61, तथा कुछ यथाक्रम वाची जैसे- बेर-बेर-138, अथा-जस्थान का प्रयोग किया है । कवि ने कुछ क्रिया विशेषणों की रचना दो भिन्न संज्ञाओं और कुछ की संज्ञा तथा विशेषण पदों की द्विरुक्ति से की है । इनके कुछ उदाहरण निम्न हैं-

§5§ दो भिन्न संज्ञाओं से बने क्रिया-विशेषण-

खर्च-पात-125, खबरैं-डगरैं-71, कुतुर-फुतुर-148, जगर-मगर-71, ठोक-पीट-138, ढूंढ़-ढाँढ़-36, दौर-पदौर-22, हैन-लैन-126, मिले-जुरै-35, मान-मरोर-22, आदि ।

संज्ञाओं की द्विरुक्ति से जैसे घरी-घरी पै-139, नगर-नगर-71, दिन-दिन-125, विशेषणों की द्विरुक्ति से जैसे ठाट-बाट, साफ-सुद्ध, मुक्ख-मुक्ख आदि ।

§6§ लक्ष्मीबाई-चरित में कुछ अन्य क्रिया विशेषण मर "नों", "तन", कोद हैं जिन्हें "तक" अथवा ओर के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है । जैसे-

- मनू पेसुआ जू नों पोंची-32
- दिन भर चल इंदिआरी दरतन-134
- कबू कहें पच्छिम तन आवें-203
- इते दो दिनां नों रहँतीं-205
- लखनऊ तन गईं अँगरेजन की फोज-240
- कर गईं दगा मिलीं बा-कोद-246

बलाघात-

कवि ने बलाघात के रूप में "इ", "उ" तथा "ऐ" का प्रयोग किया है । इनका अधिकतर प्रयोग सर्वनाम, संज्ञा, विशेषण तथा अव्ययों के साथ किया गया है ।

- सबरैं मन्दिरन वों लगगए ते-34
- जोड़ भौत है कितउँ मनू, अपनें घर की रानीं बन जाय-34
- पोंचतनईं मन में छोकी-32
- अब कों रइ नादान, दसईं में बीस बरस की परत लखाइ-31
- इइओ तबईं, घरी जब हा है ।-31
- तोउ समोक न पाबे मोरोपन्त-31
- कबउँ पेसुआजू नों मिलबे आबे, दक्खिन सें मिहमान-31
- तबईं राजकबि नें सुरसें देवी-नन्दन के कवित्त सुनाएँ-80
- पैलउँ-पेल किले की होरी-81

तृतीय अध्याय

शब्द-सौन्दर्य

शब्द- रुचि-आवृत्ति परक अध्ययन-

किसी काव्य में जिन शब्द-गुच्छों का प्रयोग बार-बार होता है उनसे शब्द-प्रयोग के प्रति कवि की विशेष रुचि का पता चलता है। व्याकरण के स्तर पर शब्द का विश्लेषण रूखा होता है किन्तु शब्दों के पीछे जो चेतना विद्यमान रहती है उसका अनुशीलन उतना ही रसपूर्ण होता है। शब्दों के पीछे दो तरह की चेतना काम करती है। एक तो जीवन-गत चेतना दूसरी प्रयोक्ता की चेतना। लक्ष्मीबाई-चरित में भी ये दोनों चेतनाएँ काम कर रही हैं। मेरे शोध की सीमा केवल शब्दों के व्याकरणिक और भाषा-शास्त्रीय विश्लेषण तक सीमित है, भाषा के मनोवैज्ञानिक या काव्य-शास्त्रीय पक्ष के विश्लेषण से मेरा कोई सरोकार नहीं है इसलिए यहाँ पर इन दो पक्षों को न चाहते हुए भी नजरंदाज करना पड़ रहा है। फिर भी शब्दों की आवृत्ति के अनुशीलन से कवि की रुचि और भाषागत-सौन्दर्य का यहाँ थोड़ा-बहुत विवेचन किया जायगा।

शब्द -संध्वनि-योजना-

लक्ष्मीबाई-चरित में कवि ने एक ही स्वर या वर्णों की कितनी संध्वनियों की आवृत्ति की है अथवा स्वर-संध्वनि या व्यंजन-संध्वनियों की उसने क्या योजना बनाई है इस पर पीछे स्वर और व्यंजन-गुच्छों के संयोगों के विश्लेषण के समय विचार किया जा चुका है। वहाँ पर यह भी देखा गया था कि लक्ष्मीबाई-चरित में किन ध्वनियों/संध्वनियों के संयोग अधिक मिलते हैं और किनकी उपस्थिति तुलनात्मक रूप से विरल है। यहाँ पर आवृत्ति को ध्यान में रखकर संध्वनि-योजना पर पृथक् दृष्टि से विचार किया जा रहा है। कवि की रुचि विशेष प्रकार की संध्वनि-योजनाओं के प्रयोग की अधिक है। यद्यपि उसकी यह संध्वनि आवृत्ति अनुप्रास अलंकार अथवा उसका "पैटर्न" अलंकार पद्धति पर नहीं है। ऐसा भी नहीं लगता है कि कवि संध्वनियों की योजना केवल शाब्दिक स्तर पर ही कर रहा है। वह कथ्य और छन्द दोनों की माँग के अनुसार इन संध्वनियों की योजना करता है।

लक्ष्मीबाई-चरित की भाषा ठेठ बुन्देली होते हुए भी ग्राम्यता अथवा गँवारपन से रहित है। कथ्य के अनुरूप उसकी सरलता और सुबोधता में ही उसकी

से वह अपने कथ्य को विशेष शब्द-योजना के द्वारा सम्हारता है-

- दो-दो कढ़ीं दतुलिआँ
- दो दो बोलै बोल
- चीज-बस्त की
- उठा-धरी
- जौंन-कछू हाँतन पर जावै -- 21

अगर कहीं कवि का मन विशेष उपमानों की ओर मुड़ जाता है तो वह ऐसे अप्रस्तुत विधान का प्रयोग करता है जिससे उसकी संध्वनि योजना में कोई बाधा न पड़े और उसका कथ्य भी उभर आये । ऐसे स्थलों पर कवि की शब्द-संध्वनि योजना के प्रति सतर्कता दर्शनीय है-

- तन-मलंग
- खनकत-सी बोली
- निखरो उबत सलोनों गात
- बड़री-सी लुभाउनी अँखियाँ
- दवाँ छब मुख तेज-उदोत
- जैसें चन्दामल में उवी होय
  सुरजमल कैसी जोत -- 21

कवि तीसरे सर्ग में झाँसी की पृष्ठभूमि का वर्णन करते हुए उसकी तुलना काशी से करता है । ऐसा करने में वह दो सार्वनामिक विशेषणों का प्रयोग कर अपनी विशिष्ट रुचि का परिचय देता है-

झाँसी कासी सें ब से भली, जो करनी, बो ग्यान ।
बो तीरथ, रनभूम जो, बो बूढ़ी, जो ज्वान ।। -36

यहाँ कवि ने "जो" तथा "बो" शब्दों की तीन-तीन बार आवृत्ति की है । इसके पश्चात् कवि ने झाँसी महिमा-वर्णन के पूरे प्रसंग में "अन" संध्वनि की योजना सैंतालीस पंक्तियों में सैंतालीस बार की है । इसमें भी एक वैशिष्ट्य और लक्षित करने योग्य है कि हर पंक्ति की अन्त्य तुक "रन" शब्द अर्थात् "र" और "न" व्यंजन ध्वनि पर समाप्त होती है । इस प्रसंग में प्रयोग किये गये "अन" संध्वनि और "रन" अन्त्य मिलने वाले शब्दों की तालिका निम्न प्रकार है-

इन्हीं ध्वनिग्रामों के संयोग से कवि ने 47 शब्दों का निर्माण किया है । इन तीन व्यंजन ध्वनि-ग्रामों में एक निरर्थक है{यारन} और सबके पृथक्-पृथक् भी अपने अर्थ हैं । इनमें से कवि ने "हारन" व्यंजन ध्वनिग्रामों से छह, "वारन" से दो, "दारन" से एक, "कारन" से तीन, "पारन" से चार, "गारन" से नौं, "जारन" से तीन, "टारन" से तीन, "मारन" से एक, "झारन" से तीन, "सारन" से दो, "बारन" से तीन, "नारन" से एक, "यारन" और "तारन" से एक-एक शब्द का निर्माण किया है । इन सभी शब्दों में मुख्य रूप से "आरन" प्रत्यय की आवृत्ति की गई है । एक ही स्थल पर अन्त्य मिल के रूप में इस प्रकार समान ध्वनिग्रामों की आवृत्ति कवि ने फिर नहीं की है । हाँ, अन्य संध्वनियों की आवृत्ति उसने अवश्य की है । एक स्थल पर उसने हर पंक्ति में समान ॥ संध्वनियों की आवृत्ति की है और अन्य एक-दो स्थलों पर "ऐं" स्वरग्राम की अनेक बार आवृत्ति की है ।

एक स्थान पर कवि ने "हरदी कूँ कूँ" महाराष्ट्रीय उत्सव के बाद बारह-मासी {बुन्देली ख्याल} की रचना की है । इससे कवि की शब्द संध्वनि-योजना का पता चलता है । यहाँ पर पूरी पंक्ति में एक-एक संध्वनि की आवृत्ति की गई है । समान ध्वनिग्रामों वाली शब्द योजना में कवि की विशेष रुचि है । संध्वनियों का पूरा "पैटर्न" यहाँ उपलब्ध होता है । बारहमासा में कवि मन्थर गति वाले शब्द-गुच्छों का प्रयोग करता है । इसका शब्द सौन्दर्य समान संध्वनि वाले शब्दों पर निर्भर है ।

- आगवें असाड़
- ग्रीसम पछाड़
- घन घरें बाड़, उमदनिं
- कारे-कजरारे
- धुर पनिआरे
- उरयारे धमकनिं
- बुँदिअन- फुआर
- सिअरी बयार
- पनिआर, हीय हरसावै
- तन-सवन मोर
- दादुरन-सोर
- नचकान मोर सरसावै

-छपरा गिरन्त
-घर में न कन्त
-टपका अतन्त उतरा में
-गए, रनचेतन, वे मन चेतन
- जानें कितेक कुतरा में -- 83

यहाँ पर "आइ", "आरे", "आर", ओर, अन्त, अन प्रत्ययों के सहारे शब्द निर्माण किया गया है । एक-एक प्रत्यय से कई-कई शब्दों का निर्माण किया गया है । अन्य संध्वनि-शब्दों की योजना इस प्रकार है-

हरकावै, डरावै, गरावै, नैवें, करेजें, प्रान हरेजें, बदरा, बदरा, अमिआँ गदरा, झूलें, फूलें, ऊलें, सरपेटन, चेटन, चपेटन, हरयानें, फरयानें, पतयानें, रतिआँ, छतिआँ, बतिआँ, चमकें, ममकें, झमकें, धार, फार, अपार, झिरी, घिरी, झूमईं, घुमईं, उमईं, जुड़ाउँ, भाउँ, जाउँ, आन, पिआरन धान, उजयान-भान, सेत, चेत, वेत, रैंन, चैंन, अैंन, ऊँग , तूँग, मूँग, मुँगुलिआँ, चिलिआँ, खिलिआँ, पूजें, गूँजें, जूजें, अबान, पुतान, उजआन, प्रीत, सीत, तीत, कलान, दिपान, पान, उजिआर मान, मिलान, रिझान, अनौंयें, बँधौंयें, जायें, सजौंयें, गौंयें, छिड़वौंयें, अगहन, कहन, सहन, गहन, रौंम, चौंम, जौंम, बिआवें, उठावें, बधावें, उठौंय, उतरौंयें, कौंयें, खिलबौंयें, घटान, बढ़ान, खिरिआन, तिलान, कटान, करान, आन, बँधान, कँपान, लगौंन, अगौंन, बिछान, हड़कूटे, कूटे, टूटे, उगईंआँ, पीउँ, उरईंआँ, छईंआँ, जीउँ, छीउँ, दिवात, अदरात-रात, उदगात-गात, अबान, घिरान, थकान, डरैं, मरे, परे, झरे, बरसे, हरसे, तरसे, फरन, जरन, भमरन, औंयें, अनौंयें, छौंयें, बसन्त, पुजन्त, बसन्त, अबान, बढ़ान, उड़ान, झरान, आन, लिपटान, पपईंआ, तुरईंआ, दईंआ, मौंर, झौंर, मचौंर, बसन्त, कन्त, अतन्त, दुपरिआ, नगरिआ, करिआ, गावें, सुनावें, बरतावें, गौंयें, मझौंयें, बरौंयें, बरो, पसरो, भरो, हुरिआनें, तानें, मिआनें, उमदानें, छानें, हुरदंगा, मलंगा, छलंगा, लगौंयें, भिड़ौंयें, छिड़ौंयें, ठेल, रेल-पेल, गैंगिल, गुलाल, घाल, लाल, पहार, बहार, निवार, सुरंग, उमंग, संग, कराईं, भाँईं, ललवाँईं, गौंजी, मौंजी, जौंमईं, आन, तपिआन, भान, घमिआन-थान, लगान, उड़ान, चनान, धरैं, भरैं, करैं, सनौंयें, लगौंयें, सुदरौंयें, अबास, हुलास, उजास, गुईंअन, पुतईंअन, दुईंअन, उतरौंयन, दुबौंयन,

करौंयन, लपट, अट-पट, दुपट, जेठ, पेट, नरेट, तबा, अबा, झबा, अगान, उफान, प्रान, बहरें, करें, मरें, आयें, जायें, भिंजायें, दुरायें, तपायें, फलकायें, तपैं, चुवैं, कंपैं, औंयें, जौंयें, दगैं, लगैं, तगैं, पिरायें, ललांय, जोंयें, बिनान, बुदान, जुरान, गारें, उगारें, टारें--86 से 89 तक

शब्द संध्वनियों के अन्तर्गत उपर्युक्त शब्द-गुच्छों का कई दृष्टियों से विवेचन किया जा सकता है । इन दो सौ 54 शब्द-गुच्छों में कवि ने "आबे", एँ, आ, आने, अन, इऔं, आर, हरी, आउँ, आन, स्त, ऐन, ऊँग, इआँ, इत, औंयें, औंम, आवें, उँ, आत, अन्त और, इआ, आनें, अंगा, स्त, आल, अंग, औंयें, आस 3। प्रत्ययों का प्रयोग किया है । इन शब्दों से कवि की समान संध्वनियों के प्रयोग के प्रति रुझान स्पष्ट होती है । कवि ने एक ही पंक्ति में अधिकतर समान संध्वनियों की योजना की है । हर पंक्ति में संध्वनि की योजना परिवर्तित हो जाती है। यह संध्वनि की योजना हिन्दी के रीतिकालीन कवियों की तरह अपनी शब्द-चमत्कार की ओर ध्यान खींचकर पंक्ति की लय बढ़ाती है और कथ्य की अभिव्यक्ति में सहायक होती है । सम-संध्वनियाँ मिलकर भाव को गाढ़ बनाती हुई जीवन के एक-एक पक्ष को उरेहती हुई प्रभाव को तीव्र और सघन बनाती जाती हैं । कुछ पंक्तियों का उदाहरण उचित होगा--

> साँउन हरकाबे, झपक डराबे, गरज गराबे मानीं
> बूँदन की नेजें, छाल करेजें, प्रान हरेजें ठानी ।
> भरबें बदरा, गरजें बदरा, अमिआँ गदरा टपकाबें,
> झूलन झूलें, धनिआँ फूलें, जोबन उलें झपकाबें ।
> भौंरा सरपेटन, चकरी-पेटन, बिनो झपेटन बेलें,
> उसर हरयानें, तरु फरयानें, धर पतयानें बेलें ।--86

उपर्युक्त पंक्तियों में सम संध्वनि-योजना मात्र ध्यान आकर्षित करने के लिये नहीं है । संध्वनि-योजना के अनुसार कथ्य की माँग है । इसलिए यहाँ कवि ने जीवन और प्रकृति के संश्लिष्ट चित्र को उरेहा है । उसकी ये संध्वनियाँ बार-बार आवृत्त होकर जीवन और प्रकृति के हिले-मिले भाव को और मार्मिक बनाती हैं--

-मदयाँ रति आँ,
- दरके छतिआँ
- उनकी बतिआँ उमयावें

- बिजुरी चमकैं
- बदरा बमकैं
- बौझर झमकैं धमकावै — 86
- कातिक अवान
- घर द्वार-पुतान
- दिअरा उजयारैं दिवारी
- परतीत प्रीत
- सुरसुरी सीत
- सिअरायँ सीत हितकारी
- सोरह कलान
- चन्दा दिपान
- उजयारमान जुनहइआ
- कातिक अन्हायँ
- गाँठन बँधायँ
- नित ताल जायँ इँदिआरैं
- डलिआँ सजायँ
- सुर गीत गायँ
- छिड़वायँ स्याम गलिआरैं ।
- आगवैं अगहन
- का कहन
- ठंड की सहन, गहन-सौ पारैं । —87
- सुत धरैं
- कुठीला भरैं

बखन्नी- करैं

- पटेला डारैं

-गाड़ी सजायँ

- आँगन लगायँ
- सुदरायँ रहँट की आरैं

9= अकती अवास

- बिटिअन बुलात

- चौगुन उजास भर जानैं
- बैलें गुइँअन
- पुतरान-पुतइँअन
- दुइँअन ब्यावें रचानैं
-                ---88---

उपर्युक्त उदाहरणों में प्रयुक्त संध्वनि-योजना पर विचार करने से एक तथ्य और उजागर होता है । कवि ने प्रत्येक पंक्ति में एक ही प्रत्यय से निर्मित व्यंजन ध्वनिग्रामों से बनीं संध्वनियों की योजना की है किन्तु प्रत्येक पंक्ति का जहाँ अन्त होता है वहाँ उससे एक अन्य संध्वनि की आवृत्ति की है । इस प्रकार इन पंक्तियों में संध्वनियों की आवृत्ति दो स्तरों पर होती चलती है जो विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है । जैसे- कुछ उदाहरणों को लीजिए- पहले उदाहरण में कवि ने रतिआँ, छतिआँ, बतिआँ में आई संध्वनियों की योजना की है । इसकी दूसरी पंक्ति में वह "चमकैं", "बमकैं", "झमकैं" शब्दों की आवृत्ति करता है किन्तु, इन दोनों पंक्तियों के अन्त में वह पुनः एक नवीन संध्वनियों से निर्मित शब्द की आवृत्ति करता है । जैसे, उमजावैं, धमकावैं । ऐसा वह प्रत्येक पंक्ति और पूरे "बारहमासे" में करता जाता है । इस प्रकार इस पूरे प्रसंग में दुहरे स्तर पर समान व्यंजन तथा समान स्वर-ध्वनिग्रामों से निर्मित शब्दों की आवृत्ति मिलती है । यथा- दिबारी-हिलकारी, डँदिआरैं-गलिआरैं, पारैं-आरैं, जानैं-रचानैं, उमदाँ, धमकानैं, हरसावैं-तरसावैं, उतरामैं-कुतरा मैं, मानीं-ठानीं, टपकावैं-उपकावैं, बैलें-बैलें, उमजावैं-धमकावैं, जलधारा-दुबदारा, उबरा कैं-ठबरा कैं, गरमानी- दैपानीं, तरसावैं-दरवावैं, बेरीं-झरपेटीं, जुनहइँआ-कनहइँआ, पारैं-उतकारैं, मारीं-नारीं, परैं-हरैं, सिसकारी-तारी, हारैं-भारैं, मारैं-सिसकारैं, फेरैं-पेरैं, सेती-येती, भावैं-हरसावैं, पुरबइँआँ-बेलइँआँ, हूकैं-कूकैं, मोंड़ैं-झाँकैं, भैलैं-पैलें, भिआनैं-ठानैं, ठानैं-हुदिआनैं, उलीचैं-अदबीचैं, सतरंगे-बन रंगे, हरीरी-पीरी, खिरिआनैं-पिसिआनैं, डारैं-आरैं, ठानैं-गुँगिआनैं, अफरे-से भरे-से, काढ़ैं-उचाढ़ैं, फतूरी-ससूरी, सिसिआनैं, झपकानैं, करोरीं-स्योरी, दुइ प्रानी-कुम्हानीं ।   --86 से 89 तक --

अन्त में प्रयुक्त इन संध्वनियों की अगर विवेचना की जाय तो "ऐं" ध्वनिग्राम की आवृत्ति कवि ने बावन बार की है । और स्कार संध्वनि का प्रयोग अन्त्य मिलों में केवल चार बार किया है ।

एक स्थल पर "वे" संध्वनि की आवृत्ति सात बार करता है । प्रसंग है रानी विवाह के पश्चात झाँसी में और वहाँ उसे अतीत की स्मृतियाँ याद आने लगती हैं । वह बचपन की स्मृतियों से लिपटे उन स्थलों को याद करती हैं--

- वे गंगा मईआ की लम्झार कछारें
- वे पीपर-बरके बिरछा, ढुपट पठारें ।
- वे हरी मकुईअन की झाँगें अलफेरी,
- वे लद्दर-पद्दर बेर फरीं झरबेरी ।
- वे गाँव-गैल की जनीं, कछोटा मारें,
- वे नंग-धरंग संग बचवा किलकारें ,
- वे धरें कँदा हर-बखर डगर हरबारे,
- गरमीं की लपटें-झपटें सहत उगारे ।   --72-

"वे" सार्वनामिक विशेषण की आवृत्ति से स्मृतियाँ और गाढ़ होकर रानी के मन को झँपने लगती हैं ।

छठवें सर्ग में कवि केवल "कें" संध्वनि का प्रयोग अन्त्य मिल के रूप में निरन्तर करता है । वह इस संध्वनि की आवृत्ति तीस बार करता है । और "एं" संध्वनि की आवृत्ति पैंतालीस बार करता है । भरकें, करकें, उतरकें, परकें, फरकें, उनगरकें, डर कें, अकर कें, घर कें, कतरकें, भरकें, बरकें, टरकें, परकें, समर कें, पकर कें, करकें, धर कें, भर कें, हँस कें, कसकें, गसकें, चसकें, करकें, अरकें, परकें, मनाकें, बनवाकें,--95 से 97 तक ।

द्विरुक्ति -

संध्वनियों अथवा ध्वनिग्रामों की योजना से कवि की विशेष शब्द-रुचि का पता चलता है । उसकी इस रुचि की पुष्टि द्विरुक्तियों के प्रयोग से और स्पष्ट होती है । उसको विशेष शब्द गुच्छों के प्रयोग पर अच्छी महारत हासिल थी । उसने इन शब्द-गुच्छों का प्रयोग शब्द-सौन्दर्य को निखारने और प्रोक्ति की संक्षिप्तता के उद्देश्य से की है । द्विरुक्तियों में उसने एक ही शब्द, भिन्न शब्द, सार्थक-सार्थक, सार्थक-निरर्थक, कहीं संज्ञा पदों, कहीं विशेषणों, कहीं कृदन्तों और कहीं क्रिया विशेषणों की आवृत्ति की है ।

0 <u>एक ही शब्द की द्विरुक्ति-</u>

0 अँग-अँग-20, नौं-नौं-20, दो-दो-21, पी-पी-22, पोरा-पोरा-30, चार-चार-47, दूर-दूर-47, बेर-बेर-51, तन-तन-53, दिन-दिन-57, जै-जै-67, भाँत-भाँत-68, अगि-अगि-68, हँस-हँस-68, डगर-डगर-70, द्वार-द्वार-82, घर-घर-85, डरायँ-डरायँ-91, मानुस-मानुस-91, दबैं-दबैं-92, बातन-बातन-95, पात-पात-95, देख-देख-96, काँ-काँ-96, बेर-बेर-97, का-का-97, द्वरीं-द्वरी-100, कबउँ-कबउँ-102, हाय-हाय-105, गिर-गिर-106, भलीं-भलीं-111, मार-मार-111, जुदे-जुदे-113, बात-बात-113, भीतर-भीतर-119, मड़अन-मड़अन-125, नए-नए-130, अर-अर-131, तरें-तरें-134, मुक्ख-मुक्ख-135, चुन-चुन-135, घरी-घरी-139, झुक-झुक-140, रोम-रोम-142, बच्चा-बच्चा-142, थम-थम-152, बिच-बिच-153, मरत-मरत-156, जोर-जोर-166, परें-परें-172, पचास-पचास-173, सौ-सौ-173, डरैं-डरैं-174, दोर-दोर-177, दै-दै-177, छिन-छिन-181, भगत-भगत-183, मरत-मरत-198, टेर-टेर-192, पल-पल-206, पग-पग-209, जन-जन-209, सुन-सुन-209, पिन-पिन-210, गा-गा-210, उठा-उठा-210, डाँगन-डाँगन-72, भरो-भरो-72,

. बिचलत-बिचल-34, काँनन-काँनन-106, टूँका-टूँका-170, बीन-बीन-197, भर-भर-102, हलके-हलके-124, बेर-बेर-125, अपनें-अपनें-166, गाँवन-गाँवन-171, धिरे-धिरे-171, बड़-बड़-175, रोम-रोम-176, लगा-लगा-172, कोनउँ-कोनउँ-211; दै-दै-192, अगि-अगि-198 , दल-दल-194, एक-एक-211, हरें-हरें-124

एक ही शब्द की इन द्विरुक्तियों का निर्माण कवि ने कुछ तो संज्ञा पदों से किया है । जैसे - अँग-अँग, पोरा-पोरा, तन-तन, दिन-दिन, डगर-डगर, घर-घर, मानुस-मानुस, पात-पात, बच्चा-बच्चा, गाँवन-गाँवन, आदि । कुछ की रचना उसने कृदन्तों से की है । जैसे- हँस-हँस, देख-देख, गिर-गिर, मार-मार, चुन-चुन, थम-थम, झुक-झुक आदि । कुछ का निर्माण विशेषणों से किया है-चार-चार, भलीं-भलीं, बात-बात, नए-नए, आदि। कुछ की रचना क्रिया विशेषणों से की गई है । जैसे- तरें-तरें, भीतर-भीतर, बेर-बेर , अगि-अगि आदि । कहीं-कहीं कवि ने दोनों सार्थक शब्दों की द्विरुक्ति की है ।

तमके-तरबार-200, लौटा-फेर-204, लटकन-झालर-198, धनी-जन-160, गली-पुरन-179, इतकी-उत-206, गैल-गली-118, एक-दूसरे-124, झार-पोंछ-165, वाँ-ताँ-169, अब-तब-172, आसूँ-तासूँ-173, देख-परख-174, डेरा-डाँगर-178, धमकैं-जमकैं-198,

गूजर-जाट-179, पमार-बुंदेला-179, दो-तीन-179, छेदत-भेदत-183, चतुर-चरबाँक-184, पुगल-चौबोल-184, देस-धरम-186, धरम-करम-186, देस-धरम-197, देइ-देवता-198 ।

ऊपर सार्थक-सार्थक तथा सार्थक-निरर्थक जिन शब्द-गुच्छों की तालिका दी गई है उससे कवि की विशेष शब्द-रुचि का पता चलता है । लक्ष्मीबाई-चरित की भाषा समास-प्रधान न होते हुए भी कवि ने उसकी सम्पूर्ति युग्म शब्दों की द्विरुक्ति से की है । इन शब्दों के प्रयोग में उसने उन्हीं शब्दों को चुना है जो बुन्देलखण्ड के पूरे क्षेत्र में प्रचलित हैं । इससे उसकी शब्द-सम्पत्ति का पता चलता है । ठेठ भाषा के प्रयोग के प्रति इन द्विरुक्तियों से उसका विशेष रूख संकेतित होता है । प्राय: व्यवहार अथवा प्रचलन में विद्यमान इन शब्द-गुच्छों ने उसकी भाषा को सहजता प्रदान की है । सार्थक-शब्दों की द्विरुक्ति में आये शब्द प्राय: एक साथ बोले जाते हैं । एक शब्द मन में आते ही दूसरा अपने आप मन में कौंध उठता है । यथा- चीज-बस्त, खेंच-तान, कूट-पिट, खबा-पिबा, सिलेट-बरती, पूजन-अर्चन, दान-दच्छना, गिरा-नछित्तुर, सुख-सम्पत, दुख-दन्द, भाला-तरबार, बाग-बगीचा, दरीं-गलीचा, बाँड़ि-धुतिआँ, खेती-बारी, जग्ग-जाग, साक-दुसाखा, लोग-लुगाँई, ताल-तलइँआँ, गौनें-गुरिया, हरदी-रोरी, नचबो-गाबो, तीन-तमन्चा, हाँत-पाँव, खाबो-पीबो-ऊँच-नींच, बड़े-बूढ़े, बड़े-बारे आदि ।

इसी प्रकार जिन निरर्थक शब्दों की द्विरुक्ति की है वे शब्द भी प्रचलन से आहरित किये गये हैं । यथा- उठा-धरी, दौर-पदौर, तुक-ताक, ठाट-बाट, सजीं-बजीं, गिरत-परत, छोड़-छाड़, आन-बान, वर्ष-पात, काट-कूट, धूम-धाम, फौज-फाँटो, दाँव-पेंच, काम-धाम, चुप-चुप, चुतुर-पुतुर, होड़ी-होड़ाँ आदि ।

द्विरुक्तियों की निर्मित अथवा व्याकरणिक कोटियों की आवृत्ति की दृष्टि से इनका विवेचन बड़ा रोचक है । प्राय: कवि ने संज्ञा, विशेषण, क्रिया, क्रिया विशेषणों अथवा सर्वनामों से बने विशेषणपदों से इनका निर्माण किया है । इनसे कवि ने पारस्परिक सम्बन्ध की गाढ़ता , अतिशयता, भेद, एक वर्ग की प्रतीति, अभाव अथवा निश्चय का द्योतन कराया है । यथा- "हिलीं-मिलीं तथा "ऊँच-नींच-"

- आन सजीं नचकिनें जिने में हिलीं-मिलीं रहँआत की नार-90

- सिरदारन की घरबारिन नें ऊँच-नींच को तजो विचार-90

खबा-पिबा-28, तिलैट-बरती-32, पूजन-अर्चन-34, जग्ग-होम-34, दान-दच्छना-34, गिरा-नछित्तुर-34, सुख-सम्पत-36, दुख-दन्द-40, भाला-तरबार-43, बाग-बगीचा-43, मठ-मन्दिर-43, दरी-गलीचा-49, बड़ि-धुतिआँ-49, सोनों-चाँदी-49, खेती-बारी-49, भजन-जाप-51, जग्ग-जाग-51, किरानो-मेबा-51, उत्तर-दक्खिन-51, मिली-जुली-51, अरती-सरसों-51, साल-दुसाला-51, लोग-लुगाँईं-52, रीबैं-किलपैं-52, गइआँ-बछिआँ-52, पत्ता-छालैं-52, मउँआ-गुलगट-52, बेर-मुकुइँआँ-52, ताल-तलईंयाँ-52, मड़ा-बुखारी-53, गाँनि-गुरिया-53, दस-बारा-57, नाप-तौल-57, फल-फूलन-57, जोतती-पण्डित-58, फूले-फले-58, कीरत-करनी-61, मढ़-मन्दिर-66, नट-बहेलिआ-68, सुपारी-गोटी-68, गोरधन-छाजन-68, डहर-कुठील-71, मलखम-लेजम-72, गरमी-बरसात-75, नचबो-गाबो-76, गात-बजात-81, हरदी-रोरी-82, इक-दूजी-83, कुस्ती-कसरत-85, तीर-तमन्चा-85, बाग-बगीचन-85, पुतरान-पुतइँअन-88, नाच-गाना-89, छोटी-बड़ी-90, कुरान-पुरान-91, मन्दिर-मस्जिद-91, बूढ़े-बढ़े-93, ढुलक-मँजीरा-98, खेलत-हँसत-100, हाँत-पाँच-101, खाबो-पीबो-102, बिधि-बिधान-105, दो-चार-105, पूजा-नमाज-129, देवता-पीर-129, गीता-कुरान-129, ऊँच-नींच-109, बूढ़े-बारे-111, आला-ऊदल-111, तालीम-बजानैं-116, बरछी-तरबार-123, साउँकार-बेपारी-125, कथा-पुरान-129, धरम-ईमान-132, दैतन-भैतन-132, पूरब-पच्छिम-133, कहँ-सुनीं-134, पूँछि-बताएँ-134, हाल-चाल-134, अमन-चैन-126, राज-काज-126, तानैं-बानैं-126, खूँटी-साँसी-126, दैंन-लैंन-126, लैबो-दैबो-135, जुर-मिल-135, तीन-चार-137, नौं-दस-137, खान-पिअन-139, चकरी-बाँदो-139, मौंड़ी-मौंड़न-139, दुके-छिपे-140, न्याँव-नीत-143, छल-बल-145, दिन-छिन-146, ढोल-ताजिआ-146, सिआ-सुन्नी-146, गुरिया-गानैं-148, छुरी-कटारैं-148, दुसरी-तिसरी-150, गुन्ज-गोप-150, हिल-मिल-152, इतै-उतै-152, बऊ-बिटिआँ-152, अली-बली-152, पटा-बनेती-152, कबीला-चौधरा-153, हतिआ-चोरा-154, ककना-बजुआँ-बगलिआँ-153, दुसरी-तिसरी-154, चकरी-डोरा-154, अलगोजा-पीपी-154, टोटो-बाड़ी-158, ठोक-बजा-158, तना-सूत-158, नाँक-मूँछ-159, जनीं-जन-160, दस-पाँच-161, घर-द्वार-162, बाल-बच्चा-162, सूर-बीर-162, गुजर-बसर-163, सला-बिचार-164, सभारे-बाँटे-166, अन्न-धान-166, छल-छन्द-168, छै-सात-170, दस-बीस-170, दरबाजे-खिरकीं-171, गोली-गोला-172, सेगा-तरबार-173, लरका-बिटिआँ-178,

रात- दिनाँ	नयनीं - नयनीं	जनीं- जन
हिन्दू- मुसलमान	भीतर - बाहर	अगल - बगल
इतै - उतै	दो - चार	घोड़ा - घोड़ी
उत्तर- दक्खिन	सैंन - दैंन	वर - बधू
पूरब -पच्छिम	बड़ी - ज्वान	राजा - रानीं
पुतरिआँ - पुतरा	बिटिआ- लरका	आबें - जाबें
खबा- पिबा	बिपदा - सम्पदा	सुख - दुख
रोटी - दार	नाप - तौल	जात - परजात
दिन - रात	फूल - फूल	ऊँची - नीची
भाँड़ - गवईआ	आकास - पताल	राजा - रईअत
कलजुग- सतजुग	पुतरान - पुतईअन	छोटी - बड़ी
तन - मन	जनमत - मरत	देईं - देवता
सुराज - पराधीनता	फूट - एका	रावैं - गावैं
हँसै - रोंयें	बिगार -सम्हार	गरमी - सरदी
पाप - पुन्न	लोग - लुगाई	बूढ़े - बारे
ऊपर - नीचें	कहें - सुनीं	ढार - तरबार
भाला - नैंजा	पुरानी - नई	ताल - तलईआँ
हाँत - पाँव	बूढ़े - बारे	पाप - पुन्न
कहें - सुनीं	बसन - उजरन	इक - दूजी
खान - पिअन	पुरानी - नई	उजर - कपूत
सपूत - कपूत		

शब्द सौन्दर्य की दृष्टि से कवि ने सूक्तियों और मुहावरों का भी प्रयोग किया है । इनसे उसकी शब्द-प्रयोग की विशिष्ट रुचि का पता चलता है । शब्दों के प्रयोग के पीछे उसकी रुचि, अरुचि, घृणा और आस्था विशेष का भी पता चलता है । कवि सराहनीय विशेषणों अथवा घृणा-सूचक क्रियाओं और विशेषणों का प्रयोग कर अपनी रुचि-अरुचि का पता देता है । दो प्रसंग अवलोकनीय हैं । कवि संदर्भ देते -देते जुझार सिंह ओड़छा-नरेश पर पहुँचता है । और उसके मन में हरदौल की मृत्यु का कारण उभर आता है । जुझार सिंह के लिए उसकी टिप्पणी देखिए-

> राजा बनें ओड़छे के, बैठे जुझार कुल-कलंक-कपूत ,
> निज भइआ हरदौल बीर कों, बिस दै कें बनवा दए भूत ।

दूसरा प्रसंग दुलाजू के विश्वासघात का है । रानी झाँसी से जा चुकी हैं । अँगरेज झलकारी को ही रानी समझ रहे हैं । दूला जू कहता है-" यह रानीं नहीं है ।" दूला जू को देखकर झलकारी की प्रतिक्रिया के पीछे कवि की भावना के साथ जनमन का भाव तरलित हो रहा है । कवि इस प्रसंग का चित्रण यों करता है--

बालो दूल्हा, "रानी नहँआँ" ! झलकारी नें मों. घिनयायँ,
दूल्हा जू के मौं पै थूँक ", "दगाबाज ! पापी ! ! मरजाय !!!.
चढ़ी-सिंघनी-सी दूल्हा पै, पकरौ लौंच गरौ-मौं-कान । -220

दूल्हाजू के लिए प्रयुक्त शब्दों से कवि की घृणा स्पष्ट है । इतिहास में दूल्हाजू को कभी सम्मान नहीं मिला और न उसे कभी माफ किया गया ।

कवि विशिष्ट शब्दों के प्रयोग के प्रति बहुत सतर्क है । युद्ध हो रहा है, झाँसी के वीरों ने अँगरेजों के छक्के छुड़ा दिये हैं । योधा भग्गी दाउ की भन्जें गाकर युद्ध कर रहे हैं मारू बाजे बज रहे हैं । उनके माध्यम से कवि झाँसी की वीरता और अंगरेजी फौजों के प्रति घृणा/उपेक्षा को विशिष्ट शब्दों के द्वारा व्यक्त कर रहा है-

मारू बाजे बजें दनादिन, जोस जगायें करेजौं हूल,
अँगरेजन की पिन-पिन बीनें, झाँसी की धौंसें रमतूल । - 210

कहाँ पिन-पिन बीनें और कहाँ रमतूलों का धौंसा । "पिन-पिन बीन" और "धौंसा" शब्द का प्रयोग द्रष्टव्य है ।

कभी-कभी कवि एक साथ कई क्रिया-पदों का प्रयोग कर कई क्रिया-व्यापारों को थोड़े में उरेह देता है । यहाँ एक बात ध्यातव्य है कि लक्ष्मीबाई-चरित में नाम-पदों के बाद क्रिया पदवाची शब्दों की ही बहुलता है । एक साथ कई क्रिया पदों के प्रयोग के प्रति कवि की विशेष रुचि है । एक उदाहरण द्रष्टव्य है । रानीं ने सागर सिंह डाकू को पकड़ लिया है । उसी प्रसंग का चित्रण है--

बाइसाब नें चिठया धरी अकेलईं, डाँकू भगतन देख,
बाइसाब दौरत जा-पकरौ, डाँकू नें कर पावें न बार,
पकर हाँत झटको, खैंचौ, पटको अपने घुरवा पर डार ।

यहाँ पर चार क्रिया पदों के प्रयोग से शब्द-सौन्दर्य तो बढ़ा ही है, रानी की ऊर्जा और फुर्ती भी व्यक्त हुई है - पकड़ना, खींचना, झटकना और पटकना- एक क्षण में सभी क्रियाएँ ।

मुहावरों का शब्द-सौन्दर्य-

लक्ष्मीबाई-चरित की भाषा ठेठ बुन्देली है । कवि ने ठेठपने की रक्षा के लिए अपनी भाषा पर तत्समता अथवा कृत्रिमता की "पालिश" नहीं की है । प्रवाह में जो शब्द प्रचलित हैं उन्हीं से उसने अपनी भाषा का निर्माण किया है । ठेठ शब्दों के प्रयोग के साथ-साथ उसने मुहावरों के द्वारा अपनी भाषा को और सहजता प्रदान कर दी है । मुहावरों के प्रयोग में कवि ने अपनी कुशलता का परिचय दिया है । मुहावरे में अगर कोई कमी रही है तो उसने प्रसंग के अनुकूल अथवा अपनी पंक्ति की माँग के अनुसार उसमें परिवर्तन अथवा परिष्कार किया है । लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त मुहावरों का विवेचन नीचे किया जा रहा है ।

भाषा की दृष्टि से मुहावरों का विवेचन अत्यन्त रोचक है । लक्ष्मीबाई-चरित में कवि ने जिन मुहावरों का प्रयोग किया है उनका भाषा की दृष्टि से विवेचन पीछे किये गये व्याकरणिक और भाषिक विश्लेषण की पुष्टि कहाँ तक करता है यहाँ यही देखा जायगा ।

मुहावरों में भाषागत परिवर्तन-

मुहावरे का अर्थ ही है किसी विशेष अर्थ में किसी उक्ति का रूढ़ हो जाना । इस प्रकार व्यवहार और प्रचलन से रूढ़ हुए मुहावरे {बोलचाल के ढंग और इसे व्यक्त करने वाले शाब्दिक रूप} में शाब्दिक स्तर पर परिवर्तन हो सकता है या नहीं ? अगर मुहावरे की शब्द योजना में परिवर्तन हो न कर दिया जाय तो वह कहाँ तक उचित होता है यह भी विचारणीय है । इस सन्दर्भ में डॉ० ओम प्रकाश गुप्त ने लिखा है :"भाषा के मन्दिर में मुहावरों की विशिष्ट "शब्द-योजना" और उनके विशिष्ट तात्पर्यार्थ का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है[1] ।" कुछ विद्वान मुहावरों को सिद्ध तथा साधु प्रयोग भी कहते हैं । उनके अनुसार "मुहावरे की शब्द-योजना में कोई उलट-फेर या किसी प्रकार का तोड़-बदल नहीं हो सकता । उसमें गुथे हुए किसी शब्द का पर्यायी उसके स्थान में नहीं रखा जा सकता और न साधारणतया उसके शब्दानुक्रम में ही कोई हेर-फेर किया जा सकता है[2] ।" किन्तु डॉ० गुप्त का कहना है कि हिन्दी में मुहावरों का शब्द क्रम प्रथ ही नहीं बदलता, उनके शब्द भी बदल जाते हैं[3] । कवियों को प्रायः ऐसा करना पड़ता है । लक्ष्मीबाई-चरित के कवि ने भी इसका लाभ उठाया है और कहीं छन्द की माँग के कारण अथवा अपने

मुहावरे में प्रयुक्त "गरा" शब्द के स्थान उसका पर्याय "करेजा" कर दिया है । ऐसा सम्भवतः तुक की माँग के कारण किया है । "छाती पर मूँग दरना" मुहावरे की "दरना" क्रिया को बदलकर कवि ने प्रेरणार्थक क्रिया बनाकर "दरबाबे" का प्रयोग किया है । दस्ती भय से भी बँधती हैं किन्तु कवि ने "थर-थर काँपना" तथा "पूस आन" शब्द गुच्छ जोड़कर उसके कारण का भी निर्देश कर दिया है । "भय का भूत" होता है कवि ने "भय" शब्द के पर्याय "डर" का प्रयोग किया है । एक मुहावरा है "भूत चढ़ना" । इस मुहावरे में फूट शब्द अपनी ओर से जोड़कर कवि ने उस समय के वातावरण में व्याप्त फूट के प्रभा का उल्लेख कर दिया है । मुहावरा है "जहर का घूँट पीना" । इसमें कवि ने "मठा" शब्द रख कर उसे बना दिया है- "मठा सौ घूँट" । इसी प्रकार "आग में घी डालना" मुहावरे में कवि ने आग के पहले "जबर" शब्द को बढ़ाकर भड़की अग्नि की तीव्रता का एहसास कराया है । एक दूसरे मुहावरे से तो कवि ने एक क्रिया विशेषण तथा पूरे क्रिया पद को ही हटा दिया है और उसके स्थान पर सिर्फ एक दूसरे क्रियापद का प्रयोग कर दिया है- " भुसमें डँगुर डार झमालो-सै घूरे" । मुहावरा है " भुस में डँगुर डार झमालो दूर खड़ीं । इसमें से कवि ने "दूर खड़ी" शब्द गुच्छा हटा दिया है और उसके स्थान "घूरें" शब्द स्थापित कर दिया है । एक मुहावरा है -"अपनी मसकना" तथा "झूठी शान दिखाना" । इन दोनों मुहावरों को मिलाकर कवि ने उसे पूरी तौर पर बदल दिया है- अपनई मन में मसकौ जिन ठसकौ छूँछौ । झूठी शान के स्थान पर यहाँ कवि ने झूठी ठसक दिखाना कर दिया है । बुन्देलखण्ड में इसका यही ठेठ रूप प्रचलित है । इसी प्रकार "गुड़ को बाप कोल्हू" तथा बित की गाँठ" मुहावरों में भी कवि ने बाप और गाँठ शब्द हटा दिया है । गुर की कोलू और गाँठ के स्थान बेल कर दिया है ।

अन्य मुहावरों में कवि ने "भटा से पोसना", "बादर में टौंको करना", "तमाको खाना", मूतर बदलना", "चोचले बताना", जी खोलकर हँसना", "इधर की उधर करना", "टका-सी नाँईं करना", "फूल जाना", भौंचक हो जाना", "बोल फूटना", "गमखान", "आँखें फेर जाना", "काला अक्षर भैंस बराबर", झमा-सा खाना", "गाज-सी गिरना", "दो पाटों में पिसना", "पानी उतरना", "पलीता देना", "खाल खींच कर भूसा भरवा देना", "पुरिआ पूरन", "काइ-सी फटना", " जड़ से झखम उखारना", "करौंटा ले जाना", "काले बादल छाना" आदि का प्रयोग किया है ।

अनुशीलन करने से विदित होता है कि कवि ने प्रयुक्त मुहावरों में कहीं भी उनके मूलार्थ से भिन्न ऐसा परिवर्तन नहीं किया है जो जन मन को स्वीकार न हो मुहावरों ने उनकी भाषा को सुन्दर ही बनाया है । मुहावरों की सहजता ही उनका सौन्दर्य है । और यह सौन्दर्य झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई-चरित काव्य में खूब मिलता है ।

-----000----

चतुर्थ अध्याय

सांस्कृतिक अध्ययन

शब्दों का सांस्कृतिक अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण है । वासुदेवशरण अग्रवाल § हर्ष-चरित एक सांस्कृतिक अध्ययन, कादम्बरी एक सांस्कृतिक अध्ययन§ डॉ0 मोतीचन्द्र के साथ§श्रृंगार हाट§ डॉ0 प्रभुदयाल अग्निहोत्री §पंतजलि कालीन भारतवर्ष§ पं0 मोहनलाल महतो वियोगी §जातक कालीन भारतवर्ष§ डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल § पाणिनी कालीन भारतवर्ष§ आदि विद्वानों ने इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण कार्य किया है ।

नामाभिधान[1] तथा स्थान नामों[2] को लेकर भी कई उल्लेखनीय शोध कार्य हुए हैं । नामों के अध्ययन की कई दिशाएँ हैं । भाषा-विज्ञान, भूगोल, प्रकृति, समाज-विज्ञान, इतिहास, वाणिज्य, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, धर्म, संस्कृति, कला, ज्योतिष आदि कई दृष्टियों से किया जा सकता है । लक्ष्मीबाई-चरित में समाज, कला, संगीत, साहित्य, मनोरंजन, त्योहार, पर्व, पूजा-पाठ, आचार-विचार, संस्कृति, भूगोल, स्थान, इतिहास, पुराण, व्यक्तित्व आदि से सम्बन्धित शब्द प्रचुर मात्रा में मिलते हैं ।

§1§ समाज सन्दर्भीय अनुशीलन-

लक्ष्मीबाई-चरित में एक पूरे समाज, उसकी रीति-नीति, व्यवस्था, जीवन के विविध प्रसंग-जन्म-मृत्यु, विवाह, आदि का पूरा चित्रण है इसलिए इसमें तद्तद् प्रसंगों से सम्बन्धित महत्वपूर्ण शब्द मिलते हैं ।

§क§ संस्कार-सम्बन्धी-शब्द

जन्म, जन्म से पहले पुत्र-कामना से देवी-देवताओं की मनौती मनाना, गर्भाधान संस्कार, पुंसवन तथा गर्भकाल से सम्बन्धित शब्द, पुत्र जन्म, उत्सव, नामकरण, चूड़ाकर्म, मृत्यु, दाह-संस्कार आदि से सम्बन्धित शब्द लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त हुए हैं ।

जनमीं, पलीं, बिटिआ जनमीं, घर उजिआरो जैसे पूरनमासी होत, मना मनौंती मनकरनिका घाट पूर्वी सी गंगा माई§20§, उपासे गएँ तिरवेनीं धार मँझार, गंगा-जमुना की मिलौंन धारन में डुबकी लई हरसायँ-93, विसन्नाथ-मन्दिर में कर अभसेख, चढ़ा सुबरन-सोपान, राजा-रानीं माँगी मन में, बंस चलाबे को बरदान-94,

अँन्न चमक, दूनीं दमक, सात महँना चढ़ना, भारी पाँव, ढेरे अँग, नैंग-नैंग फरकना, पैलोटी को सोस, भइ भूँक मरी-सी, मों पनिआबै, जी मिचलै, खटयाई मनैं भाय, आम बाँयें कतर कैं, लग उठी अकस, उठत-बैठतन में बरकैं, पग हरैं-हरैं धरैं, गलीचन पै दरकैं, रनबासन में पौड़ी रएँ, सेजन पर कैं-96, बड़कुल बसोर बऊँ, सरेट पेट-पकट कैं, का हुऐ, कबै नों बतायें अटकर कर कैं, देई-देवता मनावैं, जगदम्बा दे हैं लरका, ओली भर कैं-96, उत राजा जू पुलक, ललक-लहरन बहबैं, हुलक उठाहैं, जुरआँयें अनोपाम, अन्तस में आनन्द की, कुल बेल-बर पसरबे की, आसा उदोत-सी, तन्त्री-जोतसी बुलबाएँ, बनवायें गड़ा, झरवा उतरायें, छोत-सी, जप, सतचण्डी, घट भरना, दान-दच्छना, बामन भोजन, कामना-पुरबान, कुल देव मनाना, लडुआ चढ़ाना-97, टाँड़ी बजना, सुत जाए, सलोनो रूप, छाती उमगाई, धमा-धम्म तोपैं चलवाना, गैल में नचकैंइ उचकैं, उनके ढुलक-मँजीरा, माइ के भजन, पुजापा, बीर चढ़ाना, अबसेक, धजा, पोसाक चढ़ाना, बधाव-98, पैंनुआ, कुल के दीपक जोत कुँअर, बड़कुल बसोर माँगे दस्तूर, नाउन बहू सोर के दारैं, अड़ी नेग माँगे दस्तूर, पैरवार सोने के पूरा, मखमल में लिपड़े कुँअर दिखाएँ-99, चरूआ के दस्तूर, पचके, दस्टौन, सोर से बाहर निकलना, ओली भरवाना, उछाव, खजानों लुटवाना-100, नौं-नौं नाव धरो बिटिआ को, कड़ा-पौंचिआँ, हाँसन, कठला, गरैं, चाँदी को घूटा, पाँईंन पायल-20 आदि

अमर मनौती, घाट-पूजना, उपास, बुड़की लेना, बंस चलाने का बरदान, गर्भ में आने पर अँन्न चमक, भारी पाँव, अंग-अंग फरकना, पैलोटी का सोच, मरी-सी भूक, मों पनआना, जी मिचलाना, खटाई, आम अच्छा लगना, उठने-बैठने में सावधानी, बसोर, सरेट, ओली भरना, देइ-देवता मनाना, कुल-बेल, गड़ा, झार-फूँक, तंत्री, जोतसी, गड़ा, जप, सतचण्डी, दान-दच्छना, बामन-भोजन, टाँड़ी {थाली} बजना, नचकैं-उचकैं, गोला चलवाना, पुजापा, बधावें, नेग, दस्तूर, चरूआ, दस्टौन, नाँव धरना, कड़ा-पौंचिआ आदि पुत्र या पुत्री जन्म से सम्बन्धित शब्दावली का निर्माण कवि ने क्रिया पदों, कृदन्तों और संज्ञा पदों के रूप में किया है । इस विशिष्ट शब्दावली के प्रयोग से पुत्र जन्म संस्कार का उत्सव किया गया है ।

{ब} <u>विवाह-संस्कार सम्बन्धी शब्दावली</u>-

लक्ष्मीबाई-चरित के विवाह के अवसर पर कवि ने लड़का ढूंढ़ने से लेकर विवाह-संस्कार पूर्ण होने तक की शब्दावली का प्रयोग किया है ।

विवाह की चिन्ता- खटका, सुर, ब्यावें,कैसे कर पावें, कहाँ अस लरका पावें, बिटिआ को काज, कुल की परपाटी, रीतो बलीता-29, सिबजू पे जल-ढार, ओक टाँग बिन्ती करें, करो सम्भु निरबार, बिटिआ को कारज सरे, भलो घर मिले, बने सुमत कुलबधू, सासरे की अनुरागन, आस आसरो, मोर, मन्सा पूरन करें, बइ के उन्हार कुल-गोत, घर-बार, उनगी उमर-30, धीरे हाँत-31, कुल के पुरेत, सगुन-बिचार, नछत्तुर, गुर्नी टीपना, घर ढूँढना-31, घने ध्यान सें देख, टीपनाँ, घोकन लगे, ले सिलेट-बरती, गिन्ती के अंक लिखें, सुगर-गिरा-33, घर-बर, कुल कों चोखो, रोटी-दार कमाबे बारो, लरका सबल, खटकर सुभावें-34, भले कुल-गोत, टाँचरे की बिटिआ, टीप मिलाकें, चोखो कुल-गोत, बरात की साज-समार-35, बिटिआ में लच्छिन, बे भेल बिआवें, कुण्डली, जोग, सगुन-सुजोग-36, ब्यावें-संजोग, जोरबे जोग, भाँवरें पर हैं, गिरा मिलत हैं, नारी-गुन मिलहें, कन्या सा लरकर, चौंतीस गुन मिलत, समगुन, सम रासि, जोनि सम जुगल परत हैं-60, कन्या-ग्रह-जोग-नछत्र-61, सोधन करो ब्याँव को, ओली भरबे, सीमन्ती दस्तूर, देव-थापना हों-62, सोलहऊँन भाँवरें परीं, सजवाट-सरन्जाम, बचन-सुमारी, सुगर सगाईं, कारज-घरी-63, मन भाउन सिंगार, ढेर भरे गाँने जरतार, पढ़े मन्त्र आवाहन के, कुर्यात मंगलम्, बधाई, कुलवधू सुगर सुभाऊँन, भलो भाग-64 ,सुहाग-65, अनोपान कर सीमन्ती की, जौंन घरी गंगाधर रावें पधारे मन्दिर भवें उजियार, लगे पुरेत उचारन मन्तुर, जे जैकार, सीमन्ती को आवें मुहूरत-67, पाँव पखारे मानदान के, चौक-पटा बैठारे राजा, टीका करो, हरा पे रावें, सोनें मढ़ी सुपारी गोटी, हरदी की गाँटें सीं सात, नजर भेंट, जोरे हात, बतासन को दस्तूर, भऊँआ को नेग, दईं बधाईं-आसीस, सुमन्करी अच्छत बरसायें, देव-थापना, बेदी-परकम्मा-भाँवर को, सजकें बरात, दूल्हा, नचत पतुरिआँ, नकल-तमासे, भाँड़, घरात-68, टीका करो द्वारे पे, बाँधिबर करकें, पूजन-अरचन करकें, समसदी को करो जोग-उपचार,राजाऽम्मनु करे ठाँड़े, आसूँ-सासूँ पीताम्बर-डार, मंगला अस्टक सुर सें गावें, कवें पुरेत इसलोक उचार, अच्छित डार, बेदी-परकम्मा, सत-पाँच-बचन, बर-बधू, कुल को नाँव, निबटे सब दस्तूर, ब्याँव के, बिदा, गाजे-बाजे सजी-बजी, फिर चली बरात बजारें होत, गोरधन-छाजन सें बरसा कें फूल, करी रहँअत जैकार, सतखण्डा मिहलन के द्वारे, सुजो सुगर कुल-बधू सुहाग, मंगल-चर्चा-बधाईं, दूजे दिन कुलदेव पुजकें, नगर मन्दिरन पूजन काज, हराँ , रहँअत की पंगत, खूब इनामें बटीं गरीब कलाकारन, बामन खाँ दान-70

ऊपर दी गई विवाह सम्बन्धी शब्दावली में कवि ने महाराष्ट्रीय ब्राह्मणों में होने वाले विवाह-संस्कार का चित्रण बड़ी खूबी के साथ किया है । इसमें बेटी सयानी होते ही पिता को बेटी के विवाह की चिन्ता होने से लेकर विवाह संस्कार के समापन तक होने वाले विविध कार्यक्रमों, विधि-विधान शब्दावली में कवि ने घर-बर की खोज, टीपना मिलाना, पीरे हात, ग्रह-जोग, समराशि आदि लेकर विवाह शोधन , ओली भरना, बरात, भाँवर, बेदी परकम्मा, सीमन्ती दस्तूर, देव-थापना, हौम, बचन-सुपारी, मंत्र, मानदान, पाँव पखारना, चौका-पटा,टीका,हार,सोने मँढ़ी सुपारी, गोटीं, हरदी की सात गाँठें, भइआ का नेग, सुमन्करी अच्छत, बाँध बर करना, सप्तपदी, मंगला, अस्टक, सात-पाँच वचन, मंगल बधाई आदि शब्दों का प्रयोग किया है । यह शब्दावली क्रिया पदों और संज्ञा नामपदों से बनी हुई है । इसमें ग्रह-जोग, मुहूर्त, नक्षत्र आदि शब्दावली के साथ विवाह उत्सव सम्बन्धी शब्दावली का भी उल्लेख किया गया है । बिदाई के समय सगुन-साद की छोरा में टका-रुपइया डार कर गाँठ बाँधना तथा बाँड़ पुरा कुल्ला जल पिलाने का भी उल्लेख है-217

{ग} अभिषेक और गोदी संस्कार सम्बन्धी शब्दावली-

> अँगरेज ने करी फैसला, गादी दई गंगाधर राव-46, शहर-अखत्यार
> गंगाधर गादी पै बैठें, भवें रईअत में उमँग उछावें,
> आँगन-साँगन जुरे तमासे, हँसी-खुसी को परबै मनावें । -56
> महँनन ब उच्छव रहे नगर में, घर-घर छाए रहे आनन्द-56

गोदी का संस्कार-

> लरका ओलीं लैबे कावें राजा परबे लगे अधीर-104
> सब दक्खिनीं बुला, कुल के पुरेत टिरवा, लएँ किले मँझार,
> कुटमी सुत आनन्द राव खाँ रानीं की ओलीं बैठार ,
> विधि -विधान सें ओली लैलवें, राजा नें सुभ सगुन विचार-105
> कुल की परपाटी बहोर कें, नावें धरो दामोदर रावें ।
> तुरत खरीता गददी दैन-105, हामीं की टीप-105,
> राव साब गादी पै बैठे , पेसुआई टीक करवायें-ब 239

तेरईं नों हठकर बिसमारें-107

पुजवा गंगाजली, पिंड दै कें सराध की रीत निबाईं-107

निबटी तेरईं-भोज अधरें नों, सब बामन अफरारें अघारें-108

उद्धृत प्रसंग में कवि ने, देहलजी, हरिओम उचार, सुहाग सुटना, चुरिआँ चटक भरीं, मांग का सेंदुर पुंछना, बिंदिआ सुनो लिलार होना, मंगल-सूत्र टूटना, सुरधाम जाना, अर्थी सजना, अर्थी उठना, कँधा देना, रामनाथ सत्य, चन्दन चिता, मुखअग्नि, सुदता, फेरो, तेरईं, पिण्ड, श्राद्ध, तेरईं का भोज आदि दाह संस्कार सम्बन्धी शब्दावली का उल्लेख किया है ।

दूसरा प्रसंग-

मानवती- "छिन्नन करकें मानवती कों दाग लगा मढ़िआ बनवाईं-183 बुरहानुद्दीन, मानवती के पुत्र वीर सिंह तथा खुदाबगस, कवि हिरदेस के बलिदान के बाद रानीं द्वारा इनके अन्तिम संस्कार का एक प्रसंग है । यहाँ कवि ने कब्र खुदवाकर गड़वाने तथा दाह संस्कार करने के अलावा विस्तार से उल्लेख नहीं किया है । किलें कबाज भूम पै अकें दाग लगा, दूजयें गड़वायें, किले भीतरे दोईं सुरमन कों सँग चौंतर बनवायें-183 संस्कार की विदी लगाईं, । अन्तिम दृश्य स्वयं रानी के बलिदान का है । यहाँ रानी के मुख में बाबा गंगादास गंगाजल डालते हैं और वहीं चिता बनवाकर उसका दाह-संस्कार कर देते हैं ।

डीलर दौरे गंगादास, कमण्डल लै, गंगाजल लैन,

मों पै छींटा दए रानीं के कण्ठे चार बुक जल डार

बाबा ने इसलोक पढे ऊँचे सुर गीता के दो-चार

ओंठ हिले हरिओम उचारो, साँसो अरध हिचक उठान

तुलसी-चिता बनायें

पाँच तत्त की देह अगन खों अरपो, पाँच तत्त मिलवायें-249

कुटी उदेरी, धुनी के लक्कड़ लए, तुलसी बरन बिछाईं

रानीं और चरनदासी खों, सँग अेक चिता पौंड़ाईं

दामोदर मुख-अगन देत बिलखो, हिलकिअन पुकारे आईं -248

यहाँ पर गंगाजल, गीता पाठ, हरिओम उचारना, तुलसी चिता पाँच तत्त की देह, मुख अगन आदि अंतिम संस्कार सम्बन्धी शब्दावली का प्रयोग किया गया है ।

{च} सामाजिक पर्व, त्यौहार, उत्सव सम्बन्धी शब्दावली-

पुत्र-जन्म तथा विवाह उत्सव, अभिषेक और गद्दी पर बैठने का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। इन उत्सवों पर आनन्द मनाने सम्बन्धी शब्दावली में कवि ने उच्छव, हर्ष मनाना, दन-दच्छना, जग्य-जाग, होम-पूजन, भाँड़, गबईआ, नचनीं-नचनाँ, साजदार, इनाम-34, भईंनन उच्छव रहे नगर में, घर-घर छाएँ रहे आनन्द-56।

कोई भी उत्सव क हो कवि उसमें जन समागम, भीड़भाड़ तथा जन-उत्साह सम्बन्धी शब्दावली का प्रयोग अवश्य करता है। यथा- जहाँ देखौ ताँ, करें जेहँ सब बाते जनी लगाकें झुण्ड, मिहलन को दें दौरत जावें, लरका-बिटिआँ लपक-उछण्ड, बूड़े-अदबूड़े, हरसावें, देख मिहल सन दौर-पदौर-63, सबके मन में हुलक, हरस की उमड़त-उछरत उठत हिलोर-63, उछाह भर, लगे पाउनन की अगवानीं-63

किसी उत्सव आदि के पहले नगर की सजावट का चित्रण भी उत्सव का एक अंग है- इतै सबेते झाँसी में, रईअत के जनें, नगर सजवान, कोठी कुआ, सिगाँ को बाड़ो, सजवें बिटिआ बारन काज नवें-सो भवें गनेश मन्दिर, रुचकें सजावें दक्खिनी समाज-66, सबरे मट्ठ-मन्दिर पुत गए ते, नएँ-नएँ करें साज-सिंगार, झार-पोंछ लएँ पुरा तुदार, मिहल सबे ते सबरे अगरे, का कवें ने सजवाट किले की-66।

अगुआनी में ग्यारा गोला, दोस्त खान धर क पाले तान-66, भीड़ का चित्रण- बूड़े अम जुरे अथएँ कें सबएँ दक्खिनी बामन, रईअत भीरें ठेलमठेल-69, निहारत उमड़ी भीर-67, संगीत, गान-नृत्य तथा खेल तमाशों के द्वारा उल्लास सूचक शब्दावली का उल्लेख- सबरे मट्ठ-मन्दिर-मिहलनमें बजरईं भोरईं से सहनाँईं/बजार नें दुलक-नगरिआँ, चौगैलन पै आन बधाई-68, सबकें चली जबर बरात, बाजे अँगरेजी पल्टनिआँ आगे-आगे चले बजात, देसी बाजे-सुर-सरांत, उनके आगे चलत पतुरिआँ, करबें नकल भाँड़-नक्काल, करैं तमाते नट बहेलिआ, भाँत-भाँत कें मिचकी चाल-68, जन-उल्लास की अभिव्यक्ति पुष्प वर्षा करके- गोरवन-छाजन सें बरसा कें फूल, करी रईअत जै जैकार, जाँ-जाँ से बरात गई, सबरें होड़ी होड़ीं सबे बजार-69, जगर-मगर भईं नगर में- झाँसी उमगी आस में प्रयुक्त शब्दावली नगरवासियों के उत्साह का क बखूबी चित्रण करती है।

पुत्र जन्मोत्सव में भी जनता की भागीदारी और व्यक्तिगत रूप से पिता के उल्लास चित्रण के लिए कवि ने तत्सम्बन्धी शब्दावली का प्रयोग किया है- रानीं ने

सुत आए सलोनें, राजा की छाती उमगाई, धमा धम्म तोपें चलवाईं, सुनकें तोपन की गड़ गज, ब रईअत के लोग-- घर-बाहर कड़आएं, गैल में नचकें-उचकें मिलें सुयोग । चौगैलन पै जुरे ठट्ट के ठट्ट, मसालें लयें उजिआर, ठनकें ढुलन मँजीरा, गाबै-98 बजी मन्दिरन में सॉनईआँ, ठनक नगरिआ गमके ढोल, द्वारे-द्वारे पै बधावें के रमतूला कूके सुर बोल, सब पौंचि किलें बधाई दैन-99

होली, नवदुर्गा, विजयादशमी तथा सावन उत्सवों पर होने वाले उल्लास के चित्रण के लिए लक्ष्मीबाई-चरित में तत्सम्बन्धी शब्दावली का प्रयोग बहुलता से किया गया है । किन्तु उत्सव सम्बन्धी शब्दावली का विशेष उल्लेख महाराष्ट्रीय त्यौहार "हरदी कुमकुम" के चित्रण में कवि ने किया है ।

फागुन आवें, किलें-मिहल होरी पुजवाईं, सुनकें खेलन फाग, सारी रईअत दिखाईं होरी को उच्छव , पिचकें, केसरिआ रंग, अबीर-गुलाल-80, फगुआरे, फगुआ के गीत, नगरिआ, ढुलक, मँजीरा , केंकड़िआ, बब पचकड़िआ फाग, फागुन रित बसंत निआरानें, सबरे रंग, होरी, रंग डालना, पिचक सुदया कें, मरो गुलाल, हुरयारो, चैलउँ-पैल किले की होरी देखन रईअत उमड़ी आन, गुलाल भुरकाना, गैल-गैल में बगरो अगरों रंग अबीर-गुलाल-81।

बारहमासी में भी कवि ने होरी उत्सव सम्बन्धी शब्दावली का प्रयोग किया है- होरी को डाँड़ो, घर-घर हुरिआनें, पिचकें तानें धर उमदा में, छानें, खेलन हुरदंगा, फिरें मलंगा, भरें छलंगा, छानें, उन्ना मिड़ाँयें, चूनर छिड़ाँयें, कउँ ठेल रँगन की रेल-पेल, सुदयाँयें गँगिल उलीचें, मुठिअन गुलाल मों तरें घाल-88

"हरदी कूँ कूँ उत्सव" के चित्रण में भी उल्लास व्यक्त करने वाली शब्दावली का चित्रण है- हरदी कूँ कूँ उच्छव सजबावें, साँची रचवा बरी गौर की मूरत, नौनें मन पुजवावें, उनमारें मन रईअत की भीर जुरी केसर सनीं सुरोक, भिजवा द्यौल-सुवाईं, हँसकें हरदी-रोरी, सबके माँथे पै निज हात लगाईं, हरदी कूँ कूँ में जनीं करत मसकरी पावें, लौट-फेर कवें नें परत परबारे को नावें, लगा लिलारे रोरी-हरदी, भरें माँग में सेंदुर बो-पो होंयें सुहागिल-82, अड़आर, दुबेंची, उरजाएँ, किलकार, पदीली आदि क्रियापदों के द्वारा उस उत्सव को साकार किया गया है ।

बारहमासी में श्रावण उत्सव और भुजरिओं का भी चित्रण किया गया है । इसके चित्रण के लिए कवि ने साउन हरकाबै, चपक डराबै, झूलन झूलें, धनिआँ फूलें,

{छ} ताजिअेदारी सम्बन्धी शब्दावली-

कवि की विशेष उपलब्धि ताजियेदार औरफकीरी बाने सम्बन्धी शब्दावली का प्रयोग है ।

डोर-स्यास के साथ ताजिओं के जुलूस के चित्रण के पहले ताजियेदारी से सम्बन्धी शब्दावली का प्रयोग कवि ने विशेष उत्साह और सावधानी के साथ किया है । डोलस्यास , जस बिहार, डोल-ताजिआ सैं कैसें कड़ैं-146, नौ ताजिआ, हरयाई राई पीका कौ सजौ सलौनौं, दरवाँ मड़वा-मिहराबैं, कड़े कँगूरा, जार्ली-खिरकीं रूपनूँ दिखनौटू बूरा, मिसिल-147, बनक कौ नौनौं, बुर्राक सजाबौ, गौनैं-गुरिआ-148, बुर्राकन पै लदे हिन्दुअन के गौनैं, बँटबायें सीरा, राङ-ताजिआ, फकीरा, राङ-बुरा, बजात, जाँयें ढोल, अरबी तासे, रेवड़ी, बतासे, पटा-बनैती, तरबारें, हा-हुसेन, अली-अली, दिल दहली कव्वाली, कव्वाल उचारें, हुसैन-हसन सहीदी ब्यारें, बुरका डारें बेगमें, मरसिआ, घिमसाँ बाजार मीर, छाजन पै बउ-बिटिअन की ठसवाँ भीरें, ताजिआ अबारे , दुहरे दिखाँयें दागें-151-152, सबरात कतल की, कर्बला चौपरा, ताजिआ सिरानें-153 ।

फकीरी बाना सम्बन्धी शब्दों में कवि ने फकीरी, हरीरी सेली, चाँदी की बेंड़ी, निजामबन्द छरौं, फकीर बाना का प्रयोग किया है ।

{ज} पूजन-अर्चन तथा उपासना सम्बन्धी शब्द-

हमारे सांस्कृतिक जीवन में पर्व, त्यौहार तथा उत्सवोंके साथ पूजन-अर्चन तथा उपासना का विशेष सम्बन्ध हैं । लक्ष्मीबाई-चरित में व्यक्तिगत उपासना का विशेष उल्लेख नहीं है । इस काव्य में जिस काल का चित्रण है उस समय में जिन पंच देवों का पूजन-अर्चन प्रचलित था उन्हीं का लक्ष्मीबाई-चरित काव्य में उल्लेख किया गया है । फिर भी, महाराज गंगाधर राव तथा लक्ष्मीबाई दोनों ही अपनी मान्यता के अनुसार पंच देवों के अलावा समाज में स्वीकृत देवताओं की पूजा करते हैं और मनौती मनाते हैं । स्थानीय और ग्राम देवताओं की पूजा-अर्चा का भी इस काव्य में उल्लेख है । लक्ष्मीबाई-चरित में दुर्गा के विभिन्न रूप, शिव तीर्थों में बिठूर, काशी , प्रयाग, कालिन्जर, मिहिअर, हिंगलाज, गणपति, विष्णु, कृष्ण, राम, गंगा, यमुना, विश्वनाथ, त्रिवेणी आदि का उल्लेख है । इन्हीं देवताओं की पूजा-अर्चा सम्बन्धी शब्दावली का उल्लेख कवि ने किया है ।

कवि ने कालन्जर की काली, हिंगलाज की भुमानीं, गढ़कुड़ार की सिंहबाहिनीं,

सा पै, गाईं कसीदा की कब्बाली, बिसेस पूजन की उब, पूजे गनपत बब्बा, लगे गुसाँईं हजारी संकर मन्दिर पै अभसेक करान, राजेसुरी दिबाले धजा-चढ़ा, पोसाक चढ़ान-98, देब-देवतन करें बोलया, माँतन के मढ़ पै गिगिआँयें, करें महामिरतुन्जै को जप, नीलकण्ठ इसतोत पढ़ैं-100, ध्यान धार कुलदेव मन, लवें रानीं नें लाज-143, आठें खाँ गईं बाइसाब मईंआ मनान, तरबार पुजान, सीस झुका कर जोरे, बिन्ती करी समर में बिजै करान, दसरएँ पै कुल देवें पूजबे-179, बाइसाब नें छैंकुर पूजो, सहस चण्डिका को पारायन होम, काली मन्दिर पै मैंढ़े की बली चढ़ा, खप्पर भरवाँयें-196, सबईं मज्जिदन में रईअत की रच्छा करबे नमाज पढ़वाईं-197। गीता पढ़ कें पूजन करो-216 आदि शब्दावली के माध्यम से लक्ष्मीबाई-चरित में पूजा, उपासना आदि की रीतियों का संकेत करता है ।

{झ} <u>रिश्ते-सम्बन्धी शब्दावली-</u>

लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त रिश्ते सम्बन्धी शब्दावली में कवि ने हल्के भइआ, मँजले-20, बिटिआ, घरबारी, मताई, मलकिन-20, बाप, गुईंअन, मईंओ, मालिक-21, काका, हमजोरी-22, बेटा, चाकर-27, कुलबधू, सासरे, गोतिआ, बर-बधू, गुरू-30, मानदान, पुरेत-68, पाउन-67, दोस्त-180, बीरन-179, बेरिअन-180, दिउँरा, दिउरानी-81, पत, घरबारे-83, माता-84, सन्तान-85, कन्त-86, पीउ-86, पीतम-87, सखी-सहेली-90, पुरबा-91, कुटम-91, परदेसी-91, पूत-102, भौजी-93, संगिनें-93, सुत-98, मईंआ-बन्दी-61, पुरखन के सम्मन्द-61, पुस्तान-पुस्त-108, बिनू-67, नातेदार-67, पन्ती-44, कुमाता-54, बाला-168, बिरन-199, पिता-130, जननी-210, बाप-21, मिहमान-31, आदि आदि शब्दों का प्रयोग किया है ।

{ट} <u>जाति तथा वर्ग सम्बन्धी शब्द-</u>

रईअत, राजा, प्रजा, राजकुमार, चाकर-72, कुल्टा, कोरी, धोबी, तेली, नाउ, बेपारी-67, पुरेत-31, पण्डा, मुसलमान-90, हिन्दू-91, बन्जारे, किसान, सुनार, सराफ, गुसाईं, बामन-30, छत्री, बुँदेला-179, पमार-179, चेतुआ-20, अँगरेज-20, राव-21, कुल-22, बैद-23, महाउत-24, फिरंगी-31, परदेसी-31, दीछत-32, पण्डित-32, गूजर-179, जाट-179, पठान-179, चौधरी-179, कोरिन-82, सिख-91, साउँकार-99, सिरदार-98, मराठी-102, गोरा-106, रांगड़े, काछी-भैंसर, अहीर, कड़ेरे, चमार-210, दासी-दास-216, भारतबासी-109, जन्ट-112, सचिव-126, तालुकेदार-127, जिमीदार-128, बुनकरा-128

भूगोल परक शब्दावली-

{क} वनस्पति सम्बन्धी-

बिरवन, पात-30, बाँस-27, कमल-30, डँकुर-80, छेवँलिअन-81, केसर-81, तरु-86, पीपर-93, बिरछा-93, कली-95, झरबेरी-96, चन्दन-107, बेर-72, मकुईंअन की झाँबें, बेर-72, झरबेरी-72, अमरबेल-128, कमल कौ फूल-136, चम्पकली-154, लक्कड़-172, रूखन-190, डाँयरी-195, हरसिंगार-242, बेल-246, नारान बाग फूलन झरन-40, केवड़ा बहारन -40, बाग-बगीचा-44, कोट-बगीचा-46, जर, पत्ता, छाल, बेर, मकुईंआ, मउआ, गुलकट-52, झोवन बाग-66, अँगूर, आम, अमरूद, भली फुलवारी-74, पच बंगला-बीच बगीचा सुगर सलोनों-74, करिअल घेंटी चटकीं ललचाँन-80, हरिअल पत्तन, सेंदुरिआ फुलवा फूले-80, बिरछन झरान, मौंर, अमिआँन झौंर, बिरिआँ फराईं-88, डाँगें ललचाँईं हरीरी-88, घनीं डाँग-162 .

{ख} प्रकृति, मौसम तथा नद-नदी, पहाड़ सम्बन्धी शब्द-

झरका-23, धरती-26, पाताल-66, बिजरी-179, बुदिअन फुहार-86, सिआरी बयार-86, बौछार-86, मूसराधार-86, छईंआँ-87, जाड़ौ-88, पुरबईंआ-88, लपट-88, ततूरी-89, हबा ,घाम-89, ठण्ड-100, पहार-176, धूरा-190, कारे कजरारे बादरा-86, चड़कारे-190, हड़फोड़ बेहर-190, घाटी-190, पसीना-195, चौमासे-215, हिमगिर-242, दुपहर-24, बसन्त-86, चार पहार, कैमासिन पहाड़ी, टौरिआ, बेतवा-161, भागीरथी, गंगामाइ-220, गंगाजल-20, सिआरो जल-30, सरसुती, जमुना-83, नरवा-86, समुन्दर-109, कछारें-72, ताल, तलईंआ-44, हाँती डुब्बाँ पानी-205, सुनरेखा नारो-246, पहूज, तिरबेनीं, मिलौंन ।

ज्योतिष, नक्षत्र, आकाश, दिशा, कालवाची शब्दावली-

आकाश, पाताल-64, चन्दा, सुरज-21, भान-21, केत-21, राहु-21, टीपना-31, धुरू तरैया-25 , संत्री, जोतसी-97, जनम-97, फलित जोतिष-60 नारी-गुन- मिताई-60, समगुन, समरासि-60, लगन-60, मंगल-60, जात्रा-जोग-61

नगर, मुहल्ला, किले,भवन सम्बन्धी शब्दावली-

घर आँगन, किलो-21, मिहलन-20, हवेली-26, गोखन-69, छाजन-69, सतखण्ड मिहल-39, द्वारे-69, बुर्ज-180, बारादारी-84, द्वारे-69, रनबास-94, गुर्ज-96, झन्द्र भुअन-66, बगमिआ-112, सुरंग-117, जीनत महल-127, चौबंगला-72, दालानें-72, लाल किले-132, कँगूरा-44, कोट-45, चौपरा-45, खिरकी-45, तोपन के थन्ना-45, फाटक-49, डयोढ़ी-48, बाँवरी-54, भुअन-138, किवार-139, परकोटा-206, टपरा-202, खाई-205, तहखाने-22, किवार-243, हाँतीखाने-57, असफेर घेर नगर घघो चार पहारन, कोट खिंचो नींचट, दमदार दिवारन, घोघेर चार खिरकीं, फाटक दस द्वारन-39, मटियाउ टौरिआ कड़कें जार पहारन-38, ताल आँतिआ, हाँती डुबा द्वारन, चौपरा धरमसाला, गहरें अकूत छिडिआँ हैं सरछट द्वारन-38, गन्धीगर, दीछत बगिआ, पसरटा, लच्छमीं ताल, सिद्ध चौपरा सुमान-कगारन-39, राजघाट बाँध खकोसा-40, मठ चार गुसईंअन के हैं-40, बागी किलो, बलवन्त टौरिआ-सौ फुट ऊँची बुर्ज, दक्खन से पच्छिम सन पसरो, चौखेरीं चौरिआँ खाड, घमतु द्वारो, घिकट मोरचा मारें, फसील, चौरीन भीत, तोपन के गड़ला दौरत जायँ-41, पुरानी बड़र गढ़ी, बलवन्त नगर, मन्दिर, मिहल, तला बनवा-42, पाताल फोर कुआ-43, बाँवरी, बाग-बगीचा, मन्दिर,मढ़, पूजा के थल सजवाए विसेख-43, बस्ती चिस्तारी-45, नगरकोट,दस फाटक, खिरकीं चार, बीच-बीच में गुर्जे काढ़ी, तोपन के थन्ना निरधार-45, बाहर नई बस्ती-46, चौरिआ गैल,चार बजार, बड़याई दुकानें-46, बाहर कोट बगीचा, राजघाट बनवावें तला पै, पथरा बिछा सलीकेदार, सिद्धन कौ मन्दिर, भूतेसुर दए बैठार, छ अठखम्भा-46, दूर-दूर से साउँकार जरदार बुलाकें नगर बसारें, बड़ौन दिखनौसु हवेली-47, सजीलो,तिमजला मिहल-47, किलें भीतरें बड़ो बगीचा, जंगी सतखंडा बनवाए, राजसी ठाट-बाट फौजें हाँती-हौदा सजवाए-48, कठवाँ कुठारी, सुरछित करो सराफो तीन कोट फाटक बनवारें बजार की गैलें चौरी करीं सुकर बनवाँईं,बस्ती सें पानी निकास कीं, बड़ी-बड़ी नरिआँ कढ़वाँईं-49, किले भीतरें फाँसी घर बनवावें, जेल बनावें कोट के बाहर, मिहल-मन्दिर में भीत चितोर कराईं, किले भीतरें सतखण्डा के मिहल,झार-फानुस लगाएँ, साँमूं मैदन्ना में हवकें फल-फूलन के बाग लगाएँ-59, गुलगुली बिछातें, भीतन में चितकारी, अरी बाग में तीं छिड़िआँ पच्चीसी, अर सें झिरना झिरत रहे पानी कौ-73

पंचम अध्याय

व्यक्तित्व वाची शब्द – अध्ययन

§1§ वस्त्र वेश-भूषा, आभूषण सम्बन्धी शब्द-

कड़ा पोंचिआँ हाँतन, कठला गरें सुहाय, करया में चाँदी को छूटा, पाँवन पायल रुनझुनिआय-20, का कहनें जनिअन के ठाड, गानें लदीं मूँड़ से पाउँन, ढेर भरे गानों जरतार, सब चोखे सोंने के चमकत, दमकत हीरा जरे हजार, माँथे सें सिंगार पाँवनों-64, भरें माँग में सेंदुर, घूँघट तीन सुँगइँआँ डार, बोली नवल बुँदेली नार-82, अँगूठी-92 , सोंने के चूरा-99, भारी जड़ाउँ गुँज-गोप, हार सुहानें, दुलरी-तिलरी, सतलरी, सुहेल-सिदामें, लल्लरी, ठुसी, बेंदा, नथ-दुर सददानें-150, रूप कें सिंगार करें, गजब गानें बाँदें, छनकें ककरा पैंजन के परें छमाके, सुँगरन बिछिआ, अनोंठा, छमकें बाँके, करया में करदोंनीं के झूमका झूमें, लहरें, छहरे ऊठर कें सरेटन की लूमें, छनकें चुरिआँ, पोंचन में दोंचन पारें, ककना-बजुआँ, बंगलिआँ, बिच-बिच डारें, ढिउँना अउर बाजूबन्द गसे से, उभराँयें दोउ जोबन चोलिअन कसे से-153, गलहार चम्पकलीगुलूबन्द, सिदानें, दुलरी, तिलरी, लल्लरी, ठुसी, नगदानें, पुखुआँयें पुतरिआँ पोतन, बीजा सेंनीं, नाँकन में दुर लरकें, कानन सरकौंना, माथें बिंदिआ दमकें, बेदा ढरकौंना, ढरवाँ नैंनन पलकें, कपरोटी कोरें, लरजत-बरकत-उरजत चितवान चितोरें, पाँउन में माउँर, हर रचाँयँ हांतन मेंदी, ओंठन में पनबीरा की रच ललचाँदी, फुन्टदार कसबी के लाँगा पेरें, ठिकवाँ किनोर गोटन के लुँगरे पेरें-154, पगड़बन्द, चका सी पाग=32, पीताम्बर-69, मंगर-सुतर-106, उन्ना-88, आँचर-84, चूनर-88, चादर-98, पोसाक-98, मखमल-99, लोटा-72, बाँड़ईं-49, धुतिआँ, दरी, गलीचा-49, जरीदार रेसम, चोली, सारी, स्वापा, कामदार दिखनौंत दुपट्टा-50, साल-दुसाला-50, फैंटन-200, पोसाकें-216, सेला चिकान-220, फटे चींथरा-90, पिछौरा-170, फतूमें-190, कमरा-190

§2§ अंग सम्बन्धी शब्दावली-

लक्ष्मीबाई-चरित में शरीर के विभिन्न अंगों से सम्बन्धित शब्दावली का प्रयोग निम्न प्रकार से किया गया है— मुखड़, गात, अंग, गोरिआँ बरन, हाँतन, गरें, करया-20, पाँवन, आँग, आँखें, मानुस-तन-20, ददुलिआँ-21, मुठया-21, माँ-21, तन-21, अँखियाँ-21, मुख-31, लिलार-23, आँगुर भर-24, ओंठ, गरदन, गाल,

भाल, माँथे-24, भौंयें-25, नकुआ-25, छाती-27, बार-27, कर-32, ओंठ, मूँड़-32, सीस-179, करेजे-81, गलउँआ-81, पेट-89, तरवा-89, कण्ठ-93, आनन-94, पतुरिआँ-100, पतुरिआँ-101, कँदा-98, भुजा-11, नस-नस-134, दाँतन-136 चरनन-141, टिउँनाँ-153, मूँगरिआँ-175, मूँछ-200, आँगुर-218, पिडुरी-22, मुण्ड-211

§3§ व्यक्तिगत गुण, अवगुण, स्वभाव, प्रवृत्ति सम्बन्धी शब्दावली-

नायक-नायिका तथा अन्य पात्र : गुण, स्वभाव, प्रवृत्ति

0 लक्ष्मीबाई-चरित- मनू, छबीली, झाँसी की रानीं, अमर बनीं, गंगा-सी, दुरगा की चरित बीर कै झाँसी की रानीं कौ ।

इन विशेषणों से झाँसी की रानी के प्रति कवि की भावना का पता चलता है । आगे उसके स्वभाव में विद्यमान इन्हीं प्रवृत्तियों का विकास होता है । अन्य पात्रों के स्वभाव, गुण-अवगुण को सूचित करने वाली शब्दावली का कविने यथा-स्थान प्रयोग किया है ।

सौन्दर्य तथा स्वभाव सूचक शब्दावली-

मनभावन सुघड़ मनू कौ गात , बड़ा, पाँखियाँ हाँसन, कठला गरे सुहाय-20, उजिआरो जैसें पूरनमासी होत, दिपन लगो मनू को गात, अँग-अँग भरन लगो, नैन-नैंग सरसो, ससि सौ ढरो सुहात, मइयो वाँ उनगी, गोरिआँ बरन दमकन उजियात, जैसें होंनहार बिरवन के, होत सलौंयें चीकनें पात, कन्याधन, ढड़कें-गिरें-परैं उँ न रोवै, मनू न मानें माटी भरबो, बाके मन, मानुस-तन सें बड़के अगरो माटी सें चावें -20, ढाइ बर्स की मनू दिखावै पाँच बर्ष की, तन मलंग, बनकत-सी बोली, निखरो, सलौनो गात, बड़री-सीं लुभाउनीं अँखियाँ, दरवाँ छब तेज-उदोत, नौंनें करे अनोंनें खेल, बना बनइँआँ तीर-कमान, बादर में टाँकौ करबे, बैंधे चलाय उपरइँआँ बान, चढ़ै बापकी पीठ, बना घुरवा, लगाम दुपटा की डार, ऐंड़ लगावै, तान लकुटि-आ की तरवार, बना फौजें गुड्डअन की, छनकिन, रन कौ रास रचाय, जोधा बना पुतरिआँ-पुतरा चरघुला वाँ किलो बनाय-21, बढ़ी दिनें-दिन चन्दकला-सी, निगन हँसन , बोलन, चटकोलन जो देखो सो मन हरसाय, मोद भरें उमदाबो देवें, धरो छबीली नाव, चकचौंदि देव मनू को तेज अपार, नन्नें मौं

पिअरी-सी, आँखें टरीं-टरी मुरज्याईं, कोयन तरें झाँईं-सीं पर गईं, रानीं दूबर परीं दिखाईं-100, छीजो बदन भरो रानी कौ, लगन लगीं कटकरी दिखाँन-100, रानी भई चेतन्न, डीलन करबे देख-परेख-102, रईंअत उमगे देख-परख कं अपनीं रानीं कौ बेहार-104, असहाय, लाचार-109, मनू लगे लछमी औतार'64, लछमीं-सरसुति-दुरगा तीनउँ अेक रूप में परीं लखायँ-64, दमकें तेज मनू मुख धार, उमा-रमा कैसो औतार-64, भुमानी के बरसो परभाव परेख-80

छबीली-

झलकारी कोरिन ती, हँसतोर मिलनिआँ, चटकोर, पटकोरे बनकें ठनगनिआँ-96

लखूबाई-

लखूबाइ कलुअे सुभाव की, तीखे बोल, हठीली चाल, बेर बेर हरकान गली सब वाँ गरयाकें बोले बोल-51, लखूबाइ बोली ब कड़के सुर-53, नैंक न सरजी दुस्टन -53, रानीं लखूबाइ-54, लखूबाइ को कोप-54 ।

सुन्दर, मुन्दर, मानवती अन्य चरित्र जरूर हैं किन्तु इनके स्वभाग गुण-दोष का कवि ने विशेष उल्लेख नहीं किया है । पुरुष पात्रों में गंगाधर राव तथा उनके पहले के राजाओं के स्वभाव आदि पर कवि ने थोड़ा-बहुत लिखा है ।

गंगाधर राव-

मों उतरो राजा को, हँस कें बोले-35, दिकनौंतु बदन , तनखरो, पौरुख बल सें हैं भरपूर-36, राजा सुभाव के कर्रे, रूखर दिखावें-74, डाँड़ में बिच्छुन सें कटवावें, तामें के तार आग में दएँ दगवावें-74, रँगीले राजा-74, बदलो सुभाव, मुलाम बोलें, बतयावें हँस कें, दोसी जन डाँड़ें, न पैल केसे कसकें, भाव-भरो सतगुन गसकें-97, हँसी करें, लेवें चसकें-97, सब दिन रएँ रनबासन, बरतायँ लाड़ रानी पै, ऊपर परकें, हँस कें हँसायँ, बेर-बेर आँकें फरकें-97 अन्तस में आनन्द की उजियाईं जोत, कुल बेल कहलब पसरबे की आसा-97

अन्य पुरुष पात्र-

बेठे जुझार कुल-कलुस-कपूत, निज भइआ वों बिस देकें बनवा दएँ भूत, हत्यारे राजा-42, गादी बेठ पहार सिंघ नें कछू करो रईअत सें मेल, 42
राजा निबल ओड़छे के भएँ, झाँसी बनीं राँड़ को गाँवँ-43, इते गुसाँईं आन चढ़ बैठे, तरवार भँजइआ, उन्नें झाँसी वाँ सिन्गारी-43, राजा उददोत- उमगी तुरमाइ की

जोत-44, लछमन भाउ अनमने सुमारें-45, उतै सुगर रघुनाथ हरी नें रूप कें दो महला बनवारें-46, रिस बेदी शिवराम भाउ, बुढ़ी के बैनें, चतुर विवेक, वीरताइ सन्जम मैं समगम, दूरन्देस, धरम के नेम, अंग लगाए बुन्देली-जन-48 गादी बैठे कर काजू रघुनाथ राव रसिया सिरनाम-5, चतुर चितेर ते सुखलाल कुची के पक्के-57, रसिया, सिंगारी कवि राज बनें चोखे तरबरया ज्वान-79, गवन्नर डलहोजी निचाट करमीं, हैं मान करी बेइमानीं-127, मंगल पांडे हते अफाँनें, नो उमरा ठसकीले ज्वान-137 पीर अली उनकों मौं लगया, नत्थे खाँ को नातेदार, हतो चतुर-चरबाँक-चुगल, चोबोल, कुसामदया बटमार-184 । कवि ने कुछ ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है जिससे सामूहिक रूप से उस समय के अवसरवादी मानसिकता पर प्रकाश पड़ता है । जैसे-लबरा, कनमरा, लैलीटा, मौं लगया-124, कुसामदया-125 ।

पात्रों के गुण-दोष सूचक शब्दावली के साथ कवि ने पात्रों के मन की विभिन्न अवस्थाओं को बताने वाली शब्दावली का भी प्रयोग किया है । उसके कुछ शब्द निम्नलिखित हैं : सुहात, सिहायँ, फूलें अन्तस मैं, चावें, उमदात, रूठो, लाड़-लड़िआत, हरसाय, मोद, मान, उसटे, हुमके, धमके, खिजको, पीरा, रिसानै, मचलो, बेजार, खिचकावें, भौचक, कोप, हड़िआत, सन्नानीं, भन्नानीं, इतरानें, चोचले, दुखिआनें, रोस, ललक, रिस उदास, निरमै, उकतान, हठीली, अनमने, झींकन लगे, दुखी, रोवै-किल्लै, रुआँसी, कुढ़कें, सरम, लाज, काप, हरसे, लाचार, चोकस, हौंस, उकतान, निडर, मुकर, उमंग, निहाल, थको, सकुचबो नें, हुलस, उछावें, ठसकीले, मन रीतो, अकबकिआवें, चितुरत, धीर हंससोर , चटकोरे, चटकोरे, ठनगनिआँ, लाचार, उपरैसे मन, उकलानों, अधीर, लाचार, ऊब, कलेसी, लल्चिआनें, अनुनयावें, चुगलखोरी, खिसुआसी, निठुआँ, पापी, बेसरमीं, पछताबो, खिचखें, गुमान, दुखिआँय, सरमीं, छिमा आदि ।

आचार-व्यवहार सम्बन्धी शब्द-

लक्ष्मीबाई-चरित की विषय वस्तु जिस काल की है उस समय समाज धर्मभीरु था । व्यक्तिगत आचरण पर उस समय बहुत ध्यान दिया जाता ह था । कवि ने आचार-व्यवहार से सम्बन्धित कुछ शब्दावली दी है जिसका उल्लेख यहाँ किया जा रहा है ।

"आदि मध्यावसाने मंगलम् माचरेत्" अर्थात किसी भी कार्य के प्रारम्भ, मध्य तथा अन्त में उसकी निर्विघ्न समाप्ति के लिए मंगलाचरण करना चाहिए । कवि ने स्वयं

इस आचार का पालन करके अपने काव्य का प्रारम्भ भगवती की स्तुति से की है । प्रत्येक सर्ग के प्रारम्भ में किसी-न-किसी तरह का मंगलाचरण है और अन्त में भी बाबा गंगादास के मुख से आशा बँधाने वाला वचन है ।

"सुमर भुमानी हिन्गलाज की" कालो, गिद्ध बाहिनी, मइहर की सारदा, बिदिसा की भैरवी, बँगलामुखी, बीजासेन बुँदेल-भवानी सभी से कवि बुन्देली में कविता करने का वर माँग कर कविजनोचित आचरण का पालन करता है ।

काव्य में प्रत्येक समारोह, पर्व और उत्सव के पहले देव-पूजन कराकर व्यक्तिगत आचरण के प्रति पात्रों को उन्मुख दिखाया गया है । इस प्रकार की शब्दावली नीचे दी जा रही है-- हल्के महँआ चित्रकूट गए, मँजले नें लवें कासीवास, मनकरनिका घाट पूजीं सी गंगा माइ-20, सिबजू पै जल ढार, एक टाँग बिन्ती करें, भलो कुल देव गुसाँई मन्सा पुरी करें सदासिव संकरी साँई-30, भगवान सदासिव धार लगाएँ-31, कुलो खजानो दान-दच्छना बटबे लगी, बामन चिपटे जाग-जग्ग-होम-पूजन-अर्चन करबे हरसात-34, सूबेदार हते रिगबेदी बामन नारो संकर नाम, गनपत बब्बा की मूरत बनवा कें -45, मूरत बड़ गनेस गड़वा कें, नमहारो मन्दिर बनवावें-45, पानी को चोपरा सुदारो, शंकर को मन्दिर सुदरावें-25, अधरम को जो करम, अपनी रहँअत हैं, बिपता में की के दोर माँगबे जायँ -52, सुभ-संजोग बतावें, कासी के गुरु को बचन सुनों-61, सुभ दिन में राजा-रानी तीरथ करबे चले पिराग, पाँच बिठूरे गंगा-सपरीं, उनगर गएँ पण्डन के भाग, भोर नावें में बैठ, उपासे गएँ तिरबेनीं धार मँझार, गंगा-जमना की मिलौन-धारन में बुड़की लईं हरसायँ, राजा जू ने दान करो जी खोल, भलें पण्डनें जिमावें-93, मरकरनिका घाट पै गंगा-मइआ पूज करे असनान-94, लछमीं-मन्दिर में बुला हजार बामनें, भोजन करायँ डट कें, पुरवा न बामनें, अन्डेरा केमन्दिर कुल देवें मनावें, मड़आ चड़ाएँ दस मन बुँदिआ बनवा कें-97, ध्यान धार कुल देव मन, लवँ रानीं ने राज, कर न्याँव नीत, बाइसाब राज समारो-143, रात-दिनाँ बीदीं रयँ बाइसाब पै नित को नैम निबाँयँ, करें कचैरी रोज, अथएँ कें मन्दिर जा पूजन करवायँ-189, डँदिआरे में सपरीं, गीता पढ़ कें, पूजन करो समार-216, उठत भोर नित-नैम निपट कें, अपुन बनीं रईं चेलीं की सेलीं, न अन्न-जल ओंठ लगावें, परी बिछुवन सपरें कैसें, पूजन बिना न जावे खावें, खान-पिअन की जिन्से ले फरार बनवाएँ-226 ।

अन्य आचार-विचार सम्बन्धी शब्दावली का उल्लेख पूजन अर्चन सम्बन्धी

शब्दावली के साथ किया जा चुका है । दान-दक्षणा, पूजन-अर्चन, स्नान-ध्यान, जग्ग-जाग, यह उस समय के समाज का नित्य का आचार-विचार था । इसलिए लक्ष्मीबाई-चरित में कवि ने जितने राजाओं या पेशवाओं का उल्लेख किया है उन्होंने अपने राज्य-प्रबन्ध में ताल-तालाब-घाट, कुआ, बावरी बनवाकर नित्य स्नान की व्यवस्था की थी । और सारी प्रजा पूजा-पाठ कर सके इसलिए किले के भीतर तथा बाहर और नगर कोट के बाहर-भीतर चारों दिशाओं में नगर के बीच बड़े-बड़े भव्य मन्दिर बनवाए थे । इस सबका उद्देश्य प्रजा को नित्य नियम पालन की सुविधा देना था ।

<u>शिष्टाचार, स्वागत, अभिवादन सम्बन्धी शब्दावली-</u>

लक्ष्मीबाई-चरित में शिष्टाचार, स्वागत-सत्कार तथा अभिवादन सम्बन्धी बिन्ती करें-30, होत मुबारकैं जात दिनैं-दिन-30, बेटी इन खाँ कर जोरो-करो प्रनाम, हाँस जोर कैं मनू चरन खाँ छिओ, उठी मन में उलकान-32, दीक्षत पौंचे आसिस देन किलैं-दरबार, राजा ने सत्कार करो, दच्छना गहा पच्चीस, "रहै राज सुहान-सुस्तक।", तांतिआ कही उच्चार असीस, बिन्ती करो बधावैं रचवा कैं-35, देकैं दान-दच्छना करकैं भरन, कलाबन्त, कबराज उँगैले इतके, दै-दै कैं सन्मान-48, हिलमिलचाईं बुन्देल-दखिनी, जगो दोईंअस में हुलास, गरैं मिले की जगी उजास-48, सीधे बोल, गरवा कैं बोल बोल, करै लिहाज न पदवी को-51, बिन्ती करै दिवावे शासन के अखत्यार-55, कविअन खाँ दवें काज-सहारो-58

पैलाँ तो धरो मूँड चरनन में 60, खूब दच्छना गहा ताँतिऊ लडुआ खवा करो सम्मान-61, दरसन के लाने किले-मिहल में अरज करारैं-61, पौंचे, दे असीस राजा बाँक-62, मोरोपन्त बिन्त दुहराईं, लगे पाउनन की अगवानी में-63, चरन बन्दना करबे कांवें पौंची मनू पेसुआ पास, लगा कण्ठ से मनु, पेसुआ नें नैनन अँसुआ बरसायें, भरे गले से दईं असीस"सुख से चिर जिओ सुहाग सवाय ।" मोरोपन्त मूँड़ धर पाँवन करी पेसुआ खाँ परनाम, बिन्ती करी, असीस दैंन झाँसी चलबो होवे सुखधाम-65, हाँसी चले, मनू ने कोरन अँसुआ भर कैं जोरे हाथ, रईअत सन, फिर मिहलन कोदैं, फिर बिठूर की धरन मनात, माँथो नमा गंगा की धारा सन, बिरछन खाँ करो प्रनाम, बा पुरवा खाँ उठकैं भोर मनू ने दरसन करे, करो जमना-जल पान-66, मानदान के पाँव पखारे-66, चौक-पटा बैठारे, टीका करो, हरा पैरावें, सुपारी-गोटीं नजर भेंटकर, अँसुआ भर के जोरे हात-68, सबने टीका करो, दईं बधाइ-

षष्ठम् अध्याय

उपसंहार

झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई-चरित के कवि पं0 हरिकेश मिश्र का बुन्देली पर अप्रतिम अधिकार था । यह पीछे किये गये अनुशीलन से स्पष्ट हो चुका है । उनका जीवन अत्यन्त सरल और संघर्षों से भरपूर था । उन्होंने प्रेस में काम किया । सम्पादक बने । वैद्यनाथ प्राणदा के अधिष्ठाता पं0 रामनारायण शास्त्री से जुड़े रहे । राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, उपन्यास सम्राट बाबू वृन्दावन लाल वर्मा, वियोगी हरि, पं0 बनारसी दास चतुर्वेदी, प्रसिद्ध समीक्षक प्रभुदयाल मीतल और विख्यात व्याकरणविद् पं0 किशोरीदास वाजपेयी से उनकी विशेष घनिष्ठता रही । केशव के वंशज होने का उन्हें गर्व था । उन्हें सरस्वती ने सहज कवित्व शक्ति दी थी । बुन्देली से उन्हें विशेष प्रेम था । उसी से प्रेरित होकर उन्होंने ठेठ बुन्देली में "लक्ष्मीबाई-चरित" काव्य की रचना की । इसमें उन्होंने झाँसी के आसपास प्रचलित बुन्देली के ठेठ रूप का प्रयोग किया है । खड़ी बोली का युग होते हुए भी उन्होंने लोक भाषा बुन्देली में रचना की । इस सम्बन्ध में उनका कहना था कि हमने अब तक लोक-मानस से लिया ही लिया है दिया कुछ नहीं, कुछ भी नहीं । उन्होंने कवि-मनीषियों से प्रश्न करते हुए पूछा कि क्या यह दायित्व उनका नहीं था । यह दायित्व उन्होंने स्वयं लिया और झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई-चरित के रूप में लोक रागिनी, लोकभाषा को ऐसा कुछ दिया है जो लोक कण्ठ में रच-बस कर पुराने गीतों का स्थान ले सकेगा । इसी क्रम में उन्होंने बुन्देलिन और हरदौल बुंदेला की रचना की ।

"लक्ष्मीबाई-चरित" की प्रेरणा के उन्होंने चार बिन्दु बताये हैं :

- लक्ष्मीबाई के ओजस्वी जीवन का गायन,
- आल्हा गायन - परम्परा का उद्धार
- बुंदेली का शब्द -सामर्थ्य का उद्घाटन
- बुंदेली -अंचल के सांस्कृतिक परिवेश का चित्रांकन

पीछे लक्ष्मीबाईचरित की शब्दावली का जो विवेचन किया गया उससे यह निष्कर्ष निकला कि कवि द्वारा प्रयुक्त अधिकतर शब्दावली संस्कृत या अन्य किसी स्रोत पर

आधारित नहीं है । संस्कृत तत्सम शब्दावली की तुलना में देशज शब्दावली का प्रयोग अधिक किया है । लक्ष्मीबाई-चरित के पूरी क्रिया-पद-संरचना ठेठ क्रियाओं पर आधारित है । संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रियाएँ, क्रिया विशेषण, अव्ययों के प्रयोग ठेठ बुन्देली रूपों के हैं । जिन शब्दों का स्रोत संस्कृत, अपभ्रंश, अवहट्ठ, प्राकृत अथवा पाली से होता हुआ बुन्देली तक पहुँचा है उनका प्रयोग बुन्देली उच्चारण पद्धति और प्रकृति के अनुकूल हुआ है ।

लक्ष्मीबाई-चरित की भाषा का शास्त्रीय प्रयोगों, कवि प्रसिद्धियों अथवा रीतिकाल दरबारी काव्यों की किसी भी परिपाटी या रंग से सर्वथा रहित या विशुद्ध है । ध्वनिग्रामों , संध्वनियों अथवा व्यंजन-ध्वनियों की द्विरुक्तियों से यह साफ स्पष्ट है कि इनकी निरंतर आवृत्ति करते हुए भी कवि ने अपनी भाषा को शब्द-चमत्कार से सर्वथा दूर रखा है । ऐसा वह ठेठ शब्दों के प्रयोग और अपनी कुशलता के बल पर कर सका है । वे जन-जीवन से जुड़े हुए साहित्यकार थे इसलिए गली-कूँचों में चलने वाले भाषा के प्रवाह की उनमें अच्छी पकड़ थी ।

प्रथम अध्याय में लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त शब्दावली का ऐतिहासिक स्रोत की दृष्टि से संकलन किया गया है । इसमें संस्कृत तत्सम, तद्भव और देशज शब्दावली, ठेठ क्रियाओं का संकलन कर यह परीक्षण किया गया है कि संस्कृत शब्दावली की तुलना में कवि ने तद्भव और देशज शब्दों की संख्या अधिक है । प्रत्येक शब्द के आगे दी गई अंक संख्या से लक्ष्मीबाई-चरित की पृष्ठ संख्या को द्योतित करते हुए उसकी सत्यता की पुष्टि की गई है । इस अध्याय में अरबी-फारसी तथा अंग्रेजी से आगत शब्दावली का भी संकलन किया गया है । संकलित शब्दावली से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि लक्ष्मीबाई-चरित में वही तत्सम शब्द प्रयुक्त हुए हैं जिनका आना कथ्य की माँग के अनुसार अथवा छन्द के कारण अनिवार्य था । शब्दावली का मूल आधार संस्कृत होते हुए भी उसमें लगाये गये प्रत्यय या उपसर्ग बुन्देली के अपने हैं । उनमें हुए विकार भी बुन्देली क्षेत्र में प्रचलित उच्चारण पद्धति के कारण हैं । बुन्देली का रंग पूरी आगत शब्दावली पर पड़ा हुआ है।

व्याकरण का अर्थ होता है अच्छी तरह किया गया विश्लेषण । इसमें शब्द का भली प्रकार विश्लेषण किया जाता है । ध्वनि की सार्थक इकाई शब्द कहलाता है जो अपनी सार्थकता एक वाक्य में प्रयुक्त होकर ही प्रकट करती है ।

शब्दों का वर्गीकरण इतिहास, रचना, अर्थ और प्रयोगिक परिवर्तनशीलता के आधार पर किया जाता है । बुन्देली के मूल स्वर 10 तथा 28 व्यंजन हैं । डॉ0 भोलानाथ तिवारी इनकी संख्या 37 मानते हैं । बुन्देली के अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ तथा इनके ह्रस्व या लुप्त स्वरों का प्रयोग शब्द के आदि, मध्य तथा अन्त में उपलब्ध होता है । बुन्देली में अ तथा आ के क्रमश अ, अ , आ, आँ, इ, ई के क्रमशः इ, ईं, ई, ईँ , उ तथा ऊ के उ, उँ, ऊ, ऊँ, एस तथा ऐ के ए, ऍ, ऐ, ओ तथा औ के ओ तथा औ रूपों का प्रयोग लक्ष्मीबाई-चरित में उपलब्ध हुआ है ।

इन सभी स्वर ध्वनियों के संयोग लक्ष्मीबाई-चरित में उपलब्ध हुए हैं । केवल ई-इ, ई-ओ, ऊ-ऊ, ऐ-ओ, के स्वर संयोगों का प्रयोग कवि ने नहीं किया है । कवि ने सजातीय स्वरों तक के संयोगों का प्रयोग किया है । स्वरों का संयोग व्यंजनों के साथ तथा व्यंजन विहीनता की स्थिति में भी प्रयुक्त हुआ है । स्वर संयोग अनुनासिक तथा अननुनासिक दोनों स्थितियों में उपलब्ध होता है ।

हकार लोप की प्रवृत्ति लक्ष्मीबाई-चरित में अधिक मिलती है जो बुन्देली की अपनी विशेषता है । लक्ष्मीबाई-चरित में हकार लोप की कई दिशाएँ हैं । लक्ष्मीबाई-चरित में प्रारम्भ में हकार सुरक्षित रहता है किन्तु शब्द के मध्य तथा अन्त्य में वह या तो स्वर में बदल जाता है या लुप्त हो जाता है ।

इकार की स्थिति यह है कि या तो यकार इकार में रूपान्तरित हुआ है, कहीं {इ} का आगम हो गया है और कहीं ईकार ऊकार में बदल गया है । ऊकार की स्थिति भी विवेच्य ग्रन्थ में यही है । वकार अधिकांश स्थानों पर ऊकार में बदल जाता है ।

कुछ शब्दों में अकार के आगम की प्रवृत्ति लक्षित होती है ।

<u>व्यंजन</u>- लक्ष्मीबाई-चरित में सभी व्यंजन शब्दों के आदि, मध्य तथा अन्त में मिलते हैं । पंचम वर्णों में ङ, ञ तथा ण और न का प्रयोग एक-दो स्थानों पर किया गया है । लक्ष्मीबाई-चरित में ङकार और ञकार से अन्त होने वाला कोई शब्द उपलब्ध नहीं हुआ है । लक्ष्मीबाई-चरित में चतुर्थ वर्ण के तृतीय वर्ण में रूपान्तरित हो जाने की प्रवृत्ति मिलती है । द्वितीय वर्ण भी कहीं-कहीं प्रथम वर्ण में बदल गया है । जैसे - सुख-सुक में । लक्ष्मीबाई-चरित में "थ" सर्वत्र "त" में बदल गया है । यहाँ ष, र, ल ड़, ळ सभी "र" में और य "रे" में बदल जाता है । बुन्देली में श तथा ष का प्रयोग नहीं होता है । यहाँ भी इसकी अनुपस्थिति है ।

किया है । कवि ने प्रेरणार्थक धातुओं का भी खूब प्रयोग किया है । मिश्रित अथवा प्रत्यय युक्त धातुओं में कवि ने "के", "आव", "आय", "इ" अथवा "आइ", अनु, आन, ए, बे, रे, ओ प्रत्यय लगाकर क्रियापदों का निर्माण किया है । लक्ष्मीबाई-चरित में संयुक्त धातुओं की संख्या भी बहुत है । इनका निर्माण कवि ने कृदु प्रत्ययों के आधार किया है । कवि ने अनुकरणवाची धातुओं का प्रयोग भी बहुलता के साथ किया है । लक्ष्मीबाई-चरित में एकाक्षरी, द्वयाक्षरी तथा स्वरान्त धातुएँ भी मिलती हैं ।

पीछे विविध व्यंजनों से प्रारम्भ होने वाली क्रियाओं का उल्लेख किया गया । लक्ष्मीबाई-चरित में विभिन्न व्यंजनों से अन्त होने वाली भी धातुएँ मिलती हैं ।

सहायक क्रियाएँ-

लक्ष्मीबाई-चरित में सहायक क्रियाओं के वर्तमान काल के रूपों में हूँ का प्रयोग एक भी बार नहीं हुआ है । हैं, हो, है का प्रयोग अवश्य मिलता है । था, थे, थी बुन्देली में ता, ते, ती में बदल जाता है । यही रूप लक्ष्मीबाई-चरित में प्रयुक्त हुए हैं । लक्ष्मीबाई-चरित में भविष्य निश्चयार्थ में प्रयुक्त होने वाले क्रिया पद, गा, गे, गी का प्रयोग कहीं नहीं हुआ है । इनके स्थान पर "बे", बो हैं आदि का प्रयोग किया गया है ।

कवि ने कृदन्तों का प्रयोग जमकर किया है । उसकी कृदन्त पदों के निर्माण की शक्ति अपार है । उसने वर्तमान कालिक, भूतकालिक, कर्तृवाचक, अपूर्ण किया द्योतक , पूर्वकालिक, क्रियार्थक संज्ञा वाची कृदन्तों का प्रयोग किया है । काल-रचना की दृष्टि से लक्ष्मीबाई-चरित में सामान्य वर्तमान, भूत तथा भविष्य, पूर्ण वर्तमान, पूर्ण कालिक वर्तमान, पूर्ण भूत, हेतु मान भविष्य, सम्भाव्य भविष्य, वर्तमान आज्ञार्थ आदि मिलते हैं । वाक्य-रचना की दृष्टि से कवि ने सरल, प्रश्नवाचक, निषेध वाचक, विधि, आज्ञा, प्रेरणा, प्रार्थना सूचक, मिश्रित, तीनों वाच्यों में रूप मिलते हैं ।

क्रिया विशेषण-

इनमें स्थिति वाचक, दिशा वाचक, स्थान वाचक, काल वाचक, परिमाण वाचक, रीति वाचक, सम्बन्ध तथा सादृश्य बोधक, निषेधात्मक ,विस्मयादि बोधक

सन्दर्भात्मक टिप्पणियाँ

विषय-प्रवेश

1. मराठा राज्य सम्बन्धी अभिलेख, संपादक-डा० रघुवीर सिंह, प्रकाशक श्री नट नागर शोध संस्थान, सीतामऊ (उज्जैन)
2. सेलेक्शन्स फ्रोम दी पेशवा दफ्तर, संपादक-डा० रघुवीर सिंह, द डिपार्टमेंट ऑफ आरकाइव्ज, महाराष्ट्र सरकार
3. मालवा के महान विद्रोह कालीन अभिलेख, सं० डा० रघुवीर सिंह, प्रकाशक- श्री नटनागर शोध संस्थान, 1986, सीतामऊ (मालवा)
4. 18 वीं शती के हिन्दी पत्र-डा० काशिनाथ शंकर केलकर, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा ।
5. ऐतिहासिक प्रमाणावली और छत्रसाल- डा० महेन्द्र प्रताप सिंह, पटल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1975
6. झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई चरित- पं० दारिकेश मिश्र, पृष्ठभूमि, पृ० 11
7. वही पृष्ठ 8-11
8. 20. 7. 89 को एक साहित्यिक बन्धु को लिखे गये पत्र से ।
9. 9-8-89 को एक साहित्यिक बन्धु को लिखे गये पत्र से
10. झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई चरित, पृष्ठभूमि, पृष्ठ 6
11. प्रसिद्ध साहित्यकार श्री जगदीश जगेश को लिखे एक पत्र का अंश
12. लक्ष्मीबाई चरित, पृष्ठभूमि, पृष्ठ 8
13. वही, पृष्ठ 8
14. एक साहित्यकार मित्र को 4-10-89 को लिखा गया पत्र
15. "बुंदेलिन" काव्य का एक अंश ।
16. एक साहित्यकार को लिखे गये पत्र से ।
17. एक साहित्यकार बन्धु को लिखे पत्र से ।
18. भारत का भाषा सर्वेक्षण, भाग 9, पृष्ठ 88, 89, अनु० डा० निर्मला सक्सेना
19. बुन्देली और उसके क्षेत्रीय रूप, डा० कृष्णलाल "हंस", अपनी बात पृष्ठ 9
20. हिन्दी भाषा, डा० भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ 167
21. भारत का भाषा सर्वेक्षण, खण्ड 9, पृष्ठ 85

9. डा० भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान कोश, पृष्ठ 636

10. डा० तिवारी द्वारा अपने कोश के पृष्ठ 637 पर उद्धृत ।

11. वही पृष्ठ 639

12. झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई-चरित्र, पृष्ठ 203

13. वही

14. वही पृष्ठ 219

15. वही पृष्ठ 178

16. वही पृष्ठ 183

17. वही 181

18. वही 176

19. वही 86

20. वही 74

21. वही 131

22. वही 131

23. वही 67

24. वही 67

25. वही 182

26. वही 182

27. वही 178

28. वही 176

29. वही 172

30. वही 166

31. वही 167

32. वही 163

33. वही 143

34. वही 248

35. वही 201

36. वही 83

37. वही 83

38. वही 83

38. वही 146

39. वही 153

40. वही 158

41. वही 237

42. वही 241

43. वही 246

चतुर्थ अध्याय

=========

1. डा० विद्या भूषण विभु, अभिधान अनुशीलन, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद

2. बुन्देली भाषा-क्षेत्र के स्थान अभिधानों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन, डा० कामिनी, आराधना ब्रदर्स, कानपुर ।

0000000
00000
000
0

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. कबीर की भाषा : डॉ० महेन्द्र, शब्दकार, दिल्ली ।
2. हिन्दी व्याकरण : पं० कामता प्रसाद गुरु, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।
3. हिन्दी शब्दानुशासन: किशोरी दास वाजपेयी, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।
4. परिष्कृत हिन्दी व्याकरण : डॉ० बदरीनाथ कपूर, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ ।
5. हिन्दी शब्द रचना : भाई दयाल जैन, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली ।
6. आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना- डॉ० वासुदेव नंदन, भारती भवन, पटना ।
7. हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग- नामवर सिंह, साहित्य भवनलि०, इलाहाबाद
8. हिन्दी भाषा : डॉ० भोलानाथ तिवारी, किताब महल, इलाहाबाद ।
9. हिन्दी पर्यायों का भाषागत अध्ययन- डॉ० बदरीनाथ कपूर, सम्मेलन, प्रयाग ।
10. हिन्दी की शब्द सम्पदा : डॉ० विद्या निवास मिश्र, राजकमल प्रकाश, दिल्ली ।
11. हिन्दी : उद्भव, विकास और रूप : डॉ० हरदेव बाहरी, किताब महल, इलाहाबाद।
12. आचार्य किशोरीदास वाजपेयी : व्यक्तित्व और कृतित्व, कलकत्ता ।
13. आचार्य किशोरीदास वाजपेयी और हिन्दी शब्द शास्त्र :आ०विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, डॉ०विष्णुदत्त राकेश, कनखल, हरद्वार ।
14. हिन्दी व्याकरण- कैलाश, सम्मेलन, प्रयाग ।
15. अभिधान अनुशीलन- डॉ० विद्या भूषण विभु, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद ।
16. रामचरित मानस भाषा :रहस्य- डॉ० अम्बा प्रसाद"सुमन", परिषद, पटना ।
17. भाषा विज्ञान की भारतीय परम्पराएँ और पाणिनी- डॉ० रामदेव त्रिपाठी, परिषद, पटना ।
18. बुलन्द शहर एवं खुरजा तहसीलों की बोलियों का संकालिक अध्ययन- डॉ०महावीर सरन जैन, सम्मेलन, प्रयाग ।
19. व्यावहारिक हिन्दी"के" तथा व : डॉ० पूरन चन्द्र टंडन, कादम्बरी, दिल्ली ।
20. भाषा विज्ञान पर भाषण[2] मैक्समूलर : अनु० डॉ० हेमचन्द्र जोशी, हिन्दी समिति, लखनऊ ।
21. कृषक जीवन सम्बन्धी ब्रज भाषा शब्दावली-भाग-1,2 :डॉ० अम्बा प्रसाद सुमन, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद ।
22. केशव ग्रंथावली भाग-1,2,3, : सं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, हिन्दुस्तानी, इलाहाबाद
23. भोजपुरी भाषा और साहित्य : डॉ० उदयनारायण तिवारी, परिषद, पटना .